अभिलाष करूं, उस स्थानमेंही मेरी अभिलाषा सिद्ध होवे। अनन्तर ईश्वरने उस तेजको संहार करके उतङ्कसे कहा, कि "तुम्हें जब जिस विषयमें अभिलाष होवे, उस समय मुझे स्मरण करना"—ऐसा कहके कृष्ण द्वारकामें गये अनन्तर किसी समय भगवान् उतङ्कने मरुभूमिमें घूमते हुए जलकी अभिलाष करके अच्युत कृष्णको स्मरण किया। अनन्तर धीमान् उतङ्कने मरुभूमिमें दिगम्बर मलिन स्वयूथ परिवेष्टित बद्ध बाण और धनुषधारी एक भीषण मातङ्ग चाण्डालको देखा और उसके पांवके नीचे बहुत सा निर्म्मल जलका स्रोत अवलोकन किया। मातङ्गने उनका मत जानके हंसकर कहा। हे भृगुईह उतङ्क! तुम मेरे समीप आके जल ग्रहण करो, तुम्हें तृष्णातुर देखके मुझे अत्यन्त दया हुई है। उस मुनिवर उतङ्कने मातङ्ग चाण्डालका ऐसा वचन सुनके अभिनन्दन न किया; वरन उस चाण्डालको उग्र वचनसे निन्दा करने लगे, मातङ्ग भी बार बार उतङ्कको जल पीनेके लिये कहने लगा। उतङ्कने अन्तरात्मा क्षुधित होनेपर भी क्रोधित होकर उस जलको न पीया; जब उतङ्कने निश्चय करते हुए उसे प्रत्याख्यान किया; तब वह वहांपर कुत्तोंके सहित अन्तर्द्धान हुआ। उसे समय उतङ्कने उसे अन्तर्हित होते देखकर लज्जितचित्त होकर अपनेको कृष्णके द्वारा प्रलोभित समझा। अनन्तर शङ्ख, चक्र, गदाधारी कृष्ण उस ही मार्गसे उतङ्कके निकट उपस्थित हुए और महाबुद्धिमान् उतङ्क उनसे कहने लगे।

उतङ्क बोले, हे पुरुषसत्तम! आपको उस प्रकार चाण्डाल रूप धरके ब्राह्मणको जल प्रदान करनेके लिये आना उचित नहीं हुआ। उतङ्कका ऐसा वचन सुनके महाबुद्धिमान् जनार्द्दन कृष्ण मधुर वचनसे उन्हें सान्त्वना करते हुए कहने लगे।

कृष्ण बोले, इस स्थानमें जिस प्रकार दान करना उचित है, उसही प्रकार दिया जाता था, तुम उसे समझ न सके। मैंने तुम्हारे निमित्त बज्रपाणि पुरन्दर इन्द्रसे कहा था, कि उतङ्कको तोयरूपी अमृत दान करो। हे भृगुनन्दन! देवेन्द्रने ऐसा वचन सुनके मुझसे कहा, कि मर्त्यको अमर्त्यता न प्राप्त होगी, इसलिये उन्हें अन्य वर प्रदान करो। परन्तु मैंने उनसे कहा, कि उतङ्कको अमृत वर ही देना होगा, तब वह मुझे प्रसन्न करके फिर बोले, हे महामति! यदि उतङ्कको यही वर देना योग्य है, तो मैं मातङ्ग होकर उस महात्मा भृगुनन्दनको अमृत दान करूंगा। हे विभु! आज यदि भृगुनन्दन उतङ्क इस ही प्रकार अमृत प्रतिग्रह करें, तो मैं उन्हें अमृत देनेके लिये जाता हूं, परन्तु यदि मैं उनसे प्रत्याख्यात होऊंगा, तो मैं कदापि उन्हें अमृत दान न करूंगा। वह इन्द्र मेरे निकट ऐसा ही अङ्गीकार करके तुम्हें अमृत देनेके लिये चाण्डालरूपी होकर तुम्हारे निकट उपस्थित हुए थे। तुम जान न सके, इसीसे उन्हें प्रत्याख्यान किया है। उस चाण्डालरूपी भगवान् इन्द्रके तुम्हारे द्वारा प्रत्याख्यान होनेसे तुम्हारी महान् व्यतिक्रम हुआ है; परन्तु मैं शक्तिके अनुसार फिर तुम्हारे अभिलषित विषयको सिद्ध करूंगा। हे ब्रह्मन्! जिस दिन तुम्हें जलकी इच्छा होगी उस ही दिन मैं तुम्हारी उस दुरन्त जललालसा सफल करूंगा। हे भृगुनन्दन! उस दिन मरुभूमिमें बादल जलसे पूरित होकर तुम्हें सुस्वादु जल प्रदान करेंगे और उतङ्क मेघ नामसे विख्यात होंगे। हे भारत! उस विप्रने कृष्णका ऐसा वचन सुनके अत्यन्त प्रीति लाभ की। इस ही लिये आजतक उतङ्क मेघ उस महाशुष्क मरुभूमिमें वर्षा किया करते हैं।

५५ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, महामना उतङ्कने ऐसी कौनसी तपस्या की थी कि जगत्प्रभु विष्णुको शाप देनेके लिये उद्यत हुए ?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय ! उतङ्क महातप निष्ठ थे, वह केवल तेजस्वी गुरुकी पूजा करते थे और किसीकोभी अर्चना नहीं करते थे । हे भारत ! ऋषिपुत्रगण उतङ्कको गुरुभक्ति देखकर ऐसा समझते थे, कि हमें भी उतङ्कको गुरुछृत प्राप्त होगी । हे जनमेजय ! गौतमके जितने शिष्य थे, उनके बीच उतङ्कके विषयमें उनको अधिक प्रीति तथा स्नेह उत्पन्न हुआ, गौतम उतङ्कके दम, पवित्रता विक्रम और समधिक सेवासे परम प्रसन्न हुए थे, एकसमय गौतमऋषिने किसी कार्य्य उपलक्षमें शिष्योंको घर जानेके लिये आज्ञा दी ; परन्तु परम प्रीतिके वशमें होकर उतङ्कको आज्ञा देनेकी इच्छा नहीं की । हे तात ! क्रमसे उस उतङ्क मुनिको जरा प्राप्त हुई ; परन्तु उस समय वह गुरुवत्सल उतङ्क उसे न जान सके । हे राजेन्द्र ! अनन्तर वह किसी समय काष्ठ लानेके लिये गये और बहुतसा काष्ठ उठाकर लाने लगे । उन्होंने काष्ठभारसे अभिभूत, परिश्रान्त और भूखे होनेसे काष्ठका बोझा पृथ्वीपर फेंका ; उस समय उनकी रौप्य-सदृश प्रभाशालिनी जटा काष्ठमें फंस गई थी, इससे वह काष्ठके सहित गिर पड़े । हे भारत ! जब क्षुधाविष्ट उतङ्क काष्ठभारसे निष्पिष्ट होके पृथ्वीपर गिरे, उस समय कमलनयनी गुरुपुत्री उनकी वैसी अवस्था देखकर आर्त्तस्वरसे रोदन करने लगी ; पृथुलोचना सुश्रोणी धर्म्म जाननेवाली गुरुपुत्रीने पिताकी आज्ञानुसार सिर नीचा करके अश्रुजल ग्रहण किया । वह अश्रुजल उसके दोनों हाथोंको जलाते हुए पृथ्वीपर गिरा, पृथ्वी भी उस अश्रुधाराको धारण न कर सकी ।

उस समय गौतमने प्रसन्नचित्तसे उतङ्क विप्रसे कहा, हे तात ! आज तुम्हारा मन शोकातुर क्यों हुआ है । हे विप्रर्षि ! तुम धीरे धीरे मेरे समीप यथार्थ रीतिसे कहो, मैं इस विषयको सुननेकी इच्छा करता हूं ।

उतङ्क बोले, मेरा मन आपमें लगा रहनेसे विप्र चिकीर्षा वशसे तथा मैं आपकी भक्ति वा भावके अनुगत होनेसे जरा और सुख न जान सका । मैं जो इस स्थानमें एक सौ वर्षसे वास करता हूं तौभी आपने मुझे अनुमति न देकर जो मुझसे अपकृष्ट थे, वैसे सैकड़ों सहस्रों शिष्योंको अनुज्ञा की ; उससे वे लोग कृतकार्य्य हुए ।

गौतम बोले, हे द्विजर्षभ ! तुम्हारे गुरुसेवासे तुमपर अधिक प्रसन्न रहनेसे मैं यह न जान सका, कि अधिक समय किस प्रकार व्यतीत हुआ है । हे भार्गव ! यदि आज तुम्हें गृहपर जानेकी अभिलाष हो, तो मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं, तुम शीघ्र निज गृहपर जाओ ।

उतङ्क बोले, हे द्विजसत्तम ! कहिये मैं आपको क्या दक्षिणा दूं ? हे विभु ! आप जो कहें, मैं वही ले आऊं ।

गौतम बोले, हे ब्रह्मन् ! ऐसा पण्डित लोग कहा करते हैं, कि गुरुजनोंका परितोष ही दक्षिणा है ; इसलिये मैं तुम्हारे सदाचारसे ही परितुष्ट हुआ हूं । हे भृगुद्वह ! तुम मुझे परितुष्ट जानो । हे ब्रह्मन् ! यदि आज तुम षोड़ष वर्षीय युवा होते, तो मैं अपनी कन्या तुम्हें पत्नीरूपसे दान करता, इस कन्याके अतिरिक्त दूसरा कोई भी तुम्हारे तेजको धारण करनेमें समर्थ न होगा । अनन्तर उतङ्क मुनि युवा होकर गुरुकी आज्ञानुसार उस यशस्विनी कन्याको ग्रहण करके गुरुपत्नीसे बोले, तुम्हें क्या गुरुदक्षिणा दूं ? उसके लिये मुझे आज्ञा करो, मैं प्राण और धनसे तुम्हारे प्रिय तथा हितको आकांक्षा करता हूं । इस लोकमें जो रत्न दुर्लभ हैं, मैं तपोबलसे निःसन्देह उन अद्भुत महारत्नोंको लाऊंगा ।

अहल्या बोली, हे विप्र! मैं तुम्हारी इस भक्तिसे ही परितुष्ट हुई हूं, यह भक्ति ही यथेष्ट हुई है। हे तात! इस समय तुम्हारा मङ्गल हो, तुम इच्छानुसार गमन करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उतङ्कने अहल्यासे कहा, हे माता! कहो, मुझे कौनसा प्रियकार्य्य करना होगा?

अहल्या बोलीं, सौदास राजाकी भार्य्या जो दिव्य मणिमय कुण्डल पहरती है, तुम वही कुण्डल ले आओ; ऐसा करनेसे तुम्हारा मङ्गल होगा और गुरुदक्षिणा सिद्ध होगी। हे जनमेजय! उतङ्क मुनि "वही करूंगा," ऐसी प्रतिज्ञा करके गुरुपत्नीके प्रीतिके निमित्त कुण्डल लानेके लिये चले। अनन्तर ब्राह्मणश्रेष्ठ उतङ्क शीघ्र ही पुरुषाद सौदासके निकट गये। गौतमने निज पत्नी अहल्यासे पूछा, कि आज उतङ्कको नहीं देखता हूं, उतङ्क कहां है? अहल्याने गौतमका वचन सुनके कहा, कि उतङ्क कुण्डल लानेके निमित्त गये हैं।

तिसके अनन्तर गौतमने पत्नीसे कहा, कि तुमने यह अच्छा कार्य्य नहीं किया; क्यों कि वह सौदास उतङ्कके द्वारा अभिशप्त होनेसे निश्चय ही उनका बध करेगा।

अहल्या बोली, हे भगवन्! मैंने बिना जाने उस ब्राह्मणको भेजा है, परन्तु आपके प्रसादसे उतङ्कको कुछ भी भय उपस्थित न होगा। गौतम अहल्याका ऐसा वचन सुनके उससे बोले, तुमने जो कहा, वही होवे, इधर उतङ्कने भी निर्जन बनके बीच राजाको देखा।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उतङ्क मुनि दीर्घश्मश्रुधारी मनुष्य शोणितसे समुक्षित घोरदर्शन राजा सौदासको देखकर व्यथित न हुए; परन्तु महा तेजस्वी शमन सदृश भयप्रद राजा सौदासने उतङ्कसे कहा। हे द्विजसत्तम! मैं भक्ष्य खोज रहा हूं, तुम प्रारब्धसे ही दिनके छठवें भागमें मेरे निकट आके उपस्थित हुए हो।

उतङ्क बोले, हे राजन्! मैं गुरुके निमित्त धन मांगनेके लिये इस स्थानमें आया हूं, मुझे गुरुके लिये अर्थप्रार्थी जानो; मनीषिवृन्द गुरुके निमित्त उद्युक्त मनुष्यको अवध्य कहा करते हैं।

राजा बोला, हे द्विजसत्तम! इस दिनके छठवें भागमें तुम मेरे अहाररूपसे विहित हुए हो, मैं अत्यन्त ही भूखा हूं, इसलिये आज तुम्हें परित्याग नहीं कर सकता।

उतङ्क बोले, हे महाराज! आप जो अभिलाष करते हैं, वही होगा, परन्तु आप मेरी प्रतिज्ञा सफल करिये, मैं गुरुका कार्य्य पूरा करके फिर तुम्हारे अधिकारमें आऊंगा। हे राजसत्तम! मैंने जो धन गुरुको दान करनेके निमित्त प्रतिज्ञा की है, वह धन तुम्हारे अधीन है; इसलिये उसे तुम्हारे निकट भिक्षा मांगता हूं। हे नरेश्वर! इस पृथ्वीके बीच आप दाता और मैं प्रतिग्रहीता हूं; हे नृपसत्तम! मुझे प्रतिग्रहका पात्र ही जानो। हे अरिदमन! आपके निकटसे वह अर्थ गुरुके निमित्त ले जाकर मैं प्रतिज्ञाके अनुसार फिर आपके वशमें होऊंगा। हे राजन्! मैं जो प्रतिज्ञा करता हूं, वह कभी मिथ्या न होगी, क्यों कि मैंने इच्छापूर्व्वक पहले कभी मिथ्या वचन नहीं कहा है; इसलिये किसी प्रकार इसमें अन्यथा न होगी।

सौदास बोले, मैं तुम्हें प्रतिग्रह करा सकूंगा, यदि तुम ऐसा स्वीकार करो, तो तुम उस गुरुदक्षिणाके धनको मेरे निकट प्राप्त हुआ ही निश्चय करो।

उतङ्क बोले, हे पुरुषर्षभ! आप मुझे प्रतिग्राह्य कहके अभिमत हुए हैं, इस ही निमित्त मैं आपके निकट मणिकुण्डल मांगनेके लिये आया हूं।

सौदास बोले, हे विप्र! वह मणिकुण्डल मेरी स्त्रीका है, मुझे उसे दान करनेका अधिकार नहीं है; इसलिये और जो कुछ धन मांगोगे, मैं उसे ही दान करूंगा।

उतङ्क बोले, हे पार्थिव! यदि मुझपर आपका विश्वास हुआ हो, तो आप अब व्यर्थ छल न करके मुझे कुण्डल प्रदान करके सत्यवादी होइये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा उतङ्कका ऐसा वचन सुनके फिर उनसे बोला। हे सत्तम! मेरे वचनके अनुसार मेरी पत्नीके निकट जाकर कहो, कि आप मुझे कुण्डल प्रदान करिये। हे द्विजवर! मेरे वचनके अनुसार वह मेरी शुचिव्रता भार्य्या तुम्हारा ऐसा वचन सुनके निश्चय ही तुम्हें कुण्डल प्रदान करेगी।

उतङ्क बोले, हे नरेश्वर! मैं आपकी पत्नीको कहां देखूंगा? आप स्वयं भार्य्याके निकट किस लिये नहीं जाते हैं?

सौदास बोले, आज वनमें किसी झरनेके समीप उसे देखोगे। मैं आज दिनके छठवें भागमें उसे न देख सकूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उतङ्क राजाका ऐसा वचन सुनके वहांसे जाकर वनके बीच सौदासकी भार्य्या मदयन्तीको देखा, और उसे सौदासके वचनके अनुसार अपना प्रयोजन सुनाया।

सौदासकी भार्य्या बोली, हे अनघ! आपने जो कहा, वह सत्य है, परन्तु इस विषयमें किञ्चित अभिज्ञान लाना उचित है। देवता, यक्ष और महर्षिगण अनेक प्रकारके उपायके सहारे मेरे इस दिव्य मणिमय कुण्डलको हरनेकी अभिलाषासे सदा छिद्र अन्वेषण करते हैं। यह रत्न पृथ्वीपर गिरनेसे सर्पगण उच्छिष्ठ अवस्थामें धारण करनेसे और यक्षगण निद्रावस्थामें धारण करनेसे देववृन्द हरण किया करते हैं। हे द्विजसत्तम! इन सब छिद्रोंके उपस्थित होनेपर भी मेरा यह कुण्डल देवता, राक्षस और सर्पोंके द्वारा अपहृत होता है; इसलिये अप्रमत्त होके इसे धारण करना चाहिये। हे द्विजवर! मेरे इस दिव्य कुण्डलसे रात्रिके समय सुवर्ण झरता है और रात्रिसमयमें यह नक्षत्रों तथा तारोंकी प्रभा आकर्षित करके निवास करता है। हे भगवन्! इस कुण्डलको धारण करनेसे मनुष्य भूखप्याससे पीड़ित नहीं होता। इतना ही नहीं; वरन विष, अग्नि तथा अन्यान्य भयजनक जन्तुओंसे उसे कदाचित भय नहीं होता। थोड़ी अवस्थावाला पुरुष इसे धारण करे, तो उसकी प्रकृत अवस्था ही रहती है। मेरे इस परम पूजित मणिमय कुण्डलका गुण तीनों लोकोंके बीच विख्यात है, इसलिये आप उसका अभिज्ञान ले आइये।

५७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उतङ्क मुनिने मित्रतापूर्व्वक सौदासके निकट जाकर अभिज्ञानके निमित्त प्रार्थना की, तब उस इक्ष्वाकुप्रवर सौदासने उन्हें यह वाक्यरूपी अभिज्ञान प्रदान किया।

सौदास बोले, हमारे लिये यह राक्षसयोनिरूपी गति मङ्गलकारी नहीं है, तथा इस कुण्डलदानकी अपेक्षा मुक्तिरूपी गति और कुछ भी नहीं है; इसलिये तुम मेरा ऐसा मत जानके इन्हें मणिमय कुण्डल प्रदान करो।

उतङ्कने सौदासका ऐसा वचन सुनके सौदासपत्नीको उसके स्वामीका वचन सुनाया; उसने स्वामीका वचन सुनके उतङ्कको वह मणिमय कुण्डल प्रदान किया। उतङ्क वह मणिमय कुण्डल पाके फिर राजासे बोले, हे महाराज! इस गुप्त वाक्यका क्या अर्थ है? मैं उसे सुननेकी इच्छा करता हूं।

सौदास बोले, ब्राह्मणगण प्रजा उत्पन्न करते हैं, इसीसे क्षत्रिय पुरुष उनकी पूजा किया

करते हैं, तोभी ब्राह्मणोंके निकट क्षत्रियादिके बहुतसे दोष प्रकट होते हैं। मैं अपनी भार्य्या मदयन्तीके सहित ब्राह्मणोंके निकट दोषयुक्त होकर उनके समीप सदा प्रणत हुआ करता हूं; इसके अतिरिक्त और गति मुझे कुछ भी नहीं दिखाई देती है। हे गतिप्रवर! ब्राह्मणोंके निकट प्रणत् रहनेके अतिरिक्त इसलोकमें सुखभोग तथा स्वर्गद्वारमें गमन करनेका दूसरा उपाय नहीं दिखाई देता है। राजा चाहे कितनाही ऐश्वर्य्यशाली क्यों न हो, द्विजातियोंके सङ्ग विरोध करनेसे वह इसलोकमें निवास तथा परलोकमें सुख भोग करनेमें समर्थ नहीं होता; इस ही कारण मैंने तुम्हारे अभिलषित अपना मणिमय कुण्डल तुम्हें प्रदान किया है; परन्तु आज आपने मेरे समीप जो अङ्गीकार किया है, उसे सफल करना।

उतङ्क बोले, हे महाराज! मैं फिर आपके निकट आके अपने अङ्गीकार किये हुए वचनको सफल करूंगा। हे परन्तप! परन्तु मैं आपसे कुछ प्रश्न पूछके यहांसे निवृत्त होता हूं।

सौदास बोले, हे विप्र! आपकी जो इच्छा हो, मुझसे वही विषय पूंछिये, मैं आपके प्रश्नका उत्तर दूंगा और बिना विचारे आज आपका सब सन्देह खण्डन करूंगा।

उतङ्क बोले, धर्म्म जाननेवाले पण्डितगण संयतवाक्यवाले मनुष्यको मित्र कहा करते हैं और जो पुरुष मित्रोंके बीच विषम चित्तवाला होता है, उसे तस्कर समझते हैं। हे पार्थिव! आज आप मेरे मित्र हुए, इसलिये आप मुझे निज धर्म्मबुद्धि प्रदान करिये। आज मैंने आपके निकट धन पाया है, आप पुरुषादक हैं; इसलिये मुझे बतलाइये, कि फिर आपके समीप मुझे आना योग्य है, वा नहीं?

सौदास बोले, हे द्विजवर! इस स्थलमें जो कहना योग्य है, वह मैं आपसे कहता हूं; आप मेरे निकट कदापि न आना। हे भृगुकुलोद्वह! मेरे निकट न आना ही तुम्हारे लिये कल्याणकारी है, यदि आप आवेंगे, तो निश्चय ही आपकी मृत्यु होगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब बुद्धिमान राजा सौदासने उतङ्कसे ऐसा वचन तथा कर्त्तव्य विषय कहा, तब उन्होंने पृथ्वीपति सौदासको राज्यपालन करनेकी आज्ञा देकर अहल्याके निकट जानेके लिये प्रस्थान किया। उतङ्क दिव्य मणिमय कुण्डल लेकर महावेगपूर्व्वक गौतमके आश्रममें जाकर अहल्याके प्रीति पात्र हुए। मदयन्तीने कुण्डलरक्षाका जिस प्रकार उपाय कहा था, उतङ्क उसही भांति उसे कृष्णाजिनमें बांध रखा था। कुण्डल लेकर चलनेके समयमें उतङ्क क्षुधाविष्ट होकर फलके भारसे युक्त एक बेलका वृक्ष देखकर उसपर चढ़े।

हे अरिदमन! द्विजवर उतङ्क कुण्डलके सहित कृष्णाजिन बेलवृक्षकी शाखामें बांधके बेलका फल तोड़ने लगे। हे विभु! जब उतङ्क बेलका फल तोड़ने लगे, उस समय उनका नेत्र बेलकी चोटसे पीड़ित होनेसे जिस शाखामें कुण्डलके सहित कृष्णाजिन बांधा था, उस ही मृगचाल युक्त शाखापर बेलके फल गिरे, अनन्तर बेलके प्रहारसे कृष्णाजिनका बन्धन छूट जानेसे कुण्डलके सहित वह काले हिरणका चर्म्म सहसा पृथ्वीपर गिरा, जब बन्धन छूटनेसे वह कृष्णाजिन भूमिपर गिरा, तब वहां किसी सर्पने उस मणिमय कुण्डलको देखा; अनन्तर ऐरावत वंशमें उत्पन्न हुआ वह सर्प शीघ्रताके सहित मुखमें कुण्डल धारण करके कुण्डल समेत बिलमें घुस गया। उतङ्क सर्पके द्वारा कुण्डल अपहृत होते देखकर अत्यन्त दुःखित तथा कोपित होकर उद्वेग पूर्व्वक वृक्षसे गिर पड़े। अनन्तर वह ब्राह्मणसत्तम उतङ्क क्रोध तथा अमर्षपूर्व्वक अत्यन्त सन्तापित होकर दतून लेकर पैंतीस दिन उस बिलको खोदते रहे। दतूनके प्रहारसे विक्लिन्नकलेवरयुक्त वसुन्धरा

नागलोकमें जानेके निमित्त मार्ग बनानेकी अभिलाषी धरणीतल बिदारी उतङ्कके असह्य वेगको न सह सकनेसे अत्यन्त आकुल भई। अनन्तर महातेजस्वी वज्रपाणि इन्द्रने घोड़ोंसे युक्त रथ पर चढ़के उस स्थानमें आके उतङ्कको देखा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इन्द्र ब्राह्मणका वेष धारण करके उतङ्कके दुःखसे दुःखी होकर उनसे बोले, कि यह तुम्हारे लिये साध्य नहीं है, नागलोक यहांसे एक हजार योजन है, इसलिये मुझे बोध होता है, कि आप इसे दतूनसे न खोद सकेंगे।

उतङ्क बोले, हे ब्रह्मन्! यदि मैं नागलोकसे कुण्डल पानेमें असमर्थ होऊं, तो आपके सम्मुखमें ही प्राण परित्याग करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब उतङ्क नागलोकका निश्चय करनेमें असमर्थ हुए तब इन्द्रने निज वज्रके सहित उस दतूनकोयुक्त कर दिया अनन्तर इन्द्रके वज्रके प्रहारसे बसुन्धरा विदीर्ण करके नागलोकका पथ किया। उन्होंने उस ही मार्गसे नागलोकमें प्रवेश करके सहस्र योजन व्यापी नागलोक अवलोकन किया। हे महाभाग! वह नागलोक दिव्य मणि तथा मोतियोंसे अलंकृत, सुवर्णमय दीवारोंसे घिरा हुआ था, उसके बीच सब वापी स्फटिकके द्वारा बनी थीं, सोपानके सहित नदियोंको बिमल जलयुक्त तथा वृक्षोंको अनेक भांतिके पक्षियोंके द्वारा परिपूरित देखा। भृगुनन्दन उतङ्क पांच योजन चौड़ा एक सौ योजन लम्बा नागलोकका द्वार देखकर वहां दीनभावयुक्त होकर कुण्डल पानेसे निराश हुए। उस द्वारके स्थानमें तांबेके समान मुख लालनेत्र सफेदवर्णकी पूंछयुक्त निज तेजसे प्रज्वलित एक काले रङ्गका घोड़ा उतङ्कसे बोला। हे विप्र! यह अपान भूमि मेरी है, इस स्थानमें जलपान करनेसे तुम कुण्डल पाओगे। ऐरावत नागका पुत्र तुम्हारा कुण्डल इस ही स्थानमें ले आया है। हे पुत्र! तुम इस पान विषयमें कदापि निन्दा न करना; क्योंकि तुम पहले गौतमके आश्रममें ऐसा आचरण करते थे।

उतङ्क बोले, मैं आपको नहीं जान सकता हूं, मैंने पहले उपाध्यायके आश्रममें जैसा आचरण करता था, उसे सुननेकी इच्छा करता हूं।

अश्व बोला, हे विप्र! मैं तुम्हारे गुरु गौतमका गुरु हूं, तुम मुझे ज्वलन्त जातवेदा (अग्नि) जानो; तुम गुरुके प्रयोजनके निमित्त शुद्धभावसे सदा मेरी पूजा करते थे, इस ही निमित्त मैं तुम्हारे कल्याणका उपाय करूंगा। मैंने जैसा कहा, तुम शीघ्र वैसा ही करो विलम्ब मत करो। उतङ्कने चित्रभानुका ऐसा बचन सुनके वैसा ही किया। अनन्तर घृतार्चि (अग्निदेव) उतङ्क प्रसन्न होकर नागलोक जलानेकी इच्छासे प्रज्वलित हुए। तब वहांपर उनके रोमकूपसे नागलोकको भयभीत करनेवाला निविड़ धूआं प्रकट हुआ। हे भारत! उस धूआंके अत्यन्त बर्द्धित होनेपर नागलोकमें कुछ भी न दीख पड़ा; अनन्तर ऐरावतनागके गृहमें बासुकी प्रभृति नागोंका हाहाकार शब्द होने लगा। हे भारत! उस समय नीहारावृत बन तथा पर्व्वतकी भांति धूएंसे परिपूरित होकर सब गृह अप्रकाशित हुए; धूएंसे नेत्र लाल तथा अग्निके तेजसे तापित होकर सब नागोंने महात्मा भृगुनन्दन उतङ्कका निश्चय जाननेके लिये आगमन किया। उन सबने महर्षिका निश्चय सुनके भयजनित चञ्चलतायुक्त नेत्रसे उनकी पूजा की; नागगण हाथ जोड़के बालकों तथा बूढ़ोंको आगे करके सिरसे प्रणाम करके बोले, हे भगवन्! आप हम लोगोंपर प्रसन्न होइये। नागोंने ब्राह्मणकी प्रसन्न करते हुए पाद्य अर्घ देकर परम पूजित दिव्य मणिमय कुण्डल उन्हें प्रदान किया। अनन्तर प्रतापवान उतङ्कने नागोंके द्वारा वहांपर पूजित होकर अग्निकी प्रदक्षिण करके

गुरुके गृहपर गमन किया। हे महाराज! उन्होंने शीघ्र ही गुरु गौतमके गृहपर जाकर गुरुपत्नी अहल्याको वह दिव्य कुण्डल प्रदान किया और वासुकि प्रभृति नागोंका वृत्तान्त गुरुके निकट पूरी रीतिसे वर्णन किया। हे जनमेजय! वह महात्मा उतङ्क इस ही प्रकार त्रिलोक परिभ्रमण करके उस दिव्य मणिमय कुण्डलको ले आये थे। हे भरतर्षभ! तुमने जिसका विषय मुझसे पूंछा था, उस परम तपस्वी मुनिवर उतङ्कका ऐसा ही प्रभाव मालूम करो।

५८ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, हे द्विजसत्तम! महायशस्वी महाबाहु गोविन्दने उतङ्कको वर देकर उसके अनन्तर क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, गोविन्दने उतङ्कको वर देकर सात्यकिके सहित शीघ्रगामी घोड़ोंसे युक्त रथपर चढ़के तालाव, नदी और पर्व्वतोंको अतिक्रम करते हुए द्वारकामें गमन किया। हे महाराज! उस समय रैवतक पर्व्वतका उत्सव उपस्थित होनेपर पुण्डरीकाक्ष गोविन्द युयुधानके सहित वहां जा पहुंचे। हे भरतपुत्र! वह गिरवर रैवतक अनेक विचित्र वर्णोंसे अलंकृत, रत्नमय कोषसे पूरित, उत्तम सुवरणमय माला मनोहर पुष्प, वस्त्र, कल्पवृक्ष तथा सुवर्णमय दीपवृक्षसे सुशोभित होनेसे उसकी गुफा तथा निर्झर स्थान दिनकी भांति प्रकाशित होने लगे। चारों ओर घण्टायुक्त विचित्र पताका और स्त्री पुरुषोंके समूहसे परिपूरित होकर मानो उत्तम गीत होने लगी; मणियोंके द्वारा विभूषित होनेसे सुमेरुकी भांति दर्शनीय हुआ। प्रमत्त तथा हर्षित स्त्रियें और गीत गानेवाले पुरुषोंके गगनस्पर्शी शब्दके द्वारा ऐसा मालूम होने लगा, कि मानो वह पर्व्वतेन्द्र ही गान कर रहा है। प्रमत्त, मत्त और सम्मत्त प्राणियोंके क्ष्वेड़ित तथा उत्कृष्ट शब्दोंसे वह स्थान परिपूरित होगया; उस समय वह पर्व्वत किलकिला शब्दके द्वारा मनोहर तथा विपण, आपण, भक्ष्यभोज्य और विहारकी वस्तुओंसे युक्त होनेसे अत्यन्त मनोरम हुआ, वहांपर ढेरके ढेर वस्त्र, माला, वीणा, वेणु, मृदङ्ग, मैरेय सुरा और अनेक प्रकारकी भक्ष्य भोज्य उपस्थित रहने अथवा दीन, अन्ध और कृपण पुरुषोंको लगातार दान करनेसे उस रैवतक महागिरिका महोत्सव अत्यन्त आनन्दजनक हुआ था। रैवतकके उत्सवमें पुरुषोंने वृष्णिवंशीय वीरोंके पवित्र गृहयुक्त विहारस्थानमें निवास किया था। हे भरतश्रेष्ठ! उस समय गृहसमूहसे परिव्याप्त होकर वह गिरिवर कृष्णकी सान्निध्य पाके इन्द्रालय तथा देवलोककी भांति प्रकाशित हुआ था।

अनन्तर गोविन्द सात्यकिके सहित सम्मानित होकर बहुत समय तक प्रवासमें रहनेसे प्रहृष्टचित्तसे निज भवनमें गये। दानवोंके दलको दमन करके इन्द्रके अमरावती नगरीमें आनेपर देववृन्द जिस प्रकार उनके निकट गमन करते हैं, उस ही प्रकार वृष्णिकुलनन्दन कृष्णने जब कुरुकुलध्वंशरूपी दुष्कर कर्म्म करके द्वारकापुरीमें प्रवेश किया, तब भोज, वृष्णि तथा अन्धकवंशीय पुरुष उनके निकट उपस्थित हुए। मेधावी कृष्णने उन लोगोंको सम्मानना करते हुए कुशलादि पूंछकर प्रसन्नचित्तसे पिता तथा माताको प्रणाम किया। महाभुज कृष्ण पितामाताके द्वारा आलिङ्गित तथा सान्त्वित होकर समीपमें बैठे हुए उन वृष्णिवंशियोंके द्वारा परिवेष्टित हुए। जब महातेजस्वी कृष्ण पांव धोकर विश्रान्त भावसे बैठे, तब पिताके द्वारा युद्धका वृत्तान्त पूछनेपर उनसे उस युद्धका सारा वृत्तान्त कहने लगे।

५९ अध्याय समाप्त।

वसुदेव बोले, हे वृष्णिकुलनन्दन कृष्ण! उस कुरुक्षेत्रमें नित्य कथा प्रसङ्गसे परस्पर विवाद करनेवाले मनुष्योंका जो परम अद्भुत संग्राम हुआ था, उसे मैंने सुना है; परन्तु तुमने प्रत्यक्ष देखा तथा तुम्हें उसका रूप मालूम है। हे अनघ! इसलिये उस संग्रामका यथार्थ रीतिसे मेरे समीप वर्णन करो। भीष्म, द्रोण, कृप और शल्य, इनके सङ्ग महात्मा पाण्डवोंका तथा अनेक वेश वा रूपविशिष्ट अनेक देशवासी अन्यान्य कृतास्त्र क्षत्रियोंका जिस प्रकार युद्ध हुआ था, उसे भी कहो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुण्डरीकाक्ष कृष्ण माताके समीप पिताका ऐसा वचन सुनके युद्धमें जिस प्रकार कौरवोंकी मृत्यु हुई थी, उसे कहने लगे।

श्रीकृष्ण बोले, महात्मा क्षत्रियोंका वह सब अत्यन्त अद्भुतकर्म्म एक सौ वर्षमें भी नहीं कहा जा सकता; तब संक्षेपमें मुख्य मुख्य राजाओंके कार्य्यका यथावत् वर्णन करता हूं, सुनिये। कुरुवंशावतंस कौरवोंके सेनापति भीष्म सुरसेनापति इन्द्रकी भांति कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी सेनाके अधिपति हुए थे। पाण्डवपक्षके नेता धीमान् शिखण्डी सात अक्षौहिणीके अधिपति हुए, श्रीमान् शव्यसाची अर्ज्जुन उनकी रक्षा करते थे। उन महात्मा कुरु-पाण्डवोंमें दशदिन तक रोमहर्षजनक युद्ध होता रहा, अनन्तर शिखण्डीने गाण्डीवधारी अर्ज्जुनके सहित महासंग्राममें युध्यमान गङ्गानन्दन भीष्मको अनेक बाणोंसे मारा। उस मनस्वी भीष्मने दक्षिणायन भर शरशय्यापर रहके उत्तरायण उपस्थित होनेपर प्राण परित्याग किया। अनन्तर दैत्यगुरु भार्गवकी भांति कुरुकुलके गुरु महास्त्रवित् द्रोण कौरवोंके सेनापति हुए। वह युद्धमें प्रशंसित द्विजसत्तम द्रोण अवशिष्ट नव अक्षौहिणी सेनासे घिरकर युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुए, कृप तथा सुख्य क्षत्रियगण उनकी रक्षामें नियुक्त हुए थे। मेधावी महास्त्रवित् धृष्टद्युम्न पाण्डवोंके सेनापति हुए, मित्रोंके द्वारा रक्षित वरुणकी भांति वह भीमसे रक्षित हुए थे। उस महामना धृष्टद्युम्नने पिताका परिभव स्मरण करते हुए द्रोणको मारनेकी इच्छा करके सेनासमूहसे घिरकर युद्धमें अत्यन्त दुष्कर कर्म्म किया था। कई दिशाओंसे आये हुए राजा लोग उस द्रोण और धृष्टद्युम्नके युद्धमें प्रायः सभी मृत्युको प्राप्त हुए। पांच दिनतक वह दारुण संग्राम हुआ, उसके अनन्तर द्रोणाचार्य्य विश्रान्त होकर धृष्टद्युम्नके वशवर्त्ती हुए। तब कर्ण दुर्य्योधनके सेनाके बीच अवशिष्ट पांच अक्षौहिणी सेनासे घिरकर युद्धमें सेनापतिके कार्य्यपर नियुक्त हुए। पाण्डवोंकी ओर बहुतसे वीरोंके मरनेपर अवशिष्ट तीन अक्षौहिणी सेना अर्ज्जुनके द्वारा रक्षित होकर युद्धमें स्थित हुई। अनन्तर दूसरे दिन सूतनन्दन अत्यन्त प्रचण्ड कर्णने अग्निमें पड़े हुए पतङ्गकी भांति पृथापुत्र अर्ज्जुनको प्राप्त होकर पञ्चत्व लाभ किया। कर्णके मरनेपर कौरवोंने तेजरहित तथा निरुत्साह होकर मद्रराज शल्यको तीन अक्षौहिणी सेनाका अधिपति किया; पाण्डवोंने भी वाहन आदि नष्ट होनेपर निरुत्साही होकर शल्यके सङ्ग युद्ध करनेके लिये युधिष्ठिरको एक अक्षौहिणी सेनाका सेनापति किया। कुरुराज युधिष्ठिरने आधे दिनतक मद्रराज शल्यके सहित अत्यन्त दुष्कर संग्राम करके उन्हें संहार किया। शल्यके मरनेपर महामना अमितविक्रम सहदेवने उस कलहके मूल शकुनिको मार डाला। शकुनि और सब सेनाके नष्ट होनेपर धृतराष्ट्रपुत्र राजा सुयोधनने अत्यन्त दुःखित होकर गदा लेके भागकर द्वैपायन ह्रदमें निवास किया, इधर प्रतापवान् भीमसेनने क्रुद्ध होकर उनका अनुसन्धान करते हुए उन्हें द्वैपायन ह्रदके बीच अवलोकन किया। अनन्तर पांचो पाण्डव प्रसन्नचित्तसे मारनेसे

बची हुई सेनाके सहित तालाबमें स्थित सुयोधनको घेरकर वहां बैठकर उनकी निन्दा करने लगे। जलके बीच सुयोधन वाक्यबाणसे अत्यन्त पीड़ित होकर हाथमें गदा लेकर जलसे निकलकर युद्ध करनेके लिये उपस्थित हुए; तब भीमसेनने युद्धमें राजाओंके सम्मुख विक्रम प्रकाश करके धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनको मारा। अनन्तर द्रोणपुत्र अश्वत्थामाने पिताके बधसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर रात्रिके समय शिविरमें सोई हुई पाण्डवोंकी समस्त सेनाका संहार किया। उस समय मेरे तथा सात्यकिके अतिरिक्त पुत्र, बल तथा मित्रोंके सहित केवल पांच पाण्डव शेष रहे; अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य तथा कृतवर्म्माके सहित युद्धसे निवृत्त हुए और कुरुवंशीय युधिष्ठिर पाण्डवोंके निकट रहनेसे बच गये। कौरवेन्द्र सुयोधन जब बान्धवोंके सहित मारे गये, तब विदुर और सञ्जय धर्म्मराजके निकट उपस्थित हुए। हे प्रभु! इस ही प्रकार वह युद्ध अठारह दिन हुआ था, उसमें जो सब राजा मारे गये, वे स्वर्गलोकमें गये हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! वृष्णिवंशीय पुरुष यह लोमहर्षण कथा सुनके दुःख तथा शोकसे अत्यन्त शोकित हुए।

६० अध्याय समाप्त।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, महाबुद्धिमान् प्रतापवान् कृष्ण उस भारत-युद्धका वृत्तान्त वर्णन करते हुए अभिमन्युका वृत्तान्त बसुदेवको अप्रिय होगा, ऐसा समझके उसे अतिक्रम करके कहने लगे। बसुदेव दौहित्रबधका वृत्तान्त सुननेसे दुःख तथा शोकसे अत्यन्त सन्तापित होंगे; ऐसा विचारके उसे न कहा; परन्तु सुभद्रा कृष्णसे बोली, "हे कृष्ण! तुमने जो मेरे पुत्र अभिमन्युका बध वृत्तान्त गोपन किया है, उसे कहो," इतना कहके पृथ्वीपर गिर पड़ी। उस समय सुभद्राको पृथ्वीमें गिरती देखकर बसुदेव भी दुःखसे मूर्च्छित होकर भूमिमें गिरे। अनन्तर बसुदेव दौहित्र बधजनित शोकसे पीड़ित होकर कृष्णसे बोले। हे पुण्डरीकाक्ष! तुम जो सत्यवादी कहके पृथ्वीमें विख्यात् हुए हो, उसमें मुझे विश्वास नहीं होता; क्योंकि आज तुमने मेरे समीप दौहित्रबध बृत्तान्त प्रकाश न किया। हे कृष्ण! तुम अपने भानजेका बध-वृत्तान्त मुझसे यथार्थ रीतिसे कहो। हे वाष्णेय! तुम्हारे नेत्र सदृश नयन सम्पन्न सुभद्रापुत्र अभिमन्यु अकालमें मनुष्योंके सहित दुर्म्मरणकी भांति युद्धमें शत्रुओंके द्वारा क्यों मारा गया? हे कृष्ण। इतने पर भी दुःखसे मेरा हृदय सौ टुकड़े होकर बिदीर्ण न हुआ? जब वह अभिमन्यु युद्धमें मारा गया, उस समय उसने अपनी माता सुभद्राको और मुझे क्या कहा था? हे पुण्डरीकाक्ष! वह चञ्चलनेत्रवाला सुभद्रापुत्र अभिमन्यु मेरा परम प्रियपात्र था, क्या युद्धमें पराङ्मुख होनेपर शत्रुओंने उसे मारा है? हे गोविन्द! शत्रुओंने युद्धमें उसका मुख विकृत तो नहीं किया? हे कृष्ण! वह महातेजस्वी मेरे निकट तो प्रशंसित हुआ था? वह बालभावसे सबके निकट अपनी विनय कहता था। हे केशव! वह बालक द्रोण, कर्ण, कृप प्रभृति तथा क्षत्रियोंके द्वारा तो नहीं मारा गया? वह शत्रुके द्वारा मरकर जिस प्रकार पृथ्वीपर सोया था, वह मुझसे कहो। वह दुहित्का पुत्र अभिमन्यु युद्धमें द्रोण, भीष्म और अत्यन्त बलशाली कर्णकी स्पर्द्धा करता था।

जिस समय बसुदेव दुःखके सहित इस प्रकार अनेक भांति विलाप करने लगे; तब गोविन्द अत्यन्त दुःखित होकर उनसे बोले, कि अभिमन्युने युद्ध भूमिमें वक्र विकृत नहीं किया, बल्कि युद्धसे पराङ्मुख न होकर दुस्तर संग्राम किया था। सैकड़ों सहस्रों राजाओंको मारकर द्रोणाचार्य्य और कर्णके द्वारा पीड़ित होकर

दुःशासनपुत्रके वशवर्त्ती हुआ था। हे प्रभु! यदि कौरवगण! अकेले अकेले अभिमन्युके सङ्ग युद्ध करते, तो कोई भी उसे पराजित न कर सकता; कौरवोंकी बात तो दूर रहे, वज्र पाणि इन्द्र भी युद्धमें अकेले उसका बध करनेमें समर्थ न होते। उस समय जब अर्ज्जुन संसप्तकोंके सङ्ग पृथक् होकर युद्ध करने लगे, तब द्रोण प्रभृति योद्धाओंने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसे घेर लिया। हे पिता! इतनेपर भी सुभद्रापुत्र युद्धमें अत्यन्त महत् तथा समधिक शत्रुओंका संहार करके अन्तमें दुःशासनपुत्रके वशवर्त्ती हुआ। हे महाप्राज्ञ। वह सुभद्रापुत्र निश्चय ही स्वर्गमें गया है, आप उसके लिये शोक न करिये, शोक परित्याग करिये; इस विषयमें आपके सदृश कृतबुद्धि पुरुषोंको व्यसनमें पड़के अवसन्न होना उचित नहीं है। जब कि महेन्द्र सदृश बलशाली कर्ण प्रभृति वीरगण जिसके सङ्ग युद्ध करके स्वर्गमें गये हैं, तब वह अभिमन्यु स्वर्गमें क्यों न जायगा? हे दुर्द्धर्ष! आप शोक परित्याग करिये, मन्युके वशमें न होइये, उस पराये देशको जीतनेवाले अभिमन्युको निश्चय ही शस्त्रपूत गति प्राप्त हुई है। उस वीर अभिमन्युके मरनेपर मेरी यह सुभद्रा बहिन दुःखसे आर्त्त होकर पृथाके निकट जाकर कुररिकी भांति अत्यन्त रोदन करती हुई दुःखित चित्तसे द्रौपदीसे पूछा, कि हे आर्य्ये! पुत्रगण कहां हैं? मैं उन्हें एक बार देखूंगी। सुभद्राका ऐसा वचन सुनकर कुरुस्त्रीगण दोनों भुजाओंसे, इसे धारण करके अत्यन्त आर्त्तकी भांति रोने लगीं। सुभद्रा कुरुस्त्रियोंके सहित उत्तरासे बोली, भद्रे! तुम्हारा स्वामी कहां गया है, तुम मुझसे बताओ, वह कब आवेगा? हे विराटनन्दिनी! जब मैं अभिमन्युको बुलाती थी, तब वह मेरी बात सुनते ही उसी समय तुम्हारे सहित गृहसे बाहिर होता था; आज तुम्हारा पति क्यों नहीं आता है? हे अभिमन्यु! तुम्हारे इस स्थानमें रहनेपर तुम्हें युद्धप्रिय जानके तुम्हारे मामा तुमसे युद्धका कुशलादि वृत्तान्त कहते थे। हे अरिदमन! आज तुम मुझसे पूरीरीतिसे संग्रामका वृत्तान्त कहो। इस समय मैं इस प्रकार विलाप करती हूं, तुम किस निमित्त प्रत्युत्तर नहीं देते हो?

पृथा वृष्णिवंशमें उत्पन्न हुई सुभद्राका ऐसा विलाप सुनकर अत्यन्त दुःखितचित्तसे धीरे धीरे उससे बोली, हे सुभद्रे! वह बालक अभिमन्यु युद्धमें श्रीकृष्ण, सात्यकि और निजपिता अर्ज्जुनके द्वारा लालित होनेपर भी कालधर्म्मके अनुसार मारा गया है। हे यदुनन्दिनि! मृत्युधर्म्म हो ऐसा है, इसलिये इस विषयमें शोक मत करो; तुम्हारे उस दुर्द्धर्ष पुत्रको निश्चयही परमगति प्राप्त हुई है। हे पद्म-पलाश, नयनी! तुम महात्मा क्षत्रियोंके बीच महतकुलमें जन्मी हो, हे चञ्चलनयनी! इसलिये तुम्हें शोक करना उचित नहीं है। हे शुभे! तुम गर्भिणी उत्तराको अवलोकन करो, यह भाविनी उत्तराके गर्भसे शीघ्रही उस अभिमन्युका पुत्र उत्पन्न होगा, हे यदुकुलोद्वह! कुन्तीने इसही प्रकार सुभद्राको धीरज देकर शोक परित्याग करके अभिमन्युका श्राद्धादि किया। धर्म्म जाननेवाली कुन्ती अभिमन्युके उद्देशसे दान करनेके निमित्त युधिष्ठिर, भीम, यमसदृश यमज नकुल सहदेवको आज्ञा करके बहुत सा धन दान दिया। अनन्तर वह ब्राह्मणोंको बहुतसी गऊप्रदान करके विराटपुत्री उत्तराको बुलाकर बोली। हे अनिन्दिते विराट नन्दिनि! इस समय तुम्हें पतिके लिये सन्ताप करना उचित नहीं है, तुम गर्भस्थ शिशुकी रक्षा करो। हे महातेजस्वी! कुन्ती उत्तराको ऐसाही कहके विरत हुई, इधर मैं सुभद्राको ले आया। हे दुर्द्धर्ष मानद! आपके दौहित्रकी इसी प्रकार मृत्यु हुई है, इसलिये आप शोक परित्याग करिये, तथा चित्तको शोकाकुल न करिये।

६१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय धर्म्मात्मा शूरनन्दन वसुदेवने पुत्रका इस प्रकार वचन सुनके शोक परित्याग करके अनुत्तम श्राद्ध तथा दानादि कार्य्य किया। वासुदेवने भी पिताके प्रियपौत्र स्वरूपत्र महात्मा अभिमन्युका अर्द्धदैहिककार्य्य किया। अनन्तर साठ सौ सहस्र महातेजस्वी ब्राह्मणोंको सर्व्वगुणयुक्त भोजद्रव्य विधिपूर्व्वक भोजन कराया। उस समय महाबाहु कृष्णने वस्त्र आदिसे ब्राह्मणोंको इस प्रकार धनतृष्णा दूर की थी, कि वह सबके विषयमें लोमहर्षणकारी हुई थी। उस समय सुवर्ण, गऊ शय्या और वस्त्र दान करनेसे ब्राह्मण लोग "बढ़तो हो,"—ऐसा ही वचन कहने लगे। अनन्तर सात्यकिके सहित दाशार्ह वासुदेव और सात्यक, ये लोग जिस प्रकार अभिमन्युका श्राद्ध करते हुए दुःखसे अत्यन्त सन्तापित होकर उस समय शान्तिलाभ न कर सके; उस ही भांति महावीर पाण्डवगण भी अभिमन्युके विरहसे हस्तिना नगरमें शान्ति-लाभ नहीं कर सके। हे राजेन्द्र! विराटपुत्री उत्तराने पतिके विरहजनित दुःखसे अत्यन्त आर्त्त होकर बहुत दिनतक भोजन नहीं किया, उस समय उसे महत् करुणा उपस्थित हुई और भोजनके अभावसे उसका कुक्षिस्थ गर्भ प्रलीन होगया। अनन्तर धीमान् महातेजस्वी व्यासदेव दिव्य दृष्टिके सहारे उसे जानके वहां आकर पृथुलोचना पृथा और उत्तरासे बोले, कि तुम लोग शोक मत करो, तुम्हारे महातेजस्वी पुत्र होगा। वह पुत्र वासुदेव तथा मेरे वचनके अनुसार पाण्डवोंके अनन्तर पृथ्वी पालन करेगा। हे भारत! व्यासदेव धर्म्मराजके सम्मुख अर्जुनको देखकर उन्हें हर्षित करते हुए बोले, हे अर्जुन! तुम्हारे महामना भाग्यवान् पौत्र उत्पन्न होगा, वह पौत्र धर्म्मपूर्व्वक समद्रके सहित पृथ्वीपालन करेगा। हे अरिकर्षण कुरुपुङ्गव! इसलिये तुम शोक परित्याग करो; मैंने जो कहा, इसमें तुम कुछ भी विचार मत करो, यह वचन सत्य होगा। हे कुरुनन्दन! पहले वृष्णिप्रवर कृष्णने जो कहा है, वही होगा, इसमें तुम सन्देह मत करो; उस वीर श्रेष्ठ अभिमन्युने निज अर्ज्जित अमरलोक पाया है, इसलिये वह तुम्हारे तथा दूसरे कुरुगणोंका शोचनीय नहीं है।' हे महाराज! धर्म्मात्मा धनञ्जय पितामह व्यासका ऐसा वचन सुनके शोक परित्याग कर हृष्टचित्त हुए। हे धर्म्मज्ञ! तुम्हारे पिता उस गर्भके बीच इच्छानुसार शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी भांति बढ़ने लगे। अनन्तर व्यासदेव धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरको अश्वमेध यज्ञ करनेके लिये आज्ञा देकर अन्तर्द्धान हुए। मेधावी धर्म्मराजने भी व्यासदेवका वचन सुनके धन लानेके निमित्त चलनेकी सम्मति की।

६२ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, हे ब्रह्मन्! युधिष्ठिरने महात्मा व्यासदेवका वचन सुनके फिर अश्वमेधका किस प्रकार अनुष्ठान किया? हे द्विजसत्तम! मरुत्तने जो रत्न पृथ्वीतलमें सञ्चय कर रखा था, उन रत्नोंका उन्होंने जिस प्रकार पाया, वह विषय मुझसे कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मराज युधिष्ठिर व्यासदेवका वचन सुनके अपने भाई अर्ज्जुन, भीम और माद्रीपुत्र यमज नकुल सहदेवको बुलाकर बोले, हे वीरगण! कुरुकुलहितैषी सुहृदोंके ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाले तपोवृद्ध धीमान् महात्मा कृष्णने सुहृदतापूर्व्वक जो कहा था और अद्भुतकर्म्मा धर्म्मशील गुरु व्यासदेव तथा भीष्म, इन्होंने भी जो कहा था, उसे तुम लोगोंने सुना है। हे पाण्डवगण! इस समय वह हमारे स्मृतिगोचर होनेसे हम सबके वर्त्तमान तथा भविष्यतके लिये हितजनक उस कार्य्यको करनेकी इच्छा करते हैं, क्योंकि ब्रह्मवादियोंके वाक्य फलोत्पत्तिके विषयमें

कल्याणकर हुआ करते हैं। हे कुरुवृद्धगण! इस वसुन्धराके वसुरहित होनेसे ही उस समयमें व्यासने मरुत्तके धनकी कथा कही थी। हे नृपगण! इसलिये यदि आप लोग इसे कर्त्तव्य तथा बहुमत समझते हो, तो उस धनको हम यहांपर ले आवें। हे भीम! कहो इस विषयमें तुम्हारा क्या मत है? हे कुरुकुलोद्वह! उस समय जब राजा युधिष्ठिरने ऐसा कहा तब भीमसेन हाथ जोड़के राजेन्द्र युधिष्ठिरसे कहने लगे।

भीमसेन बोले, हे महाबाहो! आपने व्यासदेवके उपदेश अनुसार धन लानेके विषयमें जिस प्रकार कहा, वह मुझे अभिमत है। हे प्रभु! यदि अविचित एव मरुत्तका वह धन मिल जाय, तो मुझे बोध होता है, कि उससे ही हम लोगोंके सब कार्य्य पूरे होंगे; इसलिये आपके कल्याणके निमित्त हम कपर्द्दी गिरीश महात्मा महादेवको प्रणाम कर उनकी विधिपूर्व्वक पूजा करके वह धन लावेंगे। हम लोग वचन, कर्म्म और ज्ञानसे उस देवाधिदेवपति विभु भूतनाथ तथा उनके सेवकोंको प्रसन्न करनेसे निश्चय ही वह धन पा सकेंगे। वृषभध्वजके प्रसन्न होनेपर जो सब रौद्र दर्शन किन्नर उस धनकी रक्षा करते हैं, वे भी वशीभूत होंगे।

हे भारत! जब भीमसेनने इतनी बात कही तब राजा युधिष्ठिर उसे सुनके अत्यन्त प्रसन्न हुए और अर्जुन प्रभृति भाइयोंने कहा, 'ऐसा ही होगा।'

अनन्तर पाण्डवोंने रत्न लानेका निश्चय करके उत्तम नक्षत्रयुक्त दिनमें सेनाको उस ओर चलनेके लिये आज्ञा दी। अनन्तर पाण्डुपुत्रोंने ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराके मोदक, पायस और पिष्टकके सहारे देवोंके देव महेश्वरकी पूजा करते हुए महात्मा युधिष्ठिरको आश्वासित करके अत्यन्त हर्षके सहित यात्रा किया। उनके चलनेके समय वहांपर नगरवासी लोग माङ्गलिक कार्य्य और ब्राह्मणगण शुभ आशिर्व्वाद करने लगे। अनन्तर उन लोगोंने अग्निके सहित ब्राह्मणोंको प्रदक्षिणा तथा सिर झुकाके प्रणाम करते हुए पुत्र शोकयुक्त भार्य्याके सहित राजा धृतराष्ट्र और पृथुलोचना पृथाकी अनुमति पाके वहांसे प्रस्थान किया। कुरुवंशीय धृतराष्ट्र पुत्र युयुत्सुको धृतराष्ट्र तथा कुन्तीके निकट सौंपकर पुरवासियों तथा मनीषि ब्राह्मणोंके द्वारा भली भांति सम्मानित हुए।

६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर प्रहृष्ट नरवाहन युक्त पाण्डवगण आनन्दित होकर बहुतसे रथशब्दके द्वारा पृथ्वीको परिपूरित करते हुए गमन करने लगे। उस समय सूत, मागध और बन्दिजन स्तुतिवाक्यसे उनका स्तव करने लगे, वे लोग मानो निज किरणसे युक्त सूर्य्यकी भांति अपनी सेनाके बीच घिरकर चले, उस समय सिरके ऊपर पाण्डुरवर्ण छाता लगानेसे राजा युधिष्ठिर पूर्णमासीमें उदय हुए चन्द्रमाकी भांति शोभित हुए। पुरुषश्रेष्ठ पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरने मार्गमें प्रहृष्ट पुरुषोंके जययुक्त आशिर्व्वादको विधि तथा नीतिके अनुसार प्रतिग्रह किया। हे राजन्! राजाके अनुगामी सैनिक पुरुषोंका हलहला शब्द गगनमण्डलको स्तब्ध करके स्थित हुआ। अनन्तर महाराज युधिष्ठिर तालाब, नदी, वन और उपवनोंको अतिक्रम करके पर्व्वतके समीप उपस्थित हुए। हे राजेन्द्र! जिस स्थानमें उस मरुत्त राजाका उत्तम धन रखा था, युधिष्ठिर पाण्डव तथा सैनिक लोगोंके सहित उसही स्थानमें पहुंचकर वासस्थान तय्यार कराने लगे। हे भरतसत्तम! राजा लोग तपस्या, विद्या और दमगुणयुक्त ब्राह्मणों तथा वेद वेदाङ्ग जाननेवाले अग्निवेश्य धौम्य पुरोहितको अगाड़ी करके उस समतल शुभकर स्थानमें पुरोहित और ब्राह्मणोंके

सहित शान्ति करके सेवकोंके सहित राजा युधिष्ठिरका मध्यवर्त्ती कर विधिपूर्व्वक उन्हें घेरके स्थित रहे। द्विजगणके लिये छः राजमार्ग और नव वासस्थान युक्त एक गृह बनाकर मतवारे हाथियोंके रहने योग्य एक हयशाला तय्यार कराया। अनन्तर राजेन्द्र युधिष्ठिर वासस्थान तय्यार कराके ब्राह्मणोंसे बोले, हे द्विजेन्द्रगण! उत्तम नक्षत्रयुक्त शुभ दिनमें यह कार्य्य सम्पन्न करना होगा; इसमें आप लोगोंकी जैसी अभिलाष हो, वैसाही करना चाहिये; परन्तु जिसमें हम लोगोंके समयमें विलम्ब न हो, वैसाही निश्चय करके उसके अनन्तर कर्त्तव्य कार्य्योंको सिद्ध करिये। धर्म्मराजके हितकी अभिलाष करनेवाले पुरोहितके सहित ब्राह्मण लोग राजाका ऐसा बचन सुनके प्रसन्न चित्तसे बोले। हे महाराज! आज उत्तम नक्षत्र तथा पुण्याह है, इसलिये आज ही हम लोग श्रेष्ठ कार्य्यके लिये एकत्र होंगे, हम लोग इस स्थानमें आज जलपीके निवास करें और आप भी उपवास करिये। राजाओंने ब्राह्मणोंका बचन सुनके प्रसन्नचित्तसे उपवास करते हुए रात्रिके समय यज्ञस्थलमें प्रज्वलित अग्निकी भांति कुशशय्यापर शयन किया। ब्राह्मणोंके धर्म्मयुक्त बचनको सुनते सुनते रात बीत गई; अनन्तर निर्म्मल प्रभातका समय उपस्थित होनेपर ब्राह्मण लोग धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरसे कहने लगे।

६४ अध्याय समाप्त।

ब्राह्मणगण बोले, हे नरनाथ! पहले आप महात्मा त्रयम्बककी पूजा करिये उसके अनन्तर हम लोग तुम्हारे अर्थसिद्धिके विषयमें यत्नवान होंगे। राजा युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंका बचन सुनके महादेवके लिये विधानपूर्व्वक पूजाकी सामग्री मंगाई। तब पुरोहितने संस्कारयुक्त घृतसे अग्निकी विधिपूर्व्वक पूजा करते हुए मन्त्रसिद्ध चरु तय्यार करके गमन किया। हे प्रजानाथ! उन्होंने मन्त्रपूरित पुष्प, मोदक पायस और मांस प्रभृति बलि मंगाकर महादेवकी पूजा की, अनेक प्रकारके फूल उच्चावचलाजकेसहित सब उत्तम वस्तुओंको संग्रह करके यक्षेन्द्र कुवेर और मणिभद्र प्रभृति किङ्करोंको बलि प्रदान किया। अनन्तर कृशर, मांस तिल युक्त निवाप और घड़े भर जलके द्वारा अन्यान्य यक्षों तथा भूतपतिकी पूजा की, उस समय राजा युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंको सहस्र गऊ देकर रात्रिचर भूतोंको बलिप्रदान करनेके लिये आज्ञादी।

हे पार्थिव! देवाधिदेव महादेवका स्थान धूप सुगन्धसे निरुद्ध तथा अनेक प्रकारके फूलोंसे परिपूरित होनेसे अत्यन्त शोभित हुआ। अनन्तर राजा युधिष्ठिर रुद्र और उनके गणकी पूजा करते हुए व्यासदेवको अगाड़ी करके यत्न तथा निधिके निकट गये। वहांपर वीर्य्यवान् युधिष्ठिरने विचित्र पुष्प, पिष्टक और कृशरके द्वारा धनाध्यक्ष कुवेर शङ्खादि निधि तथा निधिपालोंकी पूजा करते हुए दण्डवत् तथा प्रणाम करके ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराया। कुरुपति युधिष्ठिर ब्राह्मणोंके पुण्याह शब्द तथा तेजके सहित स्थित होके प्रसन्नचित्तसे उस धनको खुदवाने लगे।

अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिर उस खजानेसे करकाके सहित अनेक प्रकारके मनोरम पात्र, भृङ्गार, कटाह, कलश, सराव तथा सैकड़ों सहस्रों विचित्र पात्रोंको बाहिर निकाला। हे राजन्! वहां बहुतसे महत् करपुराकार पात्र थे; ये सब पुरुषके तुलाङ्ग परिमित पात्र उष्ट्रादिके ऊपर बद्ध थे; परन्तु वहांपर पाण्डवोंके भार ढोनेवाले वाहन साठ सौ हजार ऊंट, उससे दूने घोड़े, सौ हजार हाथी, शकट, रथ, करेणु, असंख्य गधे तथा मनुष्य विद्यमान थे। राजा युधिष्ठिर सोलह, आठ और चौबीस हजार भार उस वित्त खानिसे बाहिर करके फिर महादेवकी पूजा करके उन वस्तुओंको सब

वाहनोंके ऊपर सामर्थके अनुसार बांधकर हस्तिनापुरकी ओर चले। अनन्तर वेदव्यासकी आज्ञाके अनुसार पुरोहितको आगे करके प्रतिदिन दो कोसकी दूरीपर निवास करने लगे। हे राजन्! वह नगरकी ओर चलनेवाली बहुतसी सेना दक्षिणा भारसे थककर भी अत्यन्त कष्टसे बोझा ढोती हुई कौरवोंको हर्षित करने लगी।

६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इतनेही समयके बीच पुरुषश्रेष्ठ वीर्य्यवान् कृष्ण निजपुरी द्वारका नगरीकी ओर चलनेके समय धर्म्मराजने जो वचन कहा था, उस वाजिमेधके समयको स्मरण करके वृष्णिवंशीय रौक्मिणेय, युयुधान, चारुदेष्ण, शाम्ब, गद, कृतवर्म्मा, वीरवर सारण, निशठ और उल्मुख, इन सबके सहित सुभद्राको सङ्ग लेकर बलदेवको अगाड़ी करके हस्तिनापुरमें आके उपस्थित हुए। अनन्तर कृष्ण वृष्णिवंशियोंके सहित द्रौपदी, उत्तरा, पृथा तथा अन्यान्य स्वामीरहित क्षत्रिया स्त्रियोंको धीरज देते हुए आने लगे, तब राजा धृतराष्ट्र और महात्मा विदुरने उन वृष्णिवंशियोंको समागत देखकर सम्मानके सहित आह्वान किया, पुरुषश्रेष्ठ महातेजस्वी कृष्ण विदुर और युयुत्सुके द्वारा उत्तम रीतिसे सम्मानित होकर वृष्णिवंशियोंके सहित उस स्थानमें बैठे।

हे जनमेजय! अनन्तर वृष्णिवंशियोंके वहां बैठनेपर तुम्हारे पिता परवीरघाती परीक्षित उत्पन्न हुए। परन्तु सबके हर्ष और शोक निबन्धनसे वह राजा परीक्षित गर्भकेबीच ब्रह्मास्त्रके द्वारा पीड़ित होनेसे मृतकरूपसे भूमिष्ठ हुए। उस समय हर्षयुक्त पुरुषोंके सिंहनादके सहित तुमुल शब्द प्रकट होके सब दिशाओंमें प्रवेश करते हुए फिर उपरत हुआ। अनन्तर कृष्णने व्यथितेन्द्रिय तथा दुःखितचित्त होकर सात्यकिके सङ्ग अत्यन्त शीघ्रतापूर्व्वक अन्तःपुरमें प्रवेश किया। कृष्णने रनिवासमें प्रवेश करके देखा, कि निज पितृष्वसा पृथा ऊंचे स्वरसे रोदन करती तथा 'शीघ्र श्रीकृष्णके निकट चलो', ऐसा वचन कहती हुई शीघ्रतापूर्व्वक आरही है, उसके पीछे द्रौपदी, सुभद्रा तथा बान्धवोंकी अन्यान्य स्त्रियें भी करुणा स्वरसे रोती हुई चली आती हैं। हे राजशार्द्दूल! उस समय भोजराजपुत्री कुन्ती कृष्णको निकट पाके बिलखाकर गद्गद वचनसे बोली, हे महाबाहु कृष्ण! तुम्हारे ही द्वारा देवकी सुप्रजा हुई हैं, हे कृष्ण! तुम ही हमलोगोंकी एक मात्र गति तथा प्रतिष्ठा हो, यह कुरुकुल तुम्हारेही अधीन हुआ है। हे यदुप्रवीर! इसलिये जो तुम्हारा स्वस्रीयात्मज अश्वत्थामाके अस्त्रसे मरकर उत्पन्न हुआ है, तुम उसे जीवित करो। हे यदुनन्दन! ऐषिकास्त्र चलानेके समयमें तुमने ऐसी प्रतिज्ञा की थी, कि मृत पुत्र होनेपर भी मैं जीवित करूंगा। हे तात! देखो इस समय यह मरा हुआ पुत्र जन्मा है? हे यदुवीर! इसलिये तुम इस बालकको जिलाकर उत्तरा सुभद्रा, द्रौपदी धर्म्मपुत्र, भीम, अर्ज्जुन, नकुल दुर्द्धर्ष सहदेव और मेरी रक्षा करो। विशेष करके यह बालक पाण्डवोंका प्राण और पाण्डु तथा मेरे श्वशुरके पिण्डका अधिकारी हुआ है। हे जनार्द्दन! तुम्हारे प्रियपात्र मृत अभिमन्युका मङ्गल होवे, आज तुम इस बालकको जिलाकर उसका प्रिय कार्य्य करो। हे शत्रुसूदन! पहले अभिमन्युने प्रणयवशसे उत्तरासे जो कहा था, उसके उस वचनमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे दाशार्ह! उस समय अर्ज्जुनपुत्र अभिमन्युने बिराटपुत्री उत्तरासे कहा था, हे भद्रे! तुम्हारा पुत्र मेरे मातुलकुलमें जाकर उस वृष्णि तथा अन्धकवंशमें ही धनुर्व्वेद, विचित्र अस्त्र तथा नीतिशास्त्र ग्रहण करेगा। हे तात! परवीरघाती दुर्द्धर्ष सुभद्रापुत्रने जो प्रणय निबन्धनसे इस ही प्रकार कहा था, निश्चय ही वैसा हुआ। हे मधुसूदन!

हम लोग सिर नीचा करके तुम्हारे समीप प्रार्थना करती हैं, कि इस कुरुकुलके हितके विषयमें जिस प्रकार उत्तम कल्याण हो, तुम वैसा ही करो।

पृथुलोचना पृथा अन्यान्य कुरुस्त्रियोंके सहित वृष्णिवंशीय कृष्णसे ऐसा ही कहके अत्यन्तदुःखितचित्तसे दोनों भुजा उठाके पृथ्वीपर गिरी। इधर आखोंमें आंसू भरे हुए कौरवोंकी स्त्रियें कहने लगीं, कि श्रीकृष्णके भानजेका पुत्र मरा हुआ जन्मा है। हे भारत! सबके इसही प्रकार कहते रहनेपर जनार्द्दन पृथ्वीपर गिरी हुई कुन्तीको उठाकर धीरज देने लगे।

६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय कुन्तीके उठनेपर सुभद्रा अपने भाई कृष्णको देखकर दुःखसे अत्यन्त आर्त्त होकर रोती हुई यह वचन बोली। हे पुण्डरीकाक्ष! देखो कुरुकुलके परिक्षीण होनेसे ही यह बुद्धिमान अर्जुनका पौत्र परिक्षीण तथा गतायु होके उत्पन्न हुआ है। द्रोणपुत्र अश्वत्थामाने जो भीमसेनके बधके लिये ऐषिकास्त्र चलाया था, वह अस्त्र अर्जुन और मेरे विद्यमान रहते भी उत्तराको लगा था। हे केशव! इस समय उस पुत्र सहित अभिमन्युको न देखनेपर मेरा हृदय विदीर्ण होनेसे मुझमें ही विद्यमान रहा। धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन और माद्रीपुत्र नकुल-सहदेव ये लोग अभिमन्युके पुत्रको मरा उत्पन्न हुआ सुनके क्या कहेंगे? हे कृष्ण! इससे मानो पाण्डव लोग द्रोणपुत्रके द्वारा अपहृत हुए। हे वार्ष्णेय! अभिमन्यु जो सब भाइयोंका प्रियपात्र था, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है; परन्तु वे लोग इस वृत्तान्तको सुनके क्या कहेंगे? क्या वे लोग द्रोणपुत्रके अस्त्रसे निर्ज्जित हुए? हे जनार्द्दन! अभिमन्युके मृतपुत्र उत्पन्न होनेसे इससे अधिक दुःखका विषय और क्या होगा? हे पुरुषोत्तम! आज मैं सिर झुकाके तुम्हें प्रसन्न करती हूं, तुम इस पृथा तथा द्रोपदीको ओर देखो। हे माधव! जिस समय द्रोणपुत्रने पाण्डवोंकी बधुओंका गर्भ विनाश किया, उस समय तुमने क्रुद्ध होके उससे कहा था, रे नराधम ब्रह्मबन्धु! मैं अभिमन्युके पुत्रको जीवित करके तेरी कामना विफल करूंगा; मैं यह वाक्य सुनकर तुम्हारा बल मालूम करके तुम्हें प्रसन्न करती हूं, तुम अभिमन्युके पुत्रको जीवित करो। हे वृष्णिशार्द्दूल! यदि तुम ऐसी प्रतिज्ञा करके इस समय उस प्रतिश्रुत वचनको सफल न करोगे, तो जान रखो, कि मैं तुम्हारे सम्मुखमें निश्चय ही प्राण परित्याग करूंगी। हे वीर! यदि यह अभिमन्युका पुत्र जीवित न होगा, तो तुम्हारे जीवित रहते मैं तुम्हें लेके क्या करूंगी? हे दुर्द्धर्ष! इसलिये जैसे जलद जलकी वर्षा करके शस्यको जीवित करते हैं, वैसे ही तुम अभिमन्युके इस मरे हुए पुत्रको जीवित करो। हे केशव! तुम धर्म्मात्मा सत्यवादी सत्यपराक्रमी तथा तुम ही मिथ्या वचनको सत्य करनेमें समर्थ हो; इस मृत उत्पन्न हुए परमप्रियपात्र भानजेके पुत्रको जीवित करना, तुम्हारे पक्षमें कुछ बड़ी बात नहीं है, क्यों कि तुम इच्छा करनेसे त्रिलोकवासी समस्त मृत लोगोंको जीवित कर सकते हो। हे कृष्ण! मैं तुम्हारा प्रभाव जानती हूं, इस ही लिये तुम्हारे समीप प्रार्थना करती हूं; तुम पाण्डुपुत्रोंके विषयमें यह परम अनुग्रह प्रकाशित करो। हे महाबाहो! बहिन जानके तथा हतपुत्रा अथवा शरणमें आई हुई समझके मेरे विषयमें तुम्हें दया करनी उचित है।

६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजेन्द्र! जब सुभद्राने ऐसा कहा, तब केशिनिसूदन कृष्णने दुःखसे मूर्च्छित होकर ऊंचे स्वरसे 'ऐसा ही

होगा,' इतना वचन कहके वहां पर सब लोगोंको हर्षित किया। जैसे सूर्य्यकी धूपसे आर्त्त हुआ पुरुष जल सेचनसे सुखी होता है, वैसे ही उस समय पुरुषश्रेष्ठ कृष्णके उस वचनसे सब कोई अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। अनन्तर उन्होंने शीघ्र ही तुम्हारे पिताके जन्मगृहमें प्रवेश करके देखा, कि वह गृह सफेद मालासे विधिपूर्व्वक सज्जित चारों ओर जलभरे कलशोंसे युक्त है, घृत, तिन्दुक, वृक्षोंके पल्लव, सर्षप, विमल अस्त्र और अग्नि यथायोग्य स्थानपर स्थित हैं, वहां-पर सेवा टहलके लिये बूढ़ी रमणीय परिचारिका खड़ी हैं, चिकित्साके लिये उत्तम निपुण वैद्य विद्यमान हैं और कुशल पुरुषोंके द्वारा रक्षोघ्न वस्तुएं विधिपूर्व्वक स्थापित होरही हैं। हृषीकेश तुम्हारे पिताका ऐसा जन्मगृह देखकर अत्यन्त हर्षित होके धन्य धन्य कहने लगे। वृष्णिनन्दन कृष्णके ऐसा कहनेपर द्रौपदी शीघ्रताके सहित विराटनन्दिनी उत्तराके पास जाकर उससे बोली, हे भद्रे! ये तुम्हारे श्वशुर पुराण ऋषि अचिन्त्यात्मा अपराजित मधुसूदन कृष्ण तुम्हारे निकट आरहे हैं। उत्तरा देवी द्रौपदीका वचन सुनके शोकयुक्त वचन और आंसूके जलको रोककर देवताकी भांति कृष्णको देखके अवगुण्ठनवती हुई। अनन्तर वह तपस्विनी विराटपुत्री आये हुए गोविन्दको देखकर शोकपूरित हृदय होकर करुणायुक्त वचनसे इस प्रकार विलाप करने लगी। हे पुण्डरीकाक्ष! देखिये, मैं बालक विहीन हुई हूं; अभिमन्युकी तथा मुझे भी मरी हुई जानो। हे मधुसूदन! मैं सिर नीचा करके आपके निकट यह प्रार्थना करती हूं, कि आप द्रोणपुत्रके अस्त्रसे जले हुए मेरे इस पुत्रको जीवित करिये, हे पुण्डरीकाक्ष! यदि धर्म्मराज, भीमसेन अथवा आप ऐसा कहते, कि ऐषिकास्त्र इस अज्ञानवती गर्भिणीका वध करे, तो उस समय मेरा विनाश होनेसेही भला होता, क्यों कि तब ऐसी घटना न होती। दुर्ब्बुद्धि द्रोणपुत्रने ब्रह्मास्त्रसे इस गर्भके बालकको मारके कौनसा फल पाया? हे शत्रुनिवर्हण! मैं सिर झुकाके तुम्हें प्रसन्न करती हुई प्रार्थना करती हूं, कि आप इस बालकको जीवित करिये। हे गोविन्द! यदि यह बालक जीवित न होगा, तो मैं आपके सामने ही प्राण परित्याग करूंगी। हे साधो! इस विषयमें मेरे मनमें जो सब मनोरथ उत्पन्न हुए थे, द्रोणपुत्रने उसे नष्ट किया है, तब किस लिये प्राण धारण करूंगी? हे कृष्ण! पहिले मेरी यह इच्छा थी, कि मैं आपको प्रणाम करूंगी, परन्तु उस समय मेरे पूर्णगर्भा रहनेसे वह विफल हुआ है। हे पुरुषर्षभ! मेरे मनमें जो सब मनोरथ उत्पन्न हुए थे, चञ्चललोचना यह पुत्र मृत होनेसे वे सब मनोरथ निष्फल हुए हैं। हे मधुसूदन! वह चपलाक्ष आपके परम प्रियपात्र थे, देखिये उनका यह पुत्र, ब्रह्मास्त्रसे मरा हुआ है; इसका पिता जैसा कृतघ्न और नृशंस था, यह बालक भी वैसा ही हुआ, क्यों कि आज इस बालकने पाण्डवी श्री परित्याग करके यमके स्थानमें गया है। हे केशव! पहिले मैंने उनके समीप ऐसी प्रार्थना की थी, हे वीर अभिमन्यु! यदि तुम युद्धभूमिमें मरोगे, तो उसी समय मैं तुम्हारे निकट गमन करूंगी; हे कृष्ण! मैंने नृशंसताके वशमें होकर जीनेकी आशासे ऐसा नहीं किया; इस समय मेरे वहां जानेपर वह फाल्गुनि मुझे क्या कहेंगे?

६८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वह पुत्राभिलाषिणी तपस्विनी उत्तरा कातर होके पागलिनीकी भांति करुणा वाक्यसे इस ही प्रकार विलाप करके पृथ्वीपर गिरी। दुःखसे आर्त्त कुन्ती और अन्यान्य भरतकुलकी स्त्रियें उस पुत्र और वस्त्ररहित उत्तराको पृथ्वीपर गिरती

हुई देख ऊंचे स्वरसे रोने लगीं। हे राजेन्द्र! उस समय पाण्डवोंके गृह मुहूर्त्तभरके बीच आर्त्तस्वरसे निनादित होकर दर्शनीय हुए। हे राजन्! उस समय पुत्रशोकसे सन्तापित विराट-पुत्री उत्तरा मूर्च्छित हुई, अनन्तर वह सावधान होकर उस मरे हुए पुत्रको गोदीमें लेकर उससे कहने लगी, कि तुम धार्म्मिकके पुत्र होकर वृष्णिप्रवीर कृष्णको प्रणाम न करनेसे तुम्हें जो अधर्म्म होता है, उसे क्या तुम नहीं जानते हो? हे पुत्र! तुम अपने पिताके निकट जाकर मेरा यह वचन उनसे कहना, कि हे वीर! आप प्राणियोंके मृत्युकाल उपस्थित न होतेही क्यों अकालमें मृत हुए? आपके सदृश पति और पुत्रका विरह होनेसे मेरा मरनाही कल्याण-कारी है; इतनेपर भी जो अबतक मैं जीवित हूं, उससे मेरा कौनसा मङ्गल होगा? हे महा-भुज! मैं धर्म्मराजको अनुमति लेकर घोर विष-भक्षण अथवा अग्निमें प्रवेश करूंगी।

हाय! मैं पुत्र और पतिसे हीन हुई हूं, तौभी मेरा यह दुर्द्धर हृदय सहस्र टूकड़े होके न फट गया? हे पुत्र! तुम उठकर दुःखित शोकसे आर्त्त विपद ग्रस्त दीन तथा शोकमें डूबी हुई सात्त्वतवंशीय इस अपनी प्रपितामही आर्य्या कुन्ती, तपस्विनी द्रौपदी और व्याधाके द्वारा विद्ध हुई हरिनोंकी भांति मुझे अवलो-कन करो। हे पुत्र! तुम उठके अपने चपलनेत्र पिताके मुखमण्डलकी भांति बुद्धिमान् लोक-नाथके पद्मपलास सदृशनेत्र सम्पन्न वदनमण्डल देखो। उत्तराके पृथ्वीमें गिरके इसही प्रकार विलाप करती रहनेपर उन स्त्रियोंने उसे देख-कर अत्यन्त दुःखित होकर फिर उसे उठाया। तब मत्स्यराज पुत्रीने उठकर धीरज अव-लम्बनकर हाथ जोड़के पुण्डरीकाक्ष कृष्णको प्रणाम किया।

अनन्तर वह पुरुषश्रेष्ठ कृष्ण उत्तराका बहुत सा विलाप वचन सुनके जलस्पर्श करके ब्रह्मास्त्र प्रतिसंहार करने लगे। विशुद्धात्मा अच्युत दाशार्ह कृष्ण बालकके जीवनदानकी प्रतिज्ञा करके अखिल भूमण्डलको सुनाकर बोले, हे उत्तरा! मैं मिथ्या नहीं कहता, मैंने जो कहा है, वह सत्य होगा, देखो सबके सामनेही मैं इस बालकको जिलाता हूं। जब कि पहले मैंने किसी प्रकार तनिकभी मिथ्या नहीं कहा तथा युद्धमें पराजित नहीं हुआ हूं, तब उस पुण्यबलसेही यह बालक जीवित होवे। जिस प्रकार धर्म्म और ब्राह्मणगण मुझे प्रिय हैं, अभिमन्युका पुत्रभी वैसाही प्रिय है; इस-लिये यह मरके जन्मा हुआ पुत्र जीवित हो, जो मैंने विजय अर्जुनके सङ्ग कभी विरोध न किया हो, तो उसही सत्यके अनुसार यह मरा हुआ पुत्र जीवित होवे। सत्य और धर्म्म मुझमें सदा प्रतिष्ठित हो, तो अभिमन्युका यह मृतपुत्र जी जाय। जो कंस और केशी धर्म्म पूर्व्वक मेरे हाथसे मारे गये हों, तो उसही सत्यधर्म्मके अनु सार यह मरा हुआ बालक जीवित होवे। हे भरतश्रेष्ठ! जब कृष्णने इतना वचन कहा, तब वह बालक धीरे धीरे सचेत होकर अङ्ग प्रत्यङ्ग सञ्चालन करने लगा।

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब कृष्णने उस ब्रह्मास्त्रको प्रतिसंहार किया, तब तुम्हारे पिताके तेजप्रभावसे वह गृह प्रदीप्त हुआ। अनन्तर राक्षसगण उस गृहको छोड़के भाग गये; इधर आकाशसे केशवके विषयमें साधुवाद होने लगा। हे प्रजानाथ! उस समय उस अस्त्रके प्रज्वलित होकर पितामहके निकट जानेपर तुम्हारे पिता फिर जीवित हुए। अनन्तर जब वह बालक निज अङ्गोंको सञ्चालन करने लगा, तब भरत-कुलकी स्त्रियें बल और उत्साहके सहित हर्ष प्रकाश करने लगीं। वे सब हर्षित होकर कृष्णकी आज्ञानुसार ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन

कराके जनार्द्दनकी प्रशंसा करने लगीं। जैसे पार जानेवाले लोग नौका पाके आनन्दित होते हैं, वैसेही कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा और उत्तरा प्रभृति भरतकुलकी सब स्त्रियें मृत बालकको जीवित देखकर हर्षित हुईं। वहांपर मल्ल, नट, ज्योतिषी, सुखशयन, जिज्ञासु, सूत और मागधगण कुरुवंशके स्तवसूचक आशीर्व्वचनके द्वारा जनार्द्दनकी स्तुति करने लगे। हे भारत! उत्तराने समयके अनुसार उठके प्रसन्नचित्त होकर पुत्रके सहित यदुनन्दन कृष्णको प्रणाम किया। कृष्णने अत्यन्त हर्षित होकर उसे बहुतसा रत्न प्रदान करते हुए अन्यान्य वृष्णिवंशियोंकी भांति उसका नामकरण किया। हे महाराज! भरतकुल क्षीणप्राय होनेपर अभिमन्युका पुत्र उत्पन्न हुआ, उस समत सत्यसन्ध जनार्द्दन कृष्णने कहा, 'इसका नाम परीक्षित होवे'; इसही लिये तुम्हारे पिताका परीक्षित नाम हुआ।

हे प्रजानाथ! तुम्हारे पिता समयके अनुसार बर्द्धित होकर सबके चित्तको आनन्दित करने लगे। हे वीर! आपके पिताकी एक महीनेकी अवस्था होनेपर पाण्डवलोग बहुतसा रत्न लेकर हस्तिनापुरमें उपस्थित हुए; वृष्णिपुङ्गवगण उन लोगोंकी आगमन वार्त्ता सुनके उन्हें देखनेके लिये गृहसे बाहिर हुए; हे नरनाथ! जनपद तथा पुरवासी पुरुषोंने अनेक प्रकारकी माला, विचित्र पताका, अनेक भांति की ध्वजा और पूजाकी विविध वस्तुओंसे हस्तिना नगर, राजभवन तथा देवालयोंको अलंकृत किया। अनन्तर विदुरने पाण्डुपुत्रोंकी परम प्रियकामनासे राजमार्गोंको पुष्पमालाके द्वारा सुशोभित करनेके लिये आज्ञा किया। हे महाराज! उस समय नाचनेवाले नर्त्तक और गीतगानेवालोंके सङ्गीत शब्दसे राजनगरी प्रतिध्वनित होकर शब्दायमान समुद्रकी भांति शोभित हुई। वहांपर चारों ओर निर्ज्जन स्थानोंमें सस्त्रीक बन्दिगणके स्तुतिवाद करते रहनेसे उस समय वह राजमन्दिर कुबेरके भवनकी भांति प्रकाशित होने लगा। सब पताका वायुके द्वारा सञ्चालित होकर मानो उत्तर और दक्षिण कुरुगणको प्रदर्शन करने लगीं और राजभाराधिकृत पुरुषगण उस समय इस प्रकार घोषणा करने लगे, कि पाण्डवगण रत्न लानेके निमित्त जाकर सब राष्ट्रोंमें विहार करके आज हस्तिनानगरमें प्रवेश करेंगे।

७० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शत्रुसूदन श्रीकृष्णचन्द्र पाण्डवोंकी आगमनवार्त्ता सुनके उन्हें देखनेकी इच्छासे मन्त्रियोंके सहित उनके समीप गये। हे राजन्! पाण्डवोंने वृष्णिवंशियोंके सङ्ग धर्म्मपूर्व्वक मिलकरके नगरमें प्रवेश किया। उस समय उस महासेनामें स्थित वाहनोंके खुर तथा रथके शब्दसे स्वर्ग, मर्त्य, पाताल और समस्त जगत् परिपूरित हुआ। अनन्तर पाण्डव लोग रत्नकोष आगे करके प्रसन्नचित्तसे मन्त्रियों और सुहृदोंके सहित निज पुरमें प्रविष्ट हुए; वे सब लोग मिलकर न्यायके अनुसार प्रजानाथ धृतराष्ट्रके समीप अपना अपना नाम कहकर उनके दोनों चरणोंकी वन्दना करने लगे। हे राजेन्द्र! भरतसत्तम पाण्डवगण धृतराष्ट्रकी चरणवन्दना करके क्रमसे सुबलनन्दिनी गान्धारी, कुन्ती और वैश्यापुत्र विदुरकी पूजा करतेहुए पुरवासियोंसे पूजित होकर विशेष रूपसे प्रकाशित होने लगे।

फिर उन लोगोंने तुम्हारे पिताका वह परमाश्चर्य्य विचित्र अद्भुत जन्मवृत्तान्त और बुद्धिमान् श्रीकृष्णचन्द्रका वैसा विस्मयकर कर्म्म सुनके पूजनीय देवकीपुत्र कृष्णकी पूजा की। अनन्तर कुछ दिनके बाद सत्यवतीपुत्र व्यासदेव हस्तिनापुरमें आये। कुरुद्वह पाण्डवगण वृष्णि तथा अन्धकवंशीय पुरुषोंके सहित व्यासदेवकी पूजा

करके उनकी उपासना करने लगे; तब वहां धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर व्यासके समीप अनेक भांतिकी वार्त्ता करके उनसे बोले, हे भगवन्! आपकी कृपासे ये सब रत्न लाये गये हैं, मैं उन सब रत्नोंको अश्वमेध यज्ञमें व्यय करनेकी इच्छा करता हूं। हे मुनिसत्तम! हम सब कोई आपके तथा कृष्णके वशमें हैं, इसलिये यह प्रार्थना करता हूं, कि उस विषयमें आप मुझे अनुमति दीजिये।

श्रीवेदव्यास मुनि बोले, हे राजन्! मैं तुम्हें अनुमति देता हूं, इसके अनन्तर यदि और कुछ कार्य्य हो, तो उसे तुम पूरा करके विधिपूर्वक दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञ करो। हे राजेन्द्र! अश्वमेध यज्ञ सब पापोंसे पवित्र करता है, इसलिये तुम उस यज्ञको करनेसे निश्चय ही पापरहित होगे; इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस धर्म्मात्मा कुरुराज युधिष्ठिरने व्यासदेवका ऐसा वचन सुनकर अश्वमेध यज्ञ करनेके लिये सम्मति की। वाग्मिवर राजा युधिष्ठिर कृष्णद्वैपायन मुनिसे सब वृत्तान्त कहके वसुदेवपुत्र कृष्णके निकट जाकर उनसे बोले, हे पुरुषसत्तम! तुम्हारे द्वारा देवकी उत्तम प्रजावती हुई हैं, हे महाबाहो! मैं तुमसे जो कहता हूं, तुम उसे सुनो। हे यदुनन्दन! हम लोग तुम्हारे प्रतापसे अर्जित भोग्य वस्तुओंको भोगते हैं, तुमने ही पराक्रम और बुद्धिसे इस पृथ्वीको जीता है; तुमही हम लोगोंके परम गुरु हो, हे दाशार्ह! इसलिये तुम्हें स्वयं यज्ञमें दीक्षित होना योग्य है, क्योंकि तुम्हारे दीक्षित होनेसे मैं निष्पाप होऊंगा। मैंने यह निश्चय जाना है, कि तुमही यज्ञ, तुमही अक्षर, तुमही धर्म्म, तुमही प्रजापति और तुम ही सब प्राणियोंकी गति हो।

श्रीकृष्ण बोले, हे अरिदमन! आपको ऐसा कहना चाहिये, परन्तु मुझे ऐसा निश्चय ज्ञान है, कि आप ही सब भूतोंकी गति हैं; और आप कुरुवीर पुरुषोंको आदि होकर इस लोकमें धर्म्मरूपसे विराजते हैं। हे राजन्! हम सब कोई आपके गुणीभूत हुए हैं, हम आपको ही अपना गुरु जानते हैं; इसलिये मैं कहता हूं, कि आप इस यज्ञमें दीक्षित होकर जो जो करनेकी इच्छा हो, उन कार्य्योंके लिये मुझे आज्ञा करिये। हे अनघ! मैं आपके समीप सत्य प्रतिज्ञा करता हूं, कि मैं भीमसेन, अर्ज्जुन और माद्रीपुत्र नकुल सहदेव, हम सब कोई आपके सब कार्य्य करेंगे। हे राजन्! आपका इष्ट साधन होनेसे सबकी अभिलाष पूर्ण होगी।

७१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मपुत्र मेधावी युधिष्ठिरने कृष्णका ऐसा वचन सुनके व्यासदेवको आह्वान करके कहा, कि आप अश्वमेध यज्ञके समयको विशेष रीतिसे जानते हैं, इसलिये उस ही समयमें मुझे दीक्षित करिये; क्योंकि यह मेरा यज्ञ आपहीके अधीन है।

श्रीवेदव्यास मुनि बोले, हे कौन्तेय! मैं पैल और याज्ञवल्क्य,—हम लोग जिस कार्य्यका जो विधान और समय है उसे निरूपण किया करते हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! चैतीपूर्णिमामें तुम्हारी दीक्षा होगी, इसलिये तुम लोग यज्ञकी सामग्रियोंको इकट्ठी करो। अश्वविद्या जाननेवाले सूत और ब्राह्मण लोग तुम्हारी यज्ञसिद्धिके लिये मेध्य अश्व-परीक्षा करें। हे पार्थिव! घोड़ेकी परीक्षा होनेपर शास्त्रके अनुसार उसे छोड़ो, वह घोड़ा तुम्हारे प्रदीप्त यशको प्रदर्शित करते हुए सागराम्बरा पृथ्वीपर भ्रमण करे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर ब्रह्मवादी व्यासदेवका ऐसा वचन सुनके "वही करूंगा" इसही प्रकार स्वीकार करके श्रीव्यासदेव मुनिके वचनके अनुसार सब कार्य्य करने लगे। हे महाराज! सामग्रियोंके

एकत्रित होनेपर अमितात्मा धर्म्मपुत्र नरनाथ युधिष्ठिरने उन सञ्चित सामग्रियोंको इकट्ठो करके कृष्णद्वैपायन मुनिसे सब वृत्तान्त कहा। तब महातेजस्वी व्यासदेव मुनि धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरसे बोले, कि समय और योगके अनुसार हम लोग तुम्हारी दीक्षाके निमित्त सज्जित हुए हैं; अब तुम स्फ अर्थात् काष्ठका खड्ग, कूर्च, आसनके लिये कुशमुष्टि और यज्ञकी अन्यान्य उपकरण सामग्रियोंको सुवर्णके द्वारा निर्म्माण कराओ। आजही पृथ्वीके बीच यथाक्रमसे घोड़ा छोड़ो और विधिपूर्व्वक तथा शास्त्रके अनुसार जिसमें घोड़ा उत्तम रीतिसे रक्षित होवे उसका उपाय करो।

युधिष्ठिर बोले, हे ब्रह्मन्! घोड़ा उत्सृष्ट होकर जिस भांति पृथ्वीमें विचरण कर सके, आप उस उपायका विधान करिये। हे मुनि! घोड़ाके स्वेच्छापूर्व्वक पृथ्वीपर विचरण करते रहनेपर कौन पुरुष उसकी रक्षा करेगा, वहभी आप निश्चय करके कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजेन्द्र! कृष्णद्वैपायन व्यासदेवने युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके कहा, कि भीमसेनके भाई सब धनुर्द्धारियोंमें श्रेष्ठ जिष्णु सहिष्णु धृष्णु अर्जुन उस अश्वको पालन करेंगे। निवातकवचके नाशक धनञ्जय पृथ्वीको जीतनेमें समर्थ हैं, उनके पास दिव्यअस्त्र, दिव्य संहनन, दिव्य धनुष और दिव्य बाण विद्यमान हैं; इसलिये वह अर्जुन ही घोड़ेके अनुगामी होवें। हे राजेन्द्र! वह धर्म्मार्थ कुशल और सर्व्वविद्या विशारद हैं, इस लिये वही शास्त्रके अनुसार तुम्हारे घोड़ेको विचरण करानेमें समर्थ होगा। हे पृथ्वीनाथ! अमित पराक्रमी कुन्तीपुत्र भीमसेन और नकुल राज्यकी रक्षा करें। महायशस्वी बुद्धिमान सहदेव सब कुटुम्बतन्त्रको विधिपूर्व्वक सावधान करें। जब व्यासदेवने युधिष्ठिरसे इन सब कार्य्योंको विधिपूर्व्वक समाधान करनेको कहा, तब उन्होंने अर्जुनको घोड़ेकी रक्षाके लिये नियुक्त किया।

युधिष्ठिर बोले, हे अर्जुन! आओ, तुम इस घोड़ेकी रक्षा करनेमें सब प्रकारसे यत्नवान् रहो। हे वीरश्रेष्ठ! तुम्हारे अतिरिक्त कोई मनुष्यही इसकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं है। हे महाबाहो! यदि कोई कोई राजा तुम्हारे विरुद्ध आचरण करनेमें प्रवृत्त हों, तो जिस भांति तुम्हारे सङ्ग उनका संग्राम न हो, वही उपाय करना और उन राजओंको मेरे इस यज्ञका वृत्तान्त कहके यज्ञके समयमें उन्हें आनेके लिये निमन्त्रण करना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने भाई अर्जुनसे ऐसा कहके भीम और नकुलको नगरकी रक्षामें नियुक्त किया और महीपाल धृतराष्ट्रकी अनुमति लेकर यूथपति सहदेवको कुटुम्बतन्त्रमें नियोग किया।

७२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दीक्षाका समय उपस्थित होनेपर उन महाऋत्विकोंने राजाको विधिपूर्व्वक दीक्षित किया। पाण्डुपुत्र महातेजस्वी धर्म्मराज पशुबन्धनके कार्य्योंको संग्रह करके ऋत्विकोंके सहित समधिक प्रकाशित होने लगे। ब्रह्मवादी अमिततेजस्वी स्वयं व्यासदेवके द्वारा विधि और शास्त्रके अनुसार अश्वमेधके लिये वह घोड़ा छोड़ा गया। धर्म्मराज युधिष्ठिर दीक्षित होकर गलेमें सुवर्णकी माला तथा सुवर्णकण्ठी पहरके उस समय प्रदीप्त अग्निकी भांति प्रकाशित होने लगे। हे पृथ्वीपति! उनके ऋत्विकगण भी वैसा ही वेष धारण करके उस ही प्रकार शोभित हुए। धनंजय अर्जुन सफेद घोड़ेपर चढ़के उस श्यामकर्ण घोड़ेका अनुसरण करते हुए प्रज्वलित अग्निकी भांति शोभायमान हुए। हे नरेन्द्र! जब अर्जुन घोड़ेके अनुगामी हुए, तब वेद

जाननेवाले बहुतसे ब्राह्मण तथा अन्य पुरुषोंने उनसे कहा, "तुम इस समय गमन करो, तुम्हारा मङ्गल हो, फिर आगमन करना; हम लोगोंने युद्धके समय इन्हें इस प्रकार नहीं देखा था, यह जो भयङ्कर निर्ह्रादयुक्त धनुष दीखता है, इसहीका नाम गाण्डीव है।" हे महीपाल! चर्म्मपादुका और अङ्गलीत्राणधारी अर्ज्जुन धर्म्मराजकी आज्ञानुसार गाण्डीव धनुष चढ़ाकर हर्षपूर्व्वक उस घोड़ेका अनुसरण करने लगे। हे राजन्! आबालवृद्ध पुरवासीवृन्द घोड़ेका अनुसरण करनेवाले कुरुकुलश्रेष्ठ धनञ्जयको देखनेके लिये आये, उस समय उन लोगोंकी परस्पर भीड़से अत्यन्त ही उष्मा उत्पन्न हुई। हे महाराज! उसके अनन्तर उस समय घोड़ेके अनुगामी अर्ज्जुनके दर्शनकी इच्छा करनेवाले पुरुषोंके कोलाहल शब्दसे दशों दिशा तथा आकाशमण्डल परिपूर्ण होगया; वे लोग कहने लगे, कि यह प्रदीप्त घोड़ा जा रहा है, इसके पीछे वह महाबाहु कुन्तीपुत्र धनञ्जय उत्तम धनुष धारण करके गमन करते हैं। महाबुद्धिमान् जिष्णु धनञ्जयने उन लोगोंका ऐसा ही वचन सुना। हे भारत! दूसरे पुरुषोंने अर्ज्जुनको देखकर यह कहना आरम्भ किया। हे अर्ज्जुन! तुम्हारा मङ्गल हो, तुम गमन करो, फिर आना। हम लोगोंने युद्धके समयमें अर्ज्जुनको इस प्रकार नहीं देखा था और भीम निर्ह्रादयुक्त गाण्डीव धनुष भी नहीं देखा था। हे अर्ज्जुन! तुम जाओ, तुम्हारा मङ्गल हो, अरिष्ट दूर हो; तुम्हारा मार्ग भयविहीन होवे। हमलोग ऐसी प्रार्थना करते हैं, कि तुम्हारे लौटनेपर फिर हम लोग इसी प्रकार तुम्हें देखें। हे भरतर्षभ! महाबुद्धिमान अर्ज्जुन पुरुष और स्त्रियोंका ऐसा मधुर वचन सुनके चलने लगे। धर्म्मराजकी आज्ञानुसार शान्ति करनेके निमित्त यज्ञकार्य्यमें प्रवीण याज्ञवल्क्यके शिष्य वेदपारग ब्राह्मणों और क्षत्रियोंने महात्मा धनञ्जयके सङ्ग गमन किया। हे महाराज! पांडवोंके अस्त्र-प्रभावसे जो सब देश जीते गये थे, घोड़ा उन्हीं देशोंमें विचरने लगा।

हे वीर! वहांपर पांडुपुत्र अर्ज्जुनका जिस प्रकार विचित्र महायुद्ध हुआ था, उसे कहूंगा। हे राजन्! वह घोड़ा पृथ्वीकी परिक्रमा करते हुए जिस प्रकार उत्तरसे पूर्व्व दिशामें आया था, उसे सुनो। हे महाराज! वह घोड़ा तथा श्वेत घोड़ेपर चढ़े हुए महारथी अर्ज्जुन क्रमसे राजाओंके राष्ट्रको विमर्द्दित करके भ्रमण करते रहनेपर उस समय जिन सब हतबान्धव क्षत्रियोंने उनके सङ्ग युद्ध किया था, उसकी गिनती नहीं हो सकती। हे महाराज! पहलेके निर्ज्जित धनुर्धारी बहुतेरे सैकड़ों किरात, यवन अनेक भांतिके म्लेच्छ और मदमत्त नरवाहन आर्य्य राजा लोग युद्धदुर्म्मद होकर पांडवपुत्रसे लड़नेके लिये उनके समीप आये। हे पृथ्वीनाथ! वहां अनेक देशोंके समागत राजाओंके संग जिस प्रकार अर्ज्जुनका युद्ध हुआ था और उस युद्धमें दोनों ओरकी जो समस्त महासेना प्रतप्त हुई थी, वह सब मैं तुमसे विशेष रीतिसे कहता हूं।

७३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पहले, पांडवोंने त्रिगर्त्तवासी जिन सब लोगोंको मारा था, उनके महारथी पुत्र और पौत्रगण अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करने लगे। उन महावीर त्रिगर्तोंने पाण्डवोंका यज्ञीय घोड़ा आया हुआ जानके तूणीर बांधकर घोड़ोंपर चढ़के उस अश्वको घेरकर पकड़ना चाहा। तब मधुसूदन अर्ज्जुनने उन लोगोंकी चिकीर्षा जानके सान्त्वना पूर्व्वक उन्हें निवारण किया। वे सब कोई अर्ज्जुनके वचनका अनादर करके बाण चलाने लगे; तब अर्ज्जुनने तम तथा रजोगुणसे युक्त उन बाणोंको निवारण किया और हंसके बोले, हे अधर्म्मज्ञगण! यदि तुम लोग निज जीवनको कुशल चाहते

हो, तो निवृत्त हो जाओ। 'चलनेके समयमें धर्म्मराजने अर्ज्जुनसे कहा था। हे पार्थ! हतबान्धव राजाओंके विरुद्धाचारी होनेपर भी तुम उन्हें न मारना,' उन्होंने धर्म्मराजका वही वचन स्मरण करके उन लोगोंसे कहा, कि तुम लोग निवृत्त हो जाओ; परन्तु वे लोग निवृत्त न हुए। तब वह शरजालसे त्रिगर्त्तराज सूर्य्यवर्म्माको जीतकर हंसने लगे। तिसके अनन्तर वे लोग रथ तथा रथचक्रकी घरघराहटसे सब दिशाओंको परिपूरित करते हुए अर्ज्जुनके निकट आये। अनन्तर सूर्य्यवर्म्माने अपनी लघुहस्तता प्रकाशित करके अर्ज्जुनके ऊपर एक सौ नतपर्व्व बाण चलाया और उसके अनुयाई अन्यान्य धनुर्द्धारी पुरुष अर्ज्जुनके बधकी अभिलाष करके बहुतसा बाण बरसाने लगे। हे महाराज! उस समय अर्ज्जुनने धनुषसे छूटे हुए कई सौ बाणोंसे उनके चलाये हुए बाणोंको काटके उन्हें पृथ्वीमें गिरा दिया। सूर्य्यवर्म्माके गिरनेपर उसका भाई युवा तेजस्वी केतुवर्म्मा भ्राताके निमित्त यशस्वी अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुआ। परवीरघाती विभत्सु अर्ज्जुनने केतुवर्म्माको युद्ध करनेके लिये आया हुआ देखकर शिकल किये हुए बाणोंसे उसे घायल किया। केतुवर्म्माके घायल होनेपर महारथ धृतवर्म्मा शीघ्रगामी रथपर चढ़के आया और जिष्णु अर्ज्जुनको बाणोंसे छिपा दिया; महातेजस्वी गुड़ाकेश अर्ज्जुन उस बालक धृतवर्म्माका हस्तलाघव देखकर परम सन्तुष्ट हुए। जब धृतवर्म्मा बाण बरसाने लगा, उस समय इन्द्रपुत्र अर्ज्जुन उसके बाणग्रहण और सन्धानको लक्ष्य करनेमें समर्थ न हुए। बल्कि वह धृतवर्म्माको हर्षित करते हुए मुहूर्त्तभर मनहीमन उसकी प्रशंसा करने लगे; महाबाहु कुरुप्रवीर धनञ्जयने सर्पकी भांति क्रुद्ध उस धृतवर्म्माकी मानो उपहास करते हुए प्रीतिपूर्व्वक उसका प्राण संहार न किया। उस समय धृतवर्म्माने अमित तेजस्वी अर्ज्जुनसे इस प्रकार रक्षित होकर उनके ऊपर प्रदीप्त बाण चलाया; धनञ्जयका हाथ धृतवर्म्माके द्वारा अत्यन्त बिद्ध होनेसे मोहवशसे उनके हाथसे गांण्डीव धनुष पृथ्वीपर गिरा। हे विभु! सव्यसाचीके हाथसे गाण्डीव धनुष गिरनेसे उस समय उसका इन्द्रधनुषके सदृश रूप प्रकट हुआ। हे महाराज! युद्धमें उस दिव्य महा धनुषके गिरनेपर धृतवर्म्मा ऊंचे स्वरसे हंसने लगा। अनन्तर जिष्णु धनञ्जय क्रोधित हो हाथसे रुधिर पोंछकर उस दिव्य धनुषको ग्रहण करके बाण बरसाने लगे। तब धनञ्जयके वैसे कर्म्मकी प्रशंसा करनेवाले अनेक प्रकारके प्राणियोंका हलहला शब्द आकाश मण्डलमें प्रकट हुआ। तिसके अनन्तर त्रिगर्त्तवासी योद्धाओंने कालान्तक यमकी भांति क्रुद्ध उस जिष्णु धनञ्जयको घेर लिया। अन्तमें उन लोगोंने धृतवर्म्माकी जयप्राप्तिके निमित्त उसके समीप जाकर गुड़ाकेशकी निन्दा करने लगे; उससे उन्होंने अत्यन्त क्रुद्ध होकर महेन्द्रवज्र सदृश कई सौ आयत बाणोंसे शीघ्र ही उनकी अठारह सेना संहार की। धनञ्जय उस सारी सेनाको भागती हुई देखकर ऊंचे स्वरसे हंसते हुए शीघ्रतापूर्व्वक सर्पसदृश बाणोंसे शत्रुओंका संहार करनेलगे, महाराज! वे त्रिगर्त्तवासी महारथगण अर्ज्जुनके बाणोंसे अर्द्दित होकर कई ओर भागने लगे। अनन्तर वे लोग संशप्तक निसूदन पुरुषश्रेष्ठ धनञ्जयके निकट आके उनसे बोले, हे पार्थ! हम सब तुम्हारे किङ्कर तथा अनुवर्त्ती हुए, हम सब प्रेष्य होकर स्थित हैं, आप हम लोगोंको आज्ञा करिये। हे कौरवनन्दन! हम लोग तुम्हारा समस्त प्रियकार्य्य करेंगे। उस समय अर्ज्जुनने उन त्रिगर्त्तवासियोंको इस प्रकार आज्ञा की, हे नृपगण! मैंने तुम लोगोंके जीवनकी रक्षा की है, तुम लोग मेरे शासनको प्रतिग्रह करो।

७४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतश्रेष्ठ! अनन्तर वह उत्तम घोड़ा प्रागज्योतिषपुरमें जाकर विचरने लगा, तब भगदत्तका पुत्र रणकर्कश वज्रदत्त वहां उपस्थित हुआ। पृथ्वीपति वज्रदत्तने अपने देशमें आये हुए उस पाण्डुपुत्रके घोड़ोंको पकड़नेकी इच्छा की। हे राजन्! अनन्तर वह भगदत्तका पुत्र नगरसे निकलकर समागत घोड़ेको उन्मथित करते हुए नगरकी ओर चला। उस समय कुरुश्रेष्ठ महाबाहु अर्जुन उसे देखकर सहसा गाण्डीव धनुष चढ़ाकर उसकी ओर दौड़े। तब वीर वज्रदत्त धनञ्जयके बाणोंसे घायल तथा विमोहित होकर घोड़ेको छोड़के अर्जुनकी ओर दौड़ा। अनन्तर वह नृपश्रेष्ठ वज्रदत्त बाणोंसे घायल होकर नगरमें आके फिर महामातङ्गपर चढ़के नगरसे बाहिर हुआ। उस समय उसके ऊपर पाण्डुर आतपत्र धरा था और अङ्गपर सफेद चंवर सञ्चालित होता था। अनन्तर वह महारथ पार्थके समीप पहुंचके बाल्यस्वभाव तथा मोहनिबन्धनसे रणभूमिमें युद्धके लिये अर्जुनको आह्वान करने लगा। हे महाराज! उस वज्रदत्तने अत्यन्त क्रुद्ध होकर श्वेताश्व अर्जुनके निकट अचल सदृश शास्त्रकी भांति कल्पित संग्राममें विवश युद्धदुर्म्मद महामेघकी भांति मदचूनेवाले मतवारे हाथीको चलाया। उस समय वह महाबली गजराज वज्रदत्तके अङ्कुशकी ताड़नासे मानो आकाशमार्गमें उड़ता हुआ मालूम हुआ। हे महाराज! अर्जुन उस हाथीको आया हुआ देखके अत्यन्त क्रुद्ध हुए, और पृथ्वीपर रहके हाथीपर चढ़े हुए उस वज्रदत्तके सङ्ग युद्ध करने लगे। तब वज्रदत्तने अत्यन्त क्रुद्ध होकर शीघ्र ही वेगवान शलभसमूहकी भांति अर्जुनके ऊपर अग्निसदृश बहुतसे तोमर चलाये। उस समय अर्जुनने गाण्डीव धनुषसे छुटे हुए बाणोंके समीपमें आये हुए तोमरोंको आकाशमें ही दो तीन टुकड़े कर डाला। भगदत्तके पुत्र वज्रदत्तने तोमरोंको कटते हुए देखकर शीघ्रतापूर्व्वक बहुतसे असक्त बाण अर्जुनकी ओर चलाये। अनन्तर अर्जुनने अत्यन्त क्रुद्ध होकर शीघ्र ही वज्रदत्तके ऊपर शीघ्रगामी रुक्मपुङ्खशाण छोड़ा। वह महातेजस्वी अर्जुनके बाणोंसे उस महायुद्धमें अत्यन्त घायल तथा विद्व होकर पृथ्वीपर गिरा, परन्तु उसकी स्मृति लुप्त नहीं हुई। तिसके अनन्तर वह जयकी इच्छा करनेवाला वज्रदत्त क्रोध परित्याग करके सावधानचित्तसे फिर युद्धभूमिमें अर्जुनकी ओर उस श्रेष्ठ हाथीको चलाया। जिष्णु धनञ्जयने अत्यन्त क्रुद्ध होकर बहुतसे आशीविष तथा अग्निसदृश बाण उस हाथीके ऊपर चलाया। उस समय वह श्रेष्ठहस्ती बाणोंसे विद्व होकर रुधिर झरते हुए गेरुके झरनेयुक्त पर्व्वतकी भांति प्रकाशित हुआ।

७५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतर्षभ! जिस प्रकार पहले वृत्रासुरके सङ्ग इन्द्रका संग्राम हुआ था, उसही भांति राजा वज्रदत्तके सङ्ग अर्जुनका यह तीन रात्रितक युद्ध हुआ था।

अनन्तर चौथे दिन महाबली वज्रदत्तने ऊंचे स्वरसे हंसकर अर्जुनसे कहा, कि अर्जुन! अर्जुन!! तुम खड़े रहो, जीवन रहते मेरे निकटसे तुम उबरने न पाओगे। तुमने अपने पितृसखा मेरे पिता वृद्ध भगदत्तको मारा है, मैं शिशु हूं, आज मेरे सङ्ग युद्ध करो। हे कौरव! नरनाथ वज्रदत्तने अर्जुनसे ऐसा कहके उनकी ओर हाथी चलाया। वह गजराज धीमान् वज्रदत्तके चलानेपर मानो आकाशमार्गसे कूदता हुआ वेगपूर्व्वक अर्जुनके समीप उपस्थित हुआ। जैसे बादल जलकी वर्षासे नीलगिरिको सेचन करते हैं, वैसे ही अग्रहस्तप्रयुक्त शीकरसमूहके द्वारा उस गजराजने गुड़ाकेशको सेचन किया। वह नागेन्द्र राजा वज्र-

दत्तके चलानेपर बार बार अर्जुनकी ओर दौड़ा। हे महाराज! बज्रदत्तके द्वारा प्रेरित वह नागेन्द्र मानो नृत्य करते हुए वेगपूर्व्वक कौरवोंके महारथ अर्जुनके पास आया। शत्रु-सूदन धनञ्जय बज्रदत्तके हाथीको आया हुआ देखकर विचलित न हुए। उन्होंने भगदत्तके पहली बैरको स्मरण करके बल पूर्व्वक क्रुद्ध होकर राजा बज्रदत्तके हाथीको कार्य्यमें विघ्न-कारी समझा। अनन्तर जैसे तट समुद्रको रोकता है, वैसे ही उन्होंने क्रुद्ध होकर शर-जालके द्वारा उस हाथीको निवारण किया। भगदत्तपुत्र राजा बज्रदत्त हाथीको निवारित होते देखकर क्रोधसे मूर्च्छित होके अर्जुनकी ओर शिकल किये हुए बाण चलाने लगे। महाबाहु अर्जुनने शत्रुसंहारक बाणोंके द्वारा उन बाणोंको अद्भुतरूपसे निवारण किया।

अनन्तर प्राग्ज्योतिषाधिपति राजा बज्रद-त्तने क्रोधित होकर फिर पर्व्वतके सदृश बलवान हाथीको चलाया। इन्द्रपुत्र अर्जुनने उस नागे-न्द्रको आते हुए देखकर बलपूर्व्वक उसके ऊपर अग्निसदृश बाण चलाया। हे राजन्! बाणोंके द्वारा मर्म्मस्थलोंमें अत्यन्त चोट लगनेसे वह हाथी बज्रसे टूटे हुए पर्व्वतकी भांति सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा। उस समय वह गजेन्द्र अर्जुनके बाणोंकी चोटसे गिरके बज्रसे प्रपीड़ित पृथ्वीमें प्रविष्ट पर्व्वतकी भांति शोभित हुआ।

जब बज्रदत्तका हाथी मरके गिर पड़ा, तब अर्जुन पृथ्वीपर रहके राजा बज्रदत्तसे बोले, तुम्हें भय नहीं है। मेरे चलनेके समयमें महा-तेजस्वी युधिष्ठिरने मुझसे कहा था, कि हे "धन-ञ्जय! राजा लोग यदि तुम्हारे प्रतिकूलचारी होवें, तौभी तुम युद्धमें उन्हें तथा उनकी सेनाको न मारना; बल्कि उन्हें कहना, कि आप लोग सुहृदोंके सहित युधिष्ठिरके अश्वमेध यज्ञमें अधिष्ठित होवें।" हे नरनाथ! मैं भाईकी आज्ञानुसार तुम्हें न मारूंगा; जो किया है, वह यहांतक ही हुआ, तुम्हें भय नहीं है, तुम उठके कुशलपूर्व्वक गमन करो। उपस्थित चैती पूर्णिमामें बुद्धिमान धर्म्मराजका अश्वमेध यज्ञ होगा, उस समय तुम वहां गमन करना।

अनन्तर भगदत्तका पुत्र राजा बज्रदत्त अर्जुनके द्वारा निर्ज्जित तथा उनका ऐसा वचन सुनके बोला, कि 'वही होगा।'

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! अनन्तर मरनेसे बचे हुए सिन्धुराजवंशियोंके सङ्ग अर्जुनका युद्ध होने लगा। सिन्धुराजगण श्वेताश्व अर्जुनको राज्यमें आया हुआ सुनके असहाता पूर्व्वक युद्ध करनेके लिये उनके सामने आये। उन सिन्धुराजगणने निज राज्यके बीच विषसदृश घोड़ेको पकड़ लिया, भीमसेनके भाई अर्जुनसे भयभीत न हुए। उस महाक्रमी राजाओंने पहले शरनिकृत होनेसे जिगीषाके वशमें होकर अर्जुनके समीप जाकर यज्ञीय अश्वके अनुगामी पदातिरूपसे स्थित धनुष्पाणि धनञ्जयको घेर लिया। उन लोगोंने युद्धमें अपना अपना नाम गोत्र और विविध कर्म्म कहके बाणोंकी वर्षासे इन्द्रपुत्र अर्जुनको छिपा दिया। राजाओंने युद्धमें जयकी अभिलाषा करके वारणनिवारण बाणोंको चलाते हुए कुन्तीपुत्र धनञ्जयको घेरा; वे बीर लोग रथपर चढ़के पैदलस्थित श्यामवर्ण शरीरसे युक्त उग्र-कर्म्म करनेवाले अर्जुनको देखकर सब कोई एकबारही युद्ध करने लगे। अनन्तर उन लोगोंने निवात कवचान्तक संसप्तकोंके नायक सैन्धव संहारकारी अर्जुनको घायल किया।

हे कौरव! युद्धमें सव्यसाचीके हाथसे सिन्धु-राज जयद्रथका वध स्मरण करके वे लोग एक हजार रथ और दश हजार घोड़ोंके द्वारा अर्जुनको घेरकर अत्यन्त हर्षित हुए। अनन्तर जब वे लोग अर्जुनकी भांति बाणोंकी बरसाने

लगी, उस समय अर्ज्जुन उनके बाणोंसे छिपकर इस प्रकार शोभित हुए जैसे बादलोंके बीच सूर्य्य शोभित होता है। हे भारत! वह बाणोंसे छिपकर पक्षरान्तर-सञ्चारी शकुनकी भांति शोभायमान हुए; अनन्तर कुन्तीपुत्रके बाणोंसे अति पीड़ित होनेपर त्रिलोकवासी सब प्राणी हाहाकार करने लगे और सूर्य्य तेजरहित होगया। हे महाराज! उस समय रोएंको खड़ा करनेवाला वायु बहने लगा, राहुने एक ही समयमें चन्द्रमा सूर्य्यको ग्रास किया, उल्का-समूहसे सूर्य्य सब प्रकारसे छिप गया, कैलाश-गिरि कांपने लगा और सप्तर्षि तथा देवर्षि लोग दुःखित तथा शोकार्त्त होकर अत्यन्त गर्म्म श्वास छोड़ने लगे। अनन्तर आकाशसे चन्द्रमंडल गगनमण्डलको भेदकर पतित हुआ, सब दिशा धूएंसे परिपूरित होनेसे विपरीत बोध होने लगीं, रासभारुणवर्ण विशिष्ट धनुष और बिज-लीयुक्त सब बादल आकाशमंडलमें भ्रमण करते हुए मांस और रुधिरकी वर्षा करने लगे। हे भरतर्षभ! जब वीरश्रेष्ठ धनञ्जय बाणोंकी वर्षासे छिप गये, तब इसही प्रकार अनेक भांतिकी अद्भुत घटना होने लगीं। अर्ज्जुनके शरजालसे छिपनेपर मोहवशसे उनके हाथसे गांडीव और हाथके रोदेकी चोटको रोकनेवाली चर्म्मपट्टिका गिर पड़ी, महारथ अर्ज्जुनके मूर्च्छित तथा चेत रहित होनेपर भी सिन्धुराजगण उनके ऊपर शीघ्र शरजाल छोड़नेसे निवृत्त न हुए। तब द्युलोक-वासी देवतावृन्द अर्ज्जुनको मूर्च्छित जानकर त्रासित चित्तसे उनके निमित्त शान्ति करनेमें प्रवृत्त हुए और देवर्षि, ब्रह्मर्षि तथा सप्तर्षिवृन्द बुद्धि-मान अर्ज्जुनके लिये विजयरूप जप करने लगे।

हे राजन्! तिसके अनन्तर देवताओंके द्वारा तेजसे प्रदीप्त होनेपर वह परमास्त्रवेत्ता बुद्धिमान अर्ज्जुनने युद्धमें अचलकी भांति निवास किया। फिर उनके दिव्य धनुषको कर्षण करते रहनेपर उसका बार बार महान् शब्द होने लगा। अनन्तर जैसे इन्द्र जल बरसते हैं, वैसेही अर्ज्जुन दिव्य धनुषके द्वारा विरुद्धाचारी शत्रु-ओंके ऊपर बाणोंको वर्षा करने लगे। जैसे वृक्ष समूह शलभ समूहसे परिपूरित होते हैं, वैसे ही राजाके सहित सिन्धुदेशीय योद्धा लोग अर्ज्जुनके बाणोंसे छिपकर अदृश्य हुए; सैन्धव-गण उनके शब्दसे त्रासित, भयार्त्त और शोकार्त्त होकर आखोंसे आंसू बहाते हुए इधर उधर होने लगे। हे महाराज! बलवान अर्ज्जुन शर-जालसे सैन्धव वीरोंको परिपूरित करते हुए अलात चक्रकी भांति भ्रमण करने लगे। शत्रु-घाती धनञ्जय वज्रधारी महेन्द्रकी भांति सब दिशाओंमें इन्द्रजाल सदृश बाणजाल चलाया। हे महाराज! कौरवेन्द्र धनञ्जय बाणवृष्टिके द्वारा मेघजाल सदृश सैन्धव-वीरोंकी सब सेना विदारित करते हुए शरदकालके सूर्य्यसमान सुशोभित हुए।

७७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर गांडीवधारी दुर्द्धर्ष अर्ज्जुन युद्धके निमित्त रण-भूमिमें उपस्थित होकर हिमाचलकी भांति प्रकाशित हुए; तब सैन्धवी सेना अधिक संर-म्भके सहित फिर युद्धमें उपस्थित होकर बाणोंकी वर्षा करने लगी।

महाबाहु कुन्तीपुत्र मुमूर्षु सैन्धवोंगणको फिर युद्धमें उपस्थित होते देखकर हंसते हुए यह मधुर वचन बोले, कि तुम लोग समधिक शक्तिके अनुसार युद्ध करके मुझे जीतनेके लिये यत्न करो और सब कार्य्य उत्तम रीतिसे पूरा करो; तुम लोगोंको महान् भय उपस्थित हुआ है। मैं अकेलाही शरजाल निवारण करके तुम लोगोंके साथ युद्ध करता हूं, तुम लोग युद्धमना होकर थोड़े समयतक स्थिर रहो, मैं शीघ्रही तुम लोगोंका घमंड तोड़ दूंगा।

हे भारत! अर्ज्जुन इतनी बात कहके उस

समय जेठे भाईने जो कहा था, कि हे तात! युद्धमें जिगीषु क्षत्रियोंको न मारना, केवल जय करना उसे स्मरण करके ऐसी चिन्ता करने लगे, कि राजेन्द्र धर्म्मराजने नरहत्या करनेको निषेध किया है, वह शुभवचन किस प्रकार मिथ्या न होगा! यदि राजा लोग मुझे न मारें, तभी उनकी आज्ञा प्रतिपालित होगी; पुरुषश्रेष्ठ अर्ज्जुन ऐसाही विचार करके उन युद्धदुर्म्मद सैन्धव वीरोंसे बोले, कि जिससे तुम लोगोंका कल्याण होगा, मैं तुमसे वह वचन कहता हूं; तुम लोग मेरे समीप हार मानके मेरे शरणागत होनेसे मैं तुम्हें न मारूंगा, तुम लोग मेरा यह वचन सुनके अपने हितका उपाय करो। यदि इसके विपरीत कार्य्य करोगे तो मेरे बाणोंसे पीड़ित होकर अत्यन्तक्लेश पाओगे।

कुरुपुङ्गव अर्ज्जुन उन वीरोंसे इतना वचन करके अत्यन्त क्रुद्ध विजयकी इच्छा करनेवाले सैन्धवोंके सङ्ग क्रोध पूर्व्वक युद्ध करने लगे। हे महाराज! उस समय सैन्धवगण गांडीवधारी अर्ज्जुनके ऊपर सैकड़ों तथा सहस्रों नतपर्व्व बाण चलाने लगे, अर्ज्जुनने अपने चोखे बाणोंसे उनके समागत विषैले सर्प्प सदृश विषसे बुझे हुए बाणोंको आकाशमें ही काटके गिरा दिया फिर उन्होंने युद्धमें चोखे बाणोंसे सैन्धवोंके कङ्कपत्रयुक्त शिलापर घिसे हुए बाणोंको शीघ्र ही काटके उन्हें वेधने लगे। अनन्तर सिन्धुराजगण जयद्रथके बधका वृत्तान्त स्मरण करके फिर अर्ज्जुनके ऊपर प्रास और शक्ति चलाने लगे महाबली अर्ज्जुनने सैन्धवोंके प्रास और शक्तिको आकाशमें ही काटके उनके सङ्कल्पको व्यर्थ करके आक्रोश प्रकाश किया और जयकी इच्छा करनेवाले समागत सैन्धव वीरोंका सिर सन्नत पर्व्व भल्लास्त्रके द्वारा काटके गिराने लगे। उन लोगोंके लौटने और फिर वेगपूर्व्वक अर्ज्जुनके सामने आते रहनेपर परिपूर्ण समुद्रकी भांति तुमुल शब्द उत्पन्न हुआ। उस समय वे लोग अमित तेजस्वी अर्ज्जुनके द्वारा घायल होके शक्ति और उत्साह पूर्व्वक उनके सङ्ग युद्ध करने लगे। अनन्तर वे लोग बाहन तथा समस्त सेनाके सहित युद्धमें अर्ज्जुनके बाणोंकी चोटसे थककर चेत रहित होगये।

अनन्तर धृतराष्ट्रकी पुत्री दुःशला सिन्धुराजगणको पीडित समझकर सेनामें शान्तिके लिये नाती सुरथपुत्रके सहित रथपर चढ़के अर्ज्जुनके समीप जाकर आर्त्तस्वरसे रोने लगी, धनञ्जयने उसे देखकर धनुष परित्याग किया। अर्ज्जुन धनुष परित्याग करके सम्मानपूर्व्वक भगिनी दुःशलासे बोले, कहो मैं कौनसा कार्य्य करूं? तब दुःशला उनसे बोली, हे भरतश्रेष्ठ! तुम्हारा स्वस्रीयात्मज शिशु तुम्हें प्रणाम करता है, हे पुरुषश्रेष्ठ पार्थ! तुम इसकी ओर कृपादृष्टि करो। हे राजन्! अर्ज्जुनने दुःशलाका ऐसा वचन सुनके पूछा, कि इसका पिता कहां है? ऐसा पूछनेपर दुःशला उससे कहने लगी, इस बालकका पिता पितृशोकसे सन्तापित तथा आर्त्त होकर जिस प्रकार विषादपूर्व्वक पञ्चत्वको प्राप्त हुआ है, वह मेरे निकट सुनो।

हे अनघ! उस सुरथने तुम्हारे हाथसे पिताका मरना तथा घोड़ेका अनुसरण करते हुए युद्धके लिये तुम्हारा यहांपर आना सुनकर पिताके मृत्युजनित दुःखसे अत्यन्त आर्त्त होकर प्राण परित्याग किया है। हे प्रभु! मेरा सुरथ यह सुनके कि विभत्सु आये हैं, तथा तुम्हारा नाम सुनकर शोकसे अत्यन्त आर्त्त होकर पृथ्वीपर गिरके मर गया। हे पार्थ! मैं पुत्रको वहांपर गिरा तथा मरा हुआ देखकर उसके पुत्रको लेकर आज तुम्हारे शरणमें आई हूं। वह धृतराष्ट्रकी पुत्री दीना दुःशला आर्त्तस्वरसे ऐसा ही कहके आंसू बहाते हुए दीनभावसे स्थित सिर नीचा किये हुए अर्ज्जुनसे फिर कहने लगी। हे धर्म्मज्ञ! उस कुरुराज दुर्य्योधन और जयद्रथको भूलकर स्वसा तथा स्वस्रीय पुत्रको

कृपापूर्व्वक देखकर तुम्हें दया करनी योग्य है। हे कुरुकुल धुरन्धर! परवीरघाती परीचित जिस प्रकार अभिमन्युसे उत्पन्न हुआ है, मेरा यह महाभुज पौत्रभी उस ही भांति सुरथके द्वारा जन्मा है। हे पुरुषश्रेष्ठ! मैं उस पौत्रको लेकर सब सेनाकी शान्तिके लिये तुम्हारे निकट आई हूं। हे महाबाहो! यह मन्दसुर-पुत्र तुम्हारे समीप आया है, तुम इसपर अनुग्रह करो। हे अरिदमन! यह बालक शान्तिके लिये सिर नीचा करके तुम्हारे समीप यह प्रार्थना करता है; कि तुम शान्त होजाओ। हे पार्थ! इस बान्धवरहित अज्ञ बालकके ऊपर कृपा करो, इसपर क्रुद्ध न होना। धर्म्मज्ञ उस अनार्य्य अत्यन्त अपराधी नृशंस इस बालकके पितामहको भूलकर तुम्हें इसके ऊपर प्रसन्न होना उचित है। जब दुःशला करुणायुक्त ऐसा वचन बोली, तब धनञ्जय राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी देवीको स्मरण करके दुःख तथा शोकसे अत्यन्त आर्त्त होकर क्षत्रधर्म्मकी निन्दा करते हुए कहने लगे, कि उस क्षुद्रचित्तवाले राज्यलोभी मानी दुर्य्योधनको धिक्कार है, उसहीके कारण ये सब बान्धव मेरे द्वारा यमलोकमें गये हैं। अर्जुनने इसी भांति बहुतसे सान्त्व वाक्य कहके बालकपर कृपा प्रकाशित करके प्रीतिपूर्व्वक दुःशलाको अभिनन्दित करके गृह-पर भेजा। शुभानना दुःशला भी उस सेनाको युद्धसे लौटाकर अर्जुनको प्रणाम करके गृह-पर गई। धनञ्जयने इसही प्रकार सैन्धव वीरोंको जीतकर कामचारी घोड़ेका अनुसरण किया। जैसे पिनाकी महादेवने आकाशमें हरिनका अनुसरण किया था, उस ही भांति महाप्रतापी तेजस्वी वीर अर्जुन उस यज्ञीय अश्वका अनुगमन करने लगे। वह यज्ञका घोड़ा पुरुषश्रेष्ठ अर्जुनके कर्म्मको बर्द्धित करते हुए इच्छानुसार क्रमसे सब देशोंमें विचरने लगा। हे पुरुषर्षभ! वह घोड़ा इस ही प्रकार पृथ्वीमें विचरते हुए धीरे धीरे पार्थके सहित मणिपुरपतिके देशमें उपस्थित हुआ।

७८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा बभ्रुवाहन पिता अर्जुनकी आगमनवार्त्ता सुनके ब्राह्मण और अर्थ उपहार आगे करके विनीत भावसे उनके समीप उपस्थित हुए। मणिपुरेश्वर बभ्रु-वाहनके इस प्रकार समीप आनेपर बुद्धिमान अर्जुनने क्षत्रधर्म्मको स्मरण करके उसे अभिनन्दित न किया; बल्कि वह धर्म्मात्मा अर्जुन क्रोधपूर्व्वक उससे बोले, कि तुम्हारी प्रक्रिया युक्तियुक्त नहीं हुई, तुम क्षत्रधर्म्मके बाहिर हो, मैं युधिष्ठिरके यज्ञीय घोड़ेकी रक्षा करते हुए तुम्हारे राज्यमें आया हूं, तुम किस निमित्त मेरे सङ्ग युद्ध नहीं करते हो? हे दुर्बुद्धि! तू क्षत्रियधर्म्मके बाहिर हुआ है, मेरे युद्धके लिये उपस्थित होनेपर जब तू युद्ध न करके सामके द्वारा प्रतिग्रह करता है, तब तुझे धिक्कार है। हे दुर्म्मति मैं युद्धके लिये यहांपर आया हूं, तू स्त्रियोंकी भांति मुझे प्रतिग्रह करता है; हे नराधम! यदि मैं शस्त्ररहित होकर तेरे पास आता, तो तेरा ऐसा कार्य्य युक्तियुक्त होता। पन्नगपुत्री उलूपी पतिके द्वारा पुत्रबभ्रुवाहनका ऐसा तिरस्कार होना जानके पातालको भेद-कर पुत्रके निकट आई। हे प्रभु! उलूपीने युद्धकी इच्छा करनेवाले पिताके द्वारा बारबार तिरस्कृत विमर्ष सिरनीचा करके खड़े हुए पुत्र बभ्रुवाहनको देखा। अनन्तर वह मनोहराङ्गी उरगपुत्री उलूपी धर्म्मविशारद पुत्रके समीप आके उससे धर्म्मयुक्त वचन बोली, कि मैं पन्नगकन्या उलूपी हूं, तुम मुझे अपनी माता जानो। हे पुत्र! मैं जो कहती हूं, वैसा करनेसे तुम्हें परम धर्म्म होगा। हे तात! तुम इस युद्ध दुर्म्मद कुरुश्रेष्ठ पिताके सङ्ग युद्ध करो, तो ये तुम्हारे ऊपर निश्चय ही प्रसन्न होंगे।

हे भरतश्रेष्ठ ! महातेजस्वी राजा बभ्रुवाहनने माताका ऐसा वचन सुनके क्रुद्ध होकर युद्ध करनेमें चित्त लगाया । अनन्तर वह सुवर्णसे बने हुए प्रभायुक्त वर्म्म और शिरस्त्राण पहरकर एक सौ तूणीर युक्त युद्धकी सब सामग्रियोंसे पूरित मनके समान वेगगामी उत्तम घोड़ोंसे युक्त रथपर चढ़ा । राजा बभ्रुवाहनने चक्र और उपस्करणयुक्त परम शोभायमान, सुवर्ण कलशसे परिस्कृत परम पूजित, बहुत ऊंचा, सिंहध्वजाविशिष्ट सोनेके बने हुए रथपर चढ़के पार्थके निकट गमन किया । तिसके अनन्तर वीरश्रेष्ठ बभ्रुवाहनने यज्ञीय घोड़ेके निकट जाकर अश्वविद्याविशारद पुरुषोंके सहारे उस घोड़ेको ग्रहण किया । अर्ज्जुनने घोड़ेको बभ्रुवाहनके द्वारा पकड़ा हुआ देखकर प्रसन्नचित्तसे पृथ्वीपर खड़े होकर रथमें चढ़े हुए पुत्रको निवारित किया । राजा बभ्रुवाहनने युद्धमें विषैले सर्पसदृश विषके बुझे हुए बाणोंसे वीर अर्ज्जुनको पीड़ित किया । इस ही प्रकार देवासुर संग्रामकी भांति उन प्रियमाण पितापुत्र दोनोंका तुमुल संग्राम होने लगा । अनन्तर बभ्रुवाहनने हंसकर अर्ज्जुनके जत्रुस्थानमें आनतपर्व्व बाण मारा, वह बाण बिलमें घुसनेवाले सर्पकी भांति पंखके सहित अर्ज्जुनके शरीरमें घुस गया । उस समय उस बाणके कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनके शरीरको भेदकर पृथ्वीमें प्रविष्ट होनेपर द्युतिमान धनञ्जय अत्यन्त पीड़ायुक्त होके तेजको सम्भालकर दिव्य धनुष अवलम्बन करके प्रमत्तकी भांति अचेत हुए । अनन्तर महातेजस्वी इन्द्रपुत्र पुरुषश्रेष्ठ अर्ज्जुनने सावधान होकर पुत्रसे कहा, हे तात चित्राङ्गदापुत्र महाबाहो बभ्रुवाहन ! तुम्हें धन्य हो । हे पुत्र ! मैं तुम्हारा ऐसा कर्म्म देखकर परम प्रसन्न हुआ । हे पुत्र ! तुम क्षणभर युद्धमें स्थित रहो, मैं तुम्हारे ऊपर बाणोंको छोड़ता हूं । शत्रुघाती अर्ज्जुन इतनी बात कहके बाण बरसाने लगे, राजा बभ्रुवाहनने भल्लके सहारे गाण्डीवसे छूटे हुए उन वज्रसदृश बाणोंको दो दो खण्ड करके काटके गिरा दिया । अर्ज्जुनने दिव्य बाण और क्षूरखसे बभ्रुवाहनके रथकी सुवर्णतालसदृश सोनेसे बनी हुई ध्वजा काट दी और हंसके उसके महाकाय घोड़ोंको मारके प्राणरहित कर दिया । राजा बभ्रुवाहन अत्यन्त क्रुद्ध होकर पैदल ही पिताके सङ्ग युद्ध करने लगा । इन्द्रपुत्र पार्थप्रवर अर्ज्जुनने पुत्रके विक्रमसे परमप्रसन्न होकर उसे अत्यन्त पीड़ित किया । अनन्तर बभ्रुवाहनने बाल स्वभावसे शिकलकारी हुई उत्तम पङ्खवाली पवीसे पिताका हृदय बिद्ध किया, वह बाण पाण्डवके मर्म्मस्थलको भेदकर प्रविष्ट होनेसे अत्यन्त दुःखदायक हुआ । हे महाराज ! कुरुनन्दन अर्ज्जुन पवीसे अत्यन्त बिद्ध होनेपर अत्यन्त विमोहित होकर पृथ्वीमें गिर पड़े । कुरुकुलधुरन्धर धनञ्जयके गिरनेपर चित्राङ्गदापुत्र बभ्रुवाहन भी युद्धमें पिताको मरा हुआ देखकर शर संयम करके मृत्युको प्राप्त हुआ । अर्ज्जुनने भी पहले बाणोंसे उसे अत्यन्त ही बिद्ध किया था, इसलिये वह भी युद्धमें पृथ्वीपर गिर पड़ा । मणिपुर पतिकी माता चित्राङ्गदा पति और पुत्रको मरके पृथ्वीपर गिरे हुए देखकर अत्यन्त त्रासित होकर रणभूमिमें आई और पतिको मरा हुआ देखके बहुतही कांपती हुई शोक सन्तप्त हृदयसे रोदन करने लगी ।

७९ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज ! वह कमलनयनी चित्राङ्गदा दुःखसे सन्तापित होकर बहुत ही विलाप करती हुई विमोहित होकर पृथ्वीमें गिरी । क्षणभरके अनन्तर वह मनोहराङ्गी चित्राङ्गदा देवी सावधान होकर पन्नगपुत्री उलूपीको देखकर बोली, हे

उलूपी! यह देखो तुम्हारे ही कारणसे मेरे बालक पुत्र बभ्रुवाहनके द्वारा समिञ्जय स्वामी युद्धमें मरके सोये हुए हैं। हे उलूपी! तुम धर्म्म जाननेवाली तथा पतिव्रता स्त्रियोंमें मुख्य हो, तुम्हारे ही कारणसे पति रणमें मरके पड़ा हुआ है, यदि अर्ज्जुन तुम्हारा अनेक अपराध किये हों, तौभी मैं तुम्हारे समीप प्रार्थना करती हूं, कि तुम क्षमा करके उन्हें जीवित करो। हे आर्य्ये! तुम तीनों लोकके बीच धर्म्म जाननेवाली कहके विदित हो, तौभी पुत्रके हाथसे पतिकी मरणके शोक नहीं करती हो? हे पन्नगनन्दिनी! मैं अपने पुत्रके मरनेसे शोक नहीं करती हूं, जिसके निमित्त यह आतिथ्य किया गया, उस पतिहीके लिये शोक करती हूं। यशस्विनी चित्राङ्गदा देवी उरगपुत्री उलूपीसे ऐसा कहके स्वामीके निकट जाके उन्हें कहने लगी। हे प्यारे! आप कुरुकुलके परमप्रिय हैं, आप उठिये। हे महाबाहो! मैं आपका यह घोड़ा परित्याग करती हूं। हे विभु! आपको धर्म्मराजके यज्ञीय घोड़ेका अनुसरण करना योग्य है, आप उस कार्य्यको न करके किस लिये पृथ्वीपर सोये हुए हैं? हे कुरुनन्दन! मेरा प्राण आपके अधीन है, इसलिये आपने प्राणद होके किस प्रकार दूसरेके प्राणका परित्याग किया?

चित्राङ्गदा बोली, हे उलूपी! तुम पृथ्वीतलमें पड़े हुए पतिको भली भांति देखो, तुम पुत्रको इस प्रकार समुत्साहित कर तथा मरवाके शोक नहीं करती हो? यह बालक मृत्युके वशमें होकर पृथ्वीपर सोया रहे, परन्तु लोहितनयन गुड़ाकेश विजय जीवित होवें। हे सुभगे! मनुष्योंका बहुभार्य्यता अपराध कहके परिगणित नहीं होता, तुम सन्देह न करके ऐसा निश्चय बोध करो, कि ये सब स्त्रियोंके स्वामी होते हैं; विधाताने यह नित्य सख्यता उत्पन्न की है, तुम निश्चय जानो, कि तुम्हारी वह नित्य सख्यता बनी रहेगी। तुमने पुत्रके द्वारा पतिका वध कराया है, परन्तु यदि आज मुझे पतिको जीवित न दिखाओगी, तो मैं जीवन परित्याग करूंगी। हे देवि! मैं पति और पुत्रके विरहसे अत्यन्त दुःखी हुई हूं, इस स्थानमें तुम्हारे सामने निश्चय ही योग व्रत अवलम्बन करके प्राण परित्याग करूंगी। हे प्रजानाथ! चैत्रवाहिनी चित्राङ्गदाने पन्नगनन्दिनी सौतसे ऐसा ही कहके योगव्रत अवलम्बन करके मौनभावसे निवास किया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर पतिकी इच्छा करनेवाली चित्राङ्गदा लम्बी सांस छोड़ती और बहुत विलाप करती हुई शोकसे विरत होकर पतिका दोनों पांव पकड़के दीन-भावसे बैठी। अनन्तर बभ्रुवाहनने फिर साव-धान होके रणभूमिमें बैठी हुई माताको देख-कर कहा। जब कि सदा सुख भोगने योग्य मेरी माताने पृथ्वीमें गिरे हुए महावीर पतिका अनुशयन किया है, तब इससे बढ़के और कौनसा दुःख होगा? हाय! माताने मेरे हाथसे युद्धमें मरे हुए शत्रुनाशन सर्व्वशस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ दुर्द्धरणको भांति मृत पतिको देखा है। अहो! बढ़ारस्क महाबाहु पतिको युद्धमें मरा हुआ देखकर इसका दृढ़ हृदय अबतक भी विदीर्ण नहीं होता है? जब मैं और मेरी माता, हम दोनों ही जीवित हैं, तब मुझे बोध होता है, कि इस लोकमें मृत्युकालके बिना उपस्थित हुए किसी प्रकार पुरुषकी मृत्यु नहीं होती। हाय! जब मैं पुत्र होकर सम्मुखमें मारके पिताका सनाह (कवच) काटा है, तब कुरुवीरके इस सुवर्ण-सन्नाहको महा धिक्कार है। हे ब्राह्मणगण! देखिये मेरे पिता महावीर धनञ्जय मेरे द्वारा मरके वीरशय्या पर सोये हैं। यदि ये युद्धमें मेरे हाथसे मारे गये, तब अश्वका अनुसरण करनेवाले इस कुरुप्रधान धनञ्जयको शान्तिके लिये जो सब

ब्राह्मण युधिष्ठिरकी आज्ञासे उनके साथ आये हैं, वे क्यों शान्ति करते हैं? मैं नृशंसकी भांति रणभूमिमें पितृहत्या करके महापापी हुआ हूं, इसलिये आज मुझे इस विषयमें कैसा प्रायश्चित्त करना उचित है, उसके लिये ब्राह्मण लोग आज्ञा करें। जब मैंने अत्यन्त निठुर होकर पितृहत्या की है, तब आज इनका चर्म्म पहरकर इस स्थानमें दुःखपूर्व्वक मुझे बारह वर्ष व्यतीत करना योग्य है। जब मैंने पिताके मस्तक तथा सिरमें बाण मारके इन्हें मारा है, तब मुझे प्रायश्चित्तके लिये और कुछ भी नहीं दीखता है।

हे नागोत्तमपुत्री! देखो मैंने तुम्हारे पतिको मारा है, आज मैंने युद्धमें अर्ज्जुनका बध करके तुम्हारा प्रियकार्य्य किया है। हे शुभे! इसके अनन्तर मैं निज शरीरको धारण करनेमें समर्थ नहीं होता हूं, इसलिये आज ही मैं पितृनिषेवित स्थानमें गमन करूंगा। हे माता! मेरे तथा गाण्डीवधारी अर्ज्जुनके मरनेसे तुम प्रसन्न होओ, मैं सत्यपथ अवलम्बन करके परमात्म-लाभ करूं।

महाराज! दुःख और शोकसे पीड़ित राजा बभ्रुवाहन ऐसा ही कहके जलसे आचमन करके दुःखपूर्व्वक बोला। हे सर्व्वभूत चराचर! तुम लोग मेरी प्रतिज्ञा सुनो; हे माता भुजगोत्तमे! मैं तुमसे सत्य कहता हूं, यदि मेरे पिता विजय न उठेंगे, तो मैं इस रणभूमिमें अपना शरीर सुखा दूंगा। पितृहत्या करनेसे मेरी किसी भांति निष्कृति नहीं है, मैं गुरुबधसे अर्हित होकर निश्चय ही नरकमें गमन करूंगा। पुरुष क्षत्रिय वीरका बध करके एक सौ गऊ दान करनेसे उस पापसे मुक्त होके निष्कृति लाभ कर सकता है, परन्तु मैंने पितृहत्या की है, इसलिये इस समय मेरी निष्कृति होनी दुर्लभ है। ये महातेजस्वी धर्म्मात्मा पाण्डुपुत्र धनञ्जय मेरे पिता और विशेष करके अकेले हैं, इनका बध करनेसे मेरी निष्कृति क्यों होगी? हे नरनाथ! महाबुद्धिमान् धनञ्जयका पुत्र बभ्रुवाहनने ऐसाही कहके आचमन करते हुए योगव्रत अवलम्बन करके मौनभावसे निवास किया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! उस समय पितृशोकसे व्याकुल मणिपुरेश्वर राजा बभ्रुवाहनके मातासहित अनशन व्रत अवलम्बन करके बैठनेपर उलूपीने सञ्जीवन मणिका ध्यान किया, ध्यान करते ही वह पन्नगपरायण मणि उस ही समय वहां उपस्थित हुई। हे कौरव्य! पन्नगराजपुत्री उलूपी उस मणिको लेकर सैनिक पुरुषोंके चित्तको आनन्दित करनेवाले बचन कहने लगी। उलूपी बभ्रुवाहनसे बोली, हे पुत्र! अब शोक परित्याग करके, उठो, जिष्णु, तुम्हारे द्वारा निर्ज्जित नहीं हुए हैं; ये इन्द्रके सहित देवताओं तथा सब पुरुषोंसे अजेय हैं; परन्तु मैंने आज पुरुषश्रेष्ठ तुम्हारे यशस्वी पिताकी प्रीतिके लिये यह मोहनी माया दिखाई है। तुम्हें पुत्र समझके तुम्हारा बल जाननेके लिये ये शत्रुनाशन अर्ज्जुन तुम्हारे सङ्ग युद्ध करनेके लिये आये थे। हे पुत्र! इस ही लिये मैंने तुम्हें युद्ध करनेके लिये भेजा था, इस निमित्त इस विषयमें तुम तनिक भी पापकी आशङ्का मत करो। हे प्रभु! ये महात्मा पुराणऋषि शाश्वत तथा अक्षर हैं; हे पुत्र! इसलिये इन्द्र भी इन्हें युद्धमें जय नहीं कर सकते। हे प्रजानाथ! जो सदा, बार बार मृत पन्नगोंको जीवित करती है, मैंने उस मणिको मंगाया है, हे प्रभु! तुम इस मणिको लेकर अपने पिताके वक्षस्थलपर रखनेसे इन्हें जीवित देखोगे।

अनन्तर पापरहित अमित तेजस्वी बभ्रुवाहनने उलूपीका ऐसा बचन सुनके पितृस्नेहके वशमें होकर शीघ्र ही अर्ज्जुनके वक्षस्थलपर उस मणिको रक्खा। वह मणि अर्ज्जुनके वक्षस्थलपर रखते ही वीरवर प्रभु जिष्णु जीवित

होकर बहुत समयके सोये हुए पुरुषकी भांति लोहित नेत्र मार्ज्जन करते हुए उठे। तब बभ्रुवाहन महात्मा मनस्वी पिताको उठते तथा सावधान होते देखकर उनकी स्तुति करने लगा।

हे प्रभु! लक्ष्मीवान पुरुषश्रेष्ठ पार्थके फिर उठनेपर इन्द्र दिव्य तथा पुण्य गन्धयुक्त फूलोंकी वर्षा करने लगे। आकाशमें बादलकी भांति गम्भीर शब्दसे दिव्य दुन्दुभिका शब्द तथा ऊंचे स्वरसे साधुध्वनि प्रकट हुई। अनन्तर महाबाहु धनञ्जयने सब भांतिसे आश्वस्त होकर उठके बभ्रुवाहनको आलिङ्गन करके उसका मस्तक सूंघा। फिर कुछ दूरपर उलूपीके सङ्ग स्थित शोककर्षित बभ्रुवाहनकी माता चित्राङ्गदाको देखकर उससे पूछने लगे। हे शत्रुनाशन पुत्र! इस रणभूमिमें सब लोगोंको शोकसे विस्मित तथा हर्षित देखता हूं, इसका क्या कारण है। यदि तुम जानते हो, तो मुझसे कहो। तुम्हारी माता चित्राङ्गदा और नागेन्द्रपुत्री उलूपी किस लिये रणभूमिमें आई है? मेरे कहनेके अनुसार तुमने यह युद्ध किया था, उसे मैं जानता हूं; परन्तु स्त्रियोंके आनेका कारण जाननेकी इच्छा करता हूं। तब मणिपुरपति विद्वान् बभ्रुवाहन अर्जुनका ऐसा वचन सुन सिर झुकाकर उन्हें प्रसन्न करके बोला,—आप इस उलूपीसे सब वृत्तान्त पूछिये।

८० अध्याय समाप्त।

अर्जुन बोले, हे कौरवकुलनन्दिनि! तुम मणिपुरके राजा बभ्रुवाहनकी जननी होकर किस लिये रणभूमिमें आई हो? हे चपलाङ्गि भुजगात्मजे! क्या तुम इस राजा बभ्रुवाहनकी कुशलकामना करती हो? अथवा मेरे मङ्गलकी इच्छा करती हो? हे पृथुल श्रोणि प्रियदर्शन! मैंने अथवा बभ्रुवाहनने बिना जाने तुम्हारे विषयमें कुछ अप्रिय आचरण तो नहीं किया है? इस वरारोहा राजपुत्री तुम्हारी सौत चित्र वाहिनी चित्राङ्गदाने तुम्हारा कोई अपराध तो नहीं किया?

उरगराजपुत्री उलूपी अर्जुनका वचन सुनकर हंसके उनसे बोली। आप बभ्रुवाहन अथवा बभ्रुवाहनकी जननी प्रेष्यकी भांति स्थित यह चित्राङ्गदा, आपलोगोंमेंसे किसीने भी मेरा कुछ अपराध नहीं किया है; परन्तु मैंने जो कुछ जिस प्रकार किया है, मेरा वह समस्त कार्य्य सुनिये। हे विभु! मैं सिर नीचा करके आपको प्रणाम करती हूं, आप मुझपर क्रोध न करिये। हे कौरव्य! मैंने आपकी प्रीतिके लिये ऐसा किया है। हे महाबाहो! पहले जो घटना हुई थी आप उसे पूरी रीतिसे सुनिये। हे धनञ्जय! आप जो महाभारत युद्धमें अधर्माचरण करके शान्तनुपुत्र भीष्मको मारके पापग्रस्त हुए थे, आज उस पापसे तुम्हारा निस्तार हुआ। हे वीरवर! आप सामने लड़के भीष्मका वध न कर सकते, इसी लिये शिखण्डी युक्त रथको अवलम्बन करके उनका वध किया। यदि आप उसकी शान्ति न करके जीवन परित्याग करते, तो निश्चय ही आपको उस कर्म्मरूपी पापसे नरकमें गिरना होता। हे महाबुद्धिमान पृथ्वीनाथ! भीष्मके मरनेपर गङ्गा और वसुगणने यही शान्ति की थी, इस ही लिये पुत्रके हाथसे आपको पीड़ा प्राप्त हुई। हे राजन्! पहले शान्तनुपुत्रके मरनेपर वसुगणने गंगाके तटपर आके जिस समय आपको शाप दिया था, उस समय मैंने इस विषयको सुना था; वसुगण महानदी भागीरथीके निकट आके सब कोई एकत्रित होकर उससे यह घोर वाक्य बोले, हे भाविनि! सव्यसाचीने रणभूमिमें युद्ध न करके दूसरेके सङ्ग मिलके शान्तनुपुत्र भीष्मको मारा है; इस ही लिये आज हम लोगोंने धनञ्जयको शापयुक्त किया; भागीरथी गङ्गा इतना वचन सुनके बोली, कि 'ऐसा ही होवे।' मैंने वह वृत्तान्त पिताको सुनाकर

व्यथितचित्तसे गृहमें प्रवेश किया, पिता भी सुनके परम शोकित हुए; अनन्तर पिताने वसुओंके निकट जाकर उन्हें बार बार प्रसन्न करके आपके निमित्त प्रार्थना की। तब वे लोग मेरे पितासे बोले,—हे महाभाग! उसका पुत्र मणिपुरका राजा युवा बभ्रुवाहन जब रणभूमिके बीच उसे बाणसे मारके पृथ्वीपर गिरावेगा, तब वह आपसे मुक्त होगा, देवराज भी युद्धमें आपको पराजित नहीं कर सकते; परन्तु आत्मा पुत्ररूपसे उत्पन्न होता है, इस ही लिये उस पुत्रके द्वारा आप पराजित हुए हैं। हे विभु! इस विषयमें मेरा कुछ भी दोष नहीं हो सकता; परन्तु आप इस विषयको कैसा समझते हैं, उसे मैं नहीं कह सकती।

अर्ज्जुन उलूपीका ऐसा बचन सुनके उससे प्रसन्नचित्तसे बोले, हे देवि! तुमने जो कुछ किया, वह सब मुझे प्रिय बोध हुआ है। धनञ्जय उलूपीसे ऐसा कहके चित्राङ्गदाके सम्मुख मणिपुरपति अपने पुत्र बभ्रुवाहनसे बोले, हे पुत्र! आगामी चैती पूर्णिमामें युधिष्ठिरका अश्वमेध यज्ञ होगा, तुम दोनों माता और मन्त्रियोंके सहित वहां गमन करना, बुद्धिमान राजा बभ्रुवाहनने पार्थका ऐसा बचन सुनके आंखोंमें आंसू भरके पितासे कहा। हे धर्म्मज्ञ! आपकी आज्ञानुसार मैं अश्वमेध महायज्ञमें जाकर द्विजातियोंका परिवेषक हूंगा। हे धार्म्मिकश्रेष्ठ! परन्तु आप कृपा करके अपनी इन दोनों भार्य्याओंके सहित निज पुरीमें प्रवेश करिये, इसमें कुछ भी विचार न करिये। हे प्रभु! निज भवनमें एक रात्रि सुखसे बासकरके दूसरे दिन फिर घोड़ेका अनुगमन करना

कपिध्वज कुन्तीपुत्र धनञ्जय पुत्रका ऐसा बचन सुनके उस चित्राङ्गदानन्दन बभ्रुवाहनसे बोले, हे महाबाहो! मैंने तुम्हारा अभिप्राय मालूम किया; हे पृथुलोचन! परन्तु मैं जिस प्रकार दीक्षित हुआ हूं, उस ही भांति परिभ्रमण करूंगा; मैं इस समय तुम्हारे नगरमें नहीं जा सकता। हे नरेन्द्र! यह यज्ञीय घोड़ा इच्छानुसार बिचरेगा, इसकी गति रोध न होगी; इसलिये घोड़ा न रहनेसे मैंभी नहीं रह सकता, तुम्हारा मङ्गल होवे, अब मैं जाता हूं। भरतसत्तम इन्द्रपुत्र धनञ्जयने वहांपर पुत्रके द्वारा बिधिपूर्व्वक पूजित तथा दोनों भार्य्याओंसे अनुज्ञात होकर घोड़ेका अनुगमन किया।

८१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,—हे महाराज! वह घोड़ा समुद्र सहित पृथ्वीपर भ्रमण करके हस्तिनापुरकी ओर लौटा। अर्ज्जुन भी इच्छानुसार घोड़ेका अनुगमन करते हुए क्रमसे मगधदेशके राजभवनके समीप आये। हे प्रभु! क्षत्रधर्म्ममें स्थित महावीर सहदेवपुत्र मेघसन्धिने अर्ज्जुनको समीप आया हुआ देखकर आह्वान किया। अनन्तर वह रथी धनुष, बाण और तलत्राणधारी मेघसन्धि निज नगरसे निकलकर पदाति अर्ज्जुनके समीप उपस्थित हुआ; महातेजस्वी मेघसन्धि धनञ्जयको पाके बालस्वभावके वशमें होकर अकौशल-पूर्व्वक अर्ज्जुनसे बोला, हे भारत! क्या आप स्त्रियोंके बीच बिचरनेवाले पुरुषकी भांति इस घोड़ेको जगत्के बीच घुमावेंगे? मैं इस घोड़ेको हरता हूं, आप इसके छुड़ानेका यत्न करिये। यद्यपि आपने युद्धमें मेरे पितापितामहगणकी अनुनय नहीं की है, तौभी मैं तुम्हारा रथातिथ्य करूंगा; इसलिये आप मेरे ऊपर प्रहार करिये और मैंभी तुम्हारे ऊपर प्रहार करूं। पाण्डुपुत्र अर्ज्जुन मेघसन्धिका ऐसा बचन सुनके हंसकर उससे बोले, कि बिघ्न करनेवालेकी निवारण करना ही मेरा ब्रत है। हे राजन्! जेठे भाईने मेरे ऊपर यह भार अर्पण किया है, उसे तुम विशेष रीतिसे जानते हो, तुम सामर्थ्यके अनुसार मुझपर प्रहार करो, उससे

मैं क्रुद्ध न हूंगा। मगधेश्वर पाण्डवका ऐसा वचन सुनके वर्षा करनेवाले इन्द्रकी भांति अर्ज्जुनके ऊपर सैकड़ों सहस्रों बाण बरसाने लगा। तब गाण्डीवधारी अर्ज्जुनने गाण्डीवसे छूटे हुए बाणोंसे मगधराजके यत्नपूर्ब्बक चलाये हुए बाणोंको निष्फल कर दिया। हे भरतश्रेष्ठ! कपिध्वज कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन मगधराजके बाणोंको व्यर्थ करके प्रदीप्त मुखवाले सर्पकी भांति प्रज्वलित बाण चलाने लगे, परन्तु अर्ज्जुन मगधेश्वरके शरीर और सारथीके ऊपर बाण न चलाकर उनकी ध्वजा, पताका, दण्ड, रथ, मन्त्र, घोड़ों तथा अन्यान्य रथाङ्गोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे।

मगधेश्वरका शरीर सव्यसाचीके द्वारा रक्षित होनेसे उन्होंने निज वीर्य्यबलसे शरीरको रक्षित हुआ समझकर पार्थके ऊपर बाण चलाया। तब गाण्डीवधारी अर्ज्जुन मगधराजके द्वारा अत्यन्त घायल होकर वसन्तकालमें फूले हुए पलासवृक्षकी भांति शोभित हुए। हे कुरुवंशावतंस! मगधराज अवध्यमान होकर अर्ज्जुनको घायल करके लोकस्थित वीरोंको देखनेके लिये स्थित हुए। सव्यसाचीने बलपूर्ब्बक धनुष खींचकर मगधराजके घोड़ोंको प्राणरहित करके उनके सारथीका सिर काट दिया और क्षुरप्रसे उनके विचित्र धनुष हस्तावाप पताका और ध्वजा काटके पृथ्वीपर गिरा दिया। मगधराज बाणोंसे पीड़ित और घोड़े तथा सारथीसे रहित होकर गदा उठाकर वेगपूर्ब्बक अर्ज्जुनकी ओर दौड़ा; अर्ज्जुनने गिद्धपङ्खयुक्त बाणोंसे उस समागत मगधराजकी सुवर्णभूषित गदाको काटकर कई टुकड़े कर दिया। वह गदा शकलीभूत तथा मणिबन्धनच्युत होकर छूटी हुई व्यालीकी भांति पृथ्वीमें गिरी। मगधराजके रथविहीन तथा धनुष और गदारहित होनेपर समराग्रणी बुद्धिमान अर्ज्जुनने उन्हें फिर पीड़ित करनेकी इच्छा नहीं की, अनन्तर कपिध्वज अर्ज्जुन उस विमनस्क क्षत्रधर्म्ममें स्थित मगधराजको धीरज देते हुए बोले। हे पुत्र! बालक होके युद्धमें तुम्हारे ऐसा महत् कर्म्म करनेसे क्षत्रधर्म्म पर्य्याप्तरूपसे दीख पड़ा, अब लौट जाओ। हे राजन्! राजाओंको मारनेके लिये धर्म्मराज युधिष्ठिरने निषेध किया है, इस ही निमित्त तुम युद्धमें अपराध करके भी जीवित हो।

उस समय मगधराजने अपनेको यथार्थमें ही निराकृत समझके हाथ जोड़के अर्ज्जुनके निकट जाकर उनकी पूजा करके कहा। हे पार्थ! मैं तुम्हारे निकट पराजित हुआ हूं, अब आपके सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा नहीं है, इसके अनन्तर जो करना होगा, उसके लिये आप मुझे आज्ञा करिये, मैं वही कार्य्य करूंगा।

अर्ज्जुन मगधराजको धीरज देके फिर उससे बोले, आगामी चैती पूर्णिमामें राजा युधिष्ठिरका अश्वमेध यज्ञ होगा, उस समय तुम वहांपर जाना।

हे महाराज! सहदेवपुत्र मेघसन्धि अर्ज्जुनका ऐसा वचन सुनके उसे स्वीकार कर वीरश्रेष्ठ अर्ज्जुन और घोड़ेकी विधिपूर्ब्बक पूजा की। अनन्तर वीरकेशरी धनञ्जयने इच्छानुसार समुद्रके तटसे होते हुए क्रमसे वङ्ग, पुण्ड्र और कोशल प्रभृति देशोंमें पुनर्व्वार घोड़ेके पीछे गमन किया। हे महाराज! अर्ज्जुनने गाण्डीव धनुषके सहारे इन सब देशोंमें राजाओंकी स्लेच्छ प्रभृति समस्त सेना जय की।

८२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! श्वेतवाहन अर्ज्जुन मगधराजके द्वारा पूजित होकर दक्षिण देशमें जाकर घोड़ेके सङ्ग विचरने लगे। अनन्तर वह बलवान घोड़ा लौटकर चेदीवालोंकी शुक्ति नामी रमणीय नगरीमें पहुंचा। वहांपर महाबलवान् अर्ज्जुन शिशुपा-

लपुत्र शरभके द्वारा युद्धमें पूजित हुए। फिर वह घोड़ा पूजित होकर काशी, अङ्ग, कोशल, किरात और तङ्गन देशमें गया; कुन्तीपुत्र अर्जुनने वहांपर यथाक्रमसे पूजा प्रतिग्रह करके दशार्ण देशमें गमन किया। वहां बलवान अरिमर्द्दन चित्राङ्गदके सङ्ग अर्जुनका अत्यन्त भयङ्कर युद्ध हुआ।

पुरुषश्रेष्ठ अर्जुन चित्राङ्गदको वशमें करके निषादराज एकलव्यके राज्यमें गये। उस समय एकलव्य पुत्रने युद्ध करके घोड़ा ग्रहण किया, तब अर्जुनके सङ्ग निषादोंका रोएं को खड़ा करनेवाला संग्राम हुआ। अनन्तर युद्धमें दुर्द्धर्ष अपराजित कुन्तीपुत्रने यज्ञमें विघ्न करनेके लिये समागत एकलव्यपुत्रको जय किया। हे महाराज! इन्द्रपुत्र अर्जुन निषादराजके पुत्रको जीतकर उसके द्वारा परमादर पूर्व्वक पूजित होके फिर दक्षिण समुद्रकी ओर गये। वहां द्राविण, अन्ध्र, रौद्रकर्म्मा माहिषक और कालगिरेय लोगोंके सङ्ग किरीटिका युद्ध हुआ था। उन लोगोंको जीतकर घोड़ेके वशवर्त्ती होकर अर्जुनने सुराष्ट्रकी ओर गमन किया, फिर घोड़ा गोकर्णमें पहुंचके प्रभासमें जाकर वहांसे वृष्णि-वीरोंसे पालित रमणीय द्वारकापुरीमें पहुंचा।

कुरुराजके यज्ञीय घोड़ेको द्वारवतीपुरीमें आया हुआ देखकर यादवकुमारगण उसे उन्मथित करने लगे, परन्तु वृष्ण्यन्धकपति उग्रसेनने नगरसे बाहर होकर कुमारोंको निवारण किया। फिर वह किरीटीके मामा वसुदेवके सङ्ग मिलकर कुरुश्रेष्ठ अर्जुनके निकट जाकर प्रीतिके सहित विधिपूर्व्वक परम आदरसे उनकी अभ्यर्थना करते हुए स्थित हुए; तब अर्जुन उन लोगोंसे अनुमति लेकर घोड़ेके पीछे गमन करने लगे। अनन्तर घोड़ा समुद्रके पश्चिम देशमें विचरते हुए क्रमसे पञ्चनदमें गया। हे कौरव्य! घोड़ा उस देशसे इच्छानुसार गान्धार देशमें गया; वहां-पर पहिले वैरके अनुसार गान्धारराज शकुनिके पुत्रके सङ्ग सव्यसाचीका तुमुल संग्राम हुआ।

८३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, गान्धारराज महारथ वीरश्रेष्ठ शकुनिपुत्र पताका, ध्वजा माला हाथी घोड़े और रथयुक्त महासेनाके बीच घिरकर युद्ध करनेके लिये अर्जुनके निकट गया। योद्धाओंने राजा शकुनिके मरनेसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर धनुष ग्रहण करके रणभूमिमें अर्जुनके सामने गमन किया। युद्धमें अपराजित धर्म्मात्मा बीभत्सु अर्जुनने उन लोगोंको युधिष्ठिरका हित वचन सुनाया, उन लोगोंने उस वचनको नहीं माना। जब पाण्डुपुत्र अर्जुनके सान्त्वना वचनसे निवारण करनेपर भी उन लोगोंने उस वचनको न सुनके क्रोधपूर्व्वक घोड़ा पकड़नेके लिये गमन किया, तब अर्जुन क्रुद्ध होकर खिङ्वाड़की भांति गाण्डीवसे छूटे हुए दीप्ताग्र क्षुरके सहारे उनका शिर काटने लगे। हे महाराज! योद्धा लोग अर्जुनके द्वारा घायल तथा बाणोंकी वर्षासे अत्यन्त पीड़ित होकर घोड़ेको छोड़के सम्भ्रमके सहित निवृत्त हुए। अनन्तर पाण्डुपुत्र अर्जुनने फिर गान्धार योद्धाओंके द्वारा एकबारही रोके जानेपर भी बार बार बाण चलाकर उन लोगोंका सिर काटे।

जब अर्जुन युद्धमें गान्धार सेनाको सब भांतिसे संहार करने लगे, तब राजा शकुनिके पुत्रने युद्ध करते हुए पार्थको निवारण किया। क्षत्रधर्म्ममें स्थित राजा शकुनिपुत्रके युद्ध करते रहनेपर अर्जुनने उससे कहा, कि राजा युधिष्ठिरकी आज्ञानुसार राजा लोग मेरे बध्य नहीं हैं; इसलिये अब युद्धकी आवश्यकता नहीं है, और आज तुम्हारी भी पराजय न होवे। जब पार्थने शकुनिपुत्रसे ऐसा कहा, तब वह अज्ञानसे मोहित होकर उस वचनका अनादर करते हुए शक्रसदृश कर्म्मकारी अर्जुनको

बाणोंसे छिपा दिया। अमितात्मा पृथापुत्र अर्जुनने जिस प्रकार जयद्रथका सिर काटा था, उसी भांति कङ्कपत्र विभूषित अर्द्धचन्द्र बाणसे शकुनिपुत्रका शिरस्त्राण हरण किया। गान्धार सेना अर्जुनके उस कार्य्यको देखकर परम विस्मित हुई; अर्जुनने इच्छा रहनेपर भी शकुनिपुत्रका बध नहीं किया; उससे सबने उन्हें राजा कहके बोध किया।

अनन्तर गान्धारराजका पुत्र पलायनपरायण होकर डरे हुए क्षुद्र मृगोंकी भांति उस डरी हुई सेनाके सहित भागा। योद्धाओंके भागनेपर पृथापुत्र अर्जुन सन्नत पर्व्वयुक्त भल्लास्त्रसे उनके सिर काटने लगे। अर्जुनके गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए पृथुल बाणोंसे ऊंचो भुजाओंके कटनेसे किसीकिसीको मालूम हो न हुआ। मनुष्य, हाथी और घोड़ोंके बीच कोई दौड़ने, कोई गिरने तथा कोई विध्वस्त होकर बार बार लोटने लगा। जो सब शत्रु अर्जुनके संग युद्ध करनेमें समर्थ थे उनके मारे जानेपर उस प्रधान कर्म्मी वीरश्रेष्ठ पार्थके सामने कोई भी न दीख पड़ा।

अनन्तर गान्धारराजकी जननी भयभीत होकर वृद्ध मन्त्रियोंके सहित हाथमें उत्तम अर्घ लेकर अर्जुनके निकट गई। वह सावधानचित्तसे युद्धदुर्म्मद पुत्रको संग्रामसे निवारण करती हुई जिष्णु धनञ्जयको प्रसन्न करने लगी। प्रभु विभत्सु पार्थ उसे सम्मानपूर्व्वक प्रसन्न करके शकुनिपुत्रको धीरज देते हुए बोले।

हे महाबाहो! तुमने इस समय जिस बुद्धिके वशवर्त्ती होकर मेरे विरुद्ध युद्ध करनेकी अभिलाष की थी, तुम्हारे संग मेरा भ्रातृसम्बन्ध रहनेसे मैं उससे सन्तुष्ट नहीं हुआ। हे पापरञ्जित राजन्! धृतराष्ट्रके कार्य्य और गान्धारी माताका स्मरण होनेसे ही तुम्हें जीवन लाभ हुआ है, परन्तु तुम्हारे सब अनुचर मारे गये। जो हो, तुम्हारे सहित तथा तुम्हारे संग मेरे वैरकी ममता रही; परन्तु फिर कभी तुम्हारी ऐसी बुद्धि न होवे; तुम आगामी चैती पूर्णिमामें हमारे राजा युधिष्ठिरके अश्वमेध यज्ञमें गमन करना।

८४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्जुन गान्धारराजसे इतनी बात कहके कामविहारी घोड़ेको निवृत्त करके वहांसे चले, घोड़ा भी लौटकर हस्तिनापुरकी ओर चला।

राजा युधिष्ठिर दूतके मुखसे घोड़ेकेसहित अर्जुनके कुशलपूर्व्वक लौटनेकी वार्त्ता सुनाके अत्यन्त हर्षित हुए और गान्धारराज तथा अन्यान्य देशोंमें पराक्रमी अर्जुनको जयका वैसा कर्म्म सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुए।

महातेजस्वी धर्म्मराज युधिष्ठिरने इतने समयके बीच माघी द्वादशी और इष्ट पुष्यनक्षत्र पाके भीमसेन, नकुल और सहदेव प्रभृति भाइयोंको बुलाया, उस समय धार्म्मिकश्रेष्ठ पृथ्वीनाथ युधिष्ठिर महायोद्धा वाग्मिवर भीमसेनको सम्बोधन करके बोले, हे भीम! तुम्हारे भाई धनञ्जय घोड़ेके सहित आरहे हैं, यह सम्वाद मुझसे उनके सेवकोंने आकर कहा है। हे वृकोदर! यही समय उपस्थित है, घोड़ा भी अभिमुखी हुआ है, यही माघी पौर्णमासी है, इसके बाद माघ बीतेगा; इसलिये अश्वमेधको सिद्धि तथा यज्ञस्थान निरूपण करनेके लिये तुम विद्वान वेदपारग ब्राह्मणोंको भेजो।

भीमसेनने ऐसा बचन सुनके राजा युधिष्ठिरकी आज्ञानुसार कार्य्य किया और पुरुष-श्रेष्ठ गुड़ाकेशके आनेको वार्त्ता सुनके अत्यन्त आनन्दित हुए। अनन्तर वृकोदरने यज्ञकर्म्ममें कुशल ब्राह्मणोंको आगे करके बुद्धिमान स्थपति गणके सहित गमन किया। उस कुरुवंशीय भीमसेनने स्थपतिगणोंके सहारे गृहसमूहसे परिपूरित परम शोभित प्रशस्त प्रतोलीयुक्त यज्ञवाटको

विधिपूर्व्वक मापा। अनन्तर सैकड़ों प्रासादोंसे घिरा हुआ उत्तम मणियुक्त सुवर्ण तथा अनेक रत्नोंसे विभूषित कुटिम निर्म्माण कराया। उस गृहके स्तम्भों और बृहत् तोरणोंको सोनेसे चित्रित कराया तथा यज्ञस्थानमें शुद्धकाञ्चन प्रदान करके उस स्थानमें विधानपूर्व्वक अन्तः-पुर और अनेक देशोंसे आये हुए राजाओं तथा ब्राह्मणोंके निमित्त बहुतसे गृह बनाये। फिर उन्होंने राजा युधिष्ठिरकी आज्ञानुसार अक्लिष्ट-कारी राजाओंके पास दूत भेजा; राजा लोग कुरुराज युधिष्ठिरकी प्रियकामनासे बहुतसे रत्न स्त्री, अश्व और अनेक प्रकारके शस्त्र लेकर आये। महात्मा महीपालोंके शिविरोंमें प्रवेश करनेके समय शब्दायमान समुद्रके शब्द समान उन लोगोंके कोलाहलका शब्द आकाशमण्ड-लको स्पर्श करने लगा।

कुरुनन्दन धर्म्मराज राजा युधिष्ठिरने समा-गत राजाओंको उत्तम अन्न जल और उत्कृष्ट शय्या प्रदान करनेके लिये सेवकोंको आज्ञा की और वाहनोंके लिये गृह, धान्य, ऊख तथा दूध प्रदान करनेके लिये आज्ञा दी। बुद्धिमान् धर्म्मराजके उस महायज्ञमें बहुतसे ब्रह्मवादी ब्राह्मण मुनिगण आये। हे पृथ्वीपाल! जो सब द्विजवर शिष्योंके सहित आये, कुरुपतिने उन सबको आदरपूर्व्वक बैठाया। महातेजस्वी राजा युधिष्ठिर दम्भ त्यागके स्वयं सबके गृहपर गये तथा ब्राह्मणों और राजाओंका अनुगमन करने लगे।

अनन्तर स्थपति तथा अन्यान्य शिल्पीगणने यज्ञीय गृहादि तैयार करके धर्म्मराजके समीप सब वृत्तान्त कहा। धर्म्मराज युधिष्ठिर सब कार्य्योंको पूरा हुआ सुनके भाइयोंसे आदरयुक्त तथा अतन्द्रित होकर आनन्दित हुए।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस यज्ञके आरम्भ होनेपर हेतुवादी वाग्मी ब्राह्मणगण आपसमें जिगीषु होकर बहुतसे हेतुवाद कहने लगे। हे भारत! राजालोग देवेन्द्रयज्ञकी भांति भीमसे-नके द्वारा विहित उस उत्तम यज्ञकी विधि और इधर उधर सुवर्णमय तोरणोंको देखने लगे; वहांपर शय्या, आसन, विहार, बहुतसे जलपात्र-घड़े पात्र, कलश और शराव प्रभृति जितनी वस्तु थीं, उन सबको स्वर्णमयके अतिरिक्त अन्य धातुओंको नहीं देखा। राजा लोग इच्छानु-सार विधिपूर्व्वक बने हुए सुवर्णभूषित दारुमय, मन्त्रसंस्कृत यूप तथा वहां आये हुए स्थलज और जलज पशुओंको देखने लगे। वे लोग वहांपर गऊ, महिष, महावृद्धास्त्री, जलजन्तु, श्वापद, पक्षी, जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज पर्व्वतीय और अनूप जात प्राणियोंको देखने लगे। इसही प्रकार राजा लोग पशु, गोधन और धान्यके द्वारा प्रमुदित होकर परम विस्मित हुए। उस यज्ञमें सैकड़ों सहस्रों ब्राह्मण तथा अन्यान्य मनुष्यगण उत्तम रीतिसे बनी हुई बहुमूल्य वस्तुओंको खाने लगे, दिन बीतनेपर बादलके शब्द सदृश शब्दायमान नगाड़ा बार बार बाजने लगा; बुद्धिमान् धर्म्म-राजका यज्ञ इसही भांति वर्द्धित होने लगा।

हे महाराज! उस समय पर्व्वतके सदृश बहु-तसे अन्नके ढेर तथा दही, दूध और घृतके ताला-बोंको देखकर सब कोई विस्मित हुए। हे राजन्! महाराजके महायज्ञमें समस्त जम्बू-द्वीप अनेक जनपदोंसे परिपूरित होनेसे कोई एक स्थानमें रहके देखनेमें समर्थ न हुआ। वहांपर कई जातिके पुरुषोंने अनेक भांतिके पात्रोंको ग्रहण करके गमन किया। उत्तम रीतिसे परिष्कृत मणिमय कुण्डल और माला पहरे हुए सहस्रों पुरुष द्विजातियोंको भोज्य-वस्तु परिवेषण करने लगे। जो सब सेवक आये थे, वे लोग राजभोग्य विविध अन्न और जल ब्राह्मणोंको प्रदान करने लगे।

८५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिरने वेद जाननेवाले ब्राह्मणों और राजाओंको आया हुआ देखकर भीमसेनसे कहा। हे पुरुषश्रेष्ठ! जो ये सब राजा लोग आये हैं, सभी पूजनीय हैं; इसलिये इनकी पूजा करो।

महातेजस्वी भीमसेन यशस्वी नरनाथ युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके यमज नकुल और सहदेवके सहित उन राजाओंकी पूजा करनेमें प्रवृत्त हुए। अनन्तर सर्व्वप्राणिश्रेष्ठ गोविन्द बलदेवको आगे करके सात्यकि प्रद्युम्न गद निशठ शाम्ब और कृतवर्म्मा प्रभृति वृष्णिवंशियोंके सहित धर्म्मराज युधिष्ठिरके निकट आये। महारथ भीमसेनने उन लोगोंकी भी पूजा की और वे लोग भीमसेनके द्वारा पूजित होकर अनेक रत्नोंसे परिपूर्ण गृहके बीच गये।

अनन्तर मधुसूदनने युधिष्ठिरके सङ्ग वार्त्तालाप करके उनके समीप संग्रामकर्षित महाबाहु अर्ज्जुनको उद्देश्य करके अनेक प्रकारके वचन कहे। कुन्तीपुत्र धर्म्मनन्दन जगश्रेष्ठ युधिष्ठिरने अरिदमन देवकीनन्दनसे बार बार स्वागत प्रश्न किया, तब उन्होंने धर्म्मराजसे कहा, हे प्रभु! जिसने संग्राम कर्षित उस पाण्डवश्रेष्ठ धनञ्जयकी रक्षा की थी, वह द्वारकावासी आप्त पुरुष तुम्हारे समीप आये हैं; अब आप अश्वमेध सिद्धिके निमित्त सब कार्य्य करिये।

धर्म्मराज युधिष्ठिर कृष्णका ऐसा वचन सुनके उनसे बोले, हे माधव! वह जिष्णु धनञ्जय मेरे भाग्यसे ही कुशली होकर आये हैं। उस पाण्डव-बलाग्रणी धनञ्जयने इस यज्ञमें जो व्यवस्था की है, उसे तुम्हारे समीप जतानेकी इच्छा करता हूं।

अनन्तर वाग्मिवर वृष्णि और अन्धकपति कृष्ण धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके अर्ज्जुनकी बात स्मरण करके बोले, हे महाराज! अर्ज्जुनने मुझसे यह बात कही है, कि कृष्ण! तुम समयके अनुसार राजा युधिष्ठिरसे मेरा यह वचन कहना, कि 'हे कौरवर्षभ! इस यज्ञमें जो सब महात्मा राजा लोग आवेंगे, उन लोगोंको विशेष करके उनकी पूजा करनी होगी। हे मानद! इसके अतिरिक्त राजाको मेरा यह हित वचन सुनाना, कि जिसमें अर्घप्रदान विषयमें आत्ययिक न हो, वही आप करिये तथा उस विषयमें अनुमति करियेगा। हे महाराज! राजद्वेषके हेतु जिसमें यह प्रजासमूह विनष्ट न होवे"।

हे कौन्तेय! उस पुरुषश्रेष्ठ धनञ्जयने इतना कहके और एक बात जो मुझसे कही है, उसे सुनो; उन्होंने कहा है, मेरा परमप्रिय पुत्र मणिपुरका राजा महातेजस्वी बभ्रुवाहन इस यज्ञमें आवेगा; आप मेरे अनुरोधसे उसका विधिपूर्व्वक समादर करना। हे प्रभु! वह मेरा अत्यन्त भक्त और अनुरक्त है।

धर्म्मराज युधिष्ठिर इतनी बात सुनके उनके उस वचनका अभिनन्दन करते हुए यह वचन कहने लगे।

८६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे कृष्ण! मैंने इस प्रिय वचनको सुना, हे प्रभु! तुम्हारे मुखसे निकली हुई अमृतरस सदृश पवित्र वाणी मेरे चित्तको अत्यन्त आनन्दित करती है। हे हृषीकेश! मैंने सुना है, कि अर्ज्जुन जिन स्थानोंमें गये थे, उन स्थानोंमें राजाओंके सङ्ग उनका फिर बहुत युद्ध हुआ था, बुद्धिमान् पृथापुत्र अर्ज्जुन किस लिये सदा सुखरहित हुआ है, उसे मैं नहीं जानता; इससे मेरा चित्त बहुतही दुःखित होता है। हे जनार्द्दन! मैं निर्ज्जनमें कुन्तीपुत्र धनञ्जयके विषयमें विचार करके देखता हूं, कि वह सदाही दुःख भोग किया करता है। हे कृष्ण! जिन लक्षणोंसे दुःख भोगना होता है, धनञ्जयके सब लक्षणोंसे पूजित शरीरमें क्या वे

अनिष्ट-सूचक लक्षण हैं? सदा अत्यन्त सुख-भोगी कुन्तीपुत्र विभत्सुके शरीरमें मैं तो कुछभी अनिष्ट चिन्ह नहीं देखता? हे कृष्णा! यदि मेरे सुनने योग्य हो, तो मेरे समीप तुम्हें यह विषय कहना उचित है।

भोज राजन्य वर्द्धन हृषीकेश युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके उत्तम महत् उत्तर सोचके राजासे बोले, हे राजन्! पुरुषसिंह धनञ्जयकी पिण्डिका अर्थात् दोनों जानुके नीचे पश्चद्भागीय मांसल स्थानके अतिरिक्त दूसरा कोई अविवित्त लक्षण नहीं मालूम होता। दोनों पिण्डिकाके अधिक रहनेसे ही पुरुषश्रेष्ठ धनञ्जय सदा मार्गमें भ्रमण किया करते हैं; इसके अतिरिक्त जिससे वह दुःखभागी हों, वैसा मैं कोई लक्षण नहीं देखता। तब पुरुष प्रवीर युधिष्ठिर बुद्धि-मान कृष्णका ऐसा वचन सुनके बोले, हे प्रभु! तुमने जो कहा, वही सत्य है।

अनन्तर कृष्णा द्रौपदीने असूयापूर्व्वक कृष्णका दर्शन किया, सखी द्रौपदीके सखा केशिहा हृषीकेशने साक्षात् धनञ्जयकी भांति उसके उस प्रणयको प्रतिग्रह किया। वहांपर जो सब भीम प्रभृति कौरव तथा याजकवृन्द विद्यमान थे, वे लोग अर्जुनकी उस विचित्र शुभ कथाको सुनके आनन्दके सहित क्रीड़ा करने लगे। वे लोग आपसमें अर्जुनकी कथा कह रहे थे, उसी समय महात्मा विजयकी आज्ञासे एक दूत वहांपर उपस्थित हुआ; उस बुद्धिमान दूतने निकटमें जाकर कुरुपति युधिष्ठिरको प्रणाम करके पुरुषश्रेष्ठ अर्जुनके आनेकी वार्त्ता सुनाई। राजाने दूतके उस वचनको सुनके हर्षसे वाष्पकुलनयन होकर प्रिया-ख्यानके निमित्त बहुतसा धन दान किया।

अनन्तर दूसरे दिन कुरुकुल धुरन्धर पुरुष-श्रेष्ठ धनञ्जयके आनेके समय महान् शब्द प्रकट होने लगा। अनन्तर उच्चैःश्रवाकी भांति चारों ओर वर्त्तमान घोड़ोंके पांवकी धूली उड़ी। वहां अर्जुन मनुष्योंका ऐसा हर्षयुक्त वचन सुनने लगे, कि हे पार्थ! तुम भाग्यसे ही कुशलपूर्व्वक लौटे हो; तुम्हें और युधिष्ठिरको धन्य है। अर्जुनके अतिरिक्त ऐसा कोई नहीं है, जो युद्धमें राजाओंको जीतकर समुद्रके सहित पृथ्वीभरमें घोड़ेके सङ्ग घूमके फिर लौट आवे। सगर प्रभृति जो सब राजा होगये, उनका भी हम लोगोंने ऐसा अत्यन्त कठिन कर्म्म नहीं सुना था। हे कुरुकुलश्रेष्ठ! तुमने जो दुष्कर कर्म्म किया है, हम लोगोंको बोध होता है, वैसा कर्म्म भविष्यमें राजा लोग न कर सकेंगे।

धर्म्मात्मा फाल्गुनने उन लोगोंका ऐसा कर्णसु-खकर वचन सुनके यज्ञसंस्तरमें प्रवेश किया, तब मन्त्रियोंके सहित राजा युधिष्ठिर और यदुनन्दन कृष्ण धृतराष्ट्रको आगे करके उनके समीप गये।

धनञ्जयने पिता धृतराष्ट्र और बुद्धिमान धर्म्मराजके दोनों चरण छूके भीम प्रभृतिको पूजाकर केशवको आलिङ्गन किया। महाबाहु अर्जुन उन लोगोंके द्वारा पूजित होके उनकी पुनर्व्वार पूजाकर तटप्राप्त करनेवाले पारगामी पुरुषकी भांति विश्राम करने लगे।

इस ही समय धीमान् राजा बभ्रुवाहन दोनों माताओंके सहित कुरुगणके निकट उप-स्थित हुआ। वहांपर उसने बूढ़े तथा अन्यान्य राजाओंको प्रणाम कर उनसे प्रतिनन्दित होके पितामही कुन्तीके उत्तम गृहमें गया।

८७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाबाहु बभ्रुवा-हनने पाण्डवोंके उत्तम शोभायमान गृहमें प्रवेश करके शान्तभावसे पितामहीको प्रणाम किया। अनन्तर चित्राङ्गदा देवी तथा कौरव्य-नागपुत्री उलूपी दोनोंने एकत्रित होकर विन-यपूर्व्वक पृथा और कृष्णा द्रौपदीको प्रणाम करती हुई सुभद्रा प्रभृति अन्यान्य कुरुस्त्रियोंको न्यायके अनुसार प्रणाम किया।

अनन्तर कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा तथा अन्यान्य कुरुस्त्रियोंने उन्हें विविध रत्न दान किया; वे महामूल्यवान् शय्या तथा आसनपर बैठीं। पार्थकी हितकामनासे कुन्तीने स्वयं उनका उत्तम रीतिसे आदर किया।

इधर महातेजस्वी राजा बभ्रुवाहनने कुरुवृद्धजनोंसे सम्मानित होकर पृथ्वीपति धृतराष्ट्रकी विधिपूर्व्वक पूजा की; फिर राजा युधिष्ठिर और भीमादि पाण्डवोंके निकट जाके उन्हें विनयपूर्व्वक प्रणाम किया। वह पाण्डवोंसे प्रेमके सहित आलिङ्गित तथा सम्मानित हुआ और महारथ पाण्डवोंने परम प्रसन्न होके उसे धन दान किया। अनन्तर पृथ्वीपति बभ्रुवाहनने प्रद्युम्नकी भांति चक्र तथा गदाधारी कृष्णकी विनयपूर्व्वक पूजा की; कृष्णने उस राजा बभ्रुवाहनको दिव्य घोड़ोंसे युक्त सुवर्णभूषित शोभायमान रथ प्रदान किया। धर्मराज, भीमसेन, नकुल और सहदेव; इन्होंने भी पृथक् रीतिसे उसे सम्मानित करते हुए बहुतसा धन दिया।

तिसके अनन्तर तीसरे दिन महामुनि वाग्मी सत्यवतीपुत्र व्यास युधिष्ठिरके पास आके उनसे बोले, हे कौन्तेय! आजसे तुम यज्ञ करो, तुम्हारे यज्ञ करनेका मुहूर्त्त उपस्थित होनेसे यज्ञ करानेवाले पुरुष तुम्हें यज्ञ करनेके लिये आज्ञा कर रहे हैं। हे राजेन्द्र! बहुतसा सुवर्ण सञ्चित होनेसे तुम्हारा यह यज्ञ बहु सुवर्णान्वित कहके विख्यात हुआ है; इसलिये यह यज्ञ पूरी रीतिसे सिद्ध होगा। हे महाराज! इस यज्ञमें तिगुनी दक्षिणा और यज्ञवाले तिगुने ब्राह्मणोंको नियुक्त करो; हे नरनाथ! ऐसा करनेसे तुम इस एक ही यज्ञसे तीन अश्वमेध यज्ञका फल पाके स्वजन वध जनित पापसे मुक्त होगे। हे कुरुनन्दन! तुम जो अश्वमेधका अवभृत लाभ करोगे, वह परम पवित्र है।

अनन्तर तेजस्वी धर्मात्मा धर्मराज अमित बुद्धिमान व्यासदेवका ऐसा वचन सुनके अश्वमेधकी सिद्धिके निमित्त दीक्षा लेनेके लिये गये। फिर महाबाहु राजा युधिष्ठिरने अश्वमेध महायज्ञको अनेक दक्षिणा, सर्व्वकाम तथा सर्व्वगुणोंसे युक्त किया। हे राजन्! उस यज्ञमें सर्व्वज्ञ वेद जाननेवाले याजकवृन्द परिक्रमा करते हुए उत्तम शिक्षा तथा विधिके अनुसार सब कार्य्य करने लगे; उन लोगोंके कार्य्य किसी अंशमें स्खलित तथा अधूरे नहीं हुए; वरन वे लोग रीति तथा योग्यताके अनुसार सब कार्य्य करने लगे।

हे राजन्! द्विजगणने प्रवर्ग अर्थात् अश्वमेध विहित धर्म्माख्य समस्त ऋक् एकत्रित करके विधिपूर्व्वक सोमवल्ली कूटा। सोम पीनेवाले ब्राह्मण लोग शास्त्रके अनुसार उस सोमलतासे रस बाहिर करते हुए आनुपूर्व्विक प्रातःसेवन करने लगे; उस यज्ञमें जितने मनुष्य विद्यमान थे, उनके बीच कोई कृपण, दरिद्र भूखा, दुःखी वा प्राकृत नहीं था। शत्रुनाशन महातेजस्वी भीमसेन राजाकी आज्ञानुसार सदा भोजनार्थी पुरुषोंको भोज्यवस्तु प्रदान करने लगे। संस्तर अर्थात् इष्टका सङ्कलनाख्य स्थण्डिल रचनामें निपुण याजकगण प्रतिदिन शास्त्रदृष्टिके अनुसार सब कार्य्य करने लगे; बुद्धिमान धर्मराजके यज्ञमें षड़ङ्गनभिज्ञ और व्रतविहीन तथा शादाविचक्षण उपाध्यायन थे।

हे भरतर्षभ! अनन्तर यूपके उच्छ्रय उपस्थित होनेपर याजकोंने कुरुराजके यज्ञमें छः बेल, छः खदिर, छः पलाश, दो देवदारु और एक श्लेष्मातक काष्ठसे यूप तैयार किया। फिर भीमसेनने धर्मराजकी आज्ञानुसार शोभाके लिये सुवर्णके द्वारा बहुतसा यूप निर्म्माण कराया। हे राजर्षि! सुरलोकमें सप्तर्षियोंसे घिरे हुए महेन्द्रके अनुगत देवताओंकी भांति वे सुवर्णमय यूप विचित्र वस्त्रोंसे चित्रित होकर अत्यन्त शोभित हुए। उस यज्ञमें अग्नि रखनेके लिये सुवर्णमय इष्टिका बनी थीं, इससे दक्ष

प्रजापतिके अग्निचयनकी भांति वह अग्निचयन सुशोभित हुआ। चार स्थण्डिलोंसे युक्त उस यज्ञकी वेदी अठारह हाथ परिमित रुक्मपक्ष-युक्त त्रिकोण तथा गरुड़ाकारसे बनाई गई।

अनन्तर मनीषियोंके द्वारा शास्त्रके अनुसार देवताओंके उद्देश्यसे जो सब पशु, पक्षी, ऋषभ तथा जलचर नियुक्त हुए थे, ऋत्विकोंने उस अग्निचयन कर्म्ममें उन पशुओंका अभियोग किया। महात्मा कुन्तीपुत्रके यज्ञमें अश्व प्रभृति तीन सौ पशु यूपमें निबद्ध हुए; युधिष्ठिरका यज्ञ स्थान देवताओं तथा ऋषियोंके समागम, गन्धर्व्वोंके सङ्गीत और अप्सराओंका नृत्य होनेसे अत्यन्त शोभित होने लगा। किम्पुरुषोंसे समाकोर्ण किन्नरोंसे उपशोभित, सिद्ध और ब्राह्मणोंसे परिवेष्टित हुआ।

उस सभामण्डपके बीच सर्व्वशास्त्र प्रणेता यज्ञ संस्कारमें निपुण द्विजश्रेष्ठ व्यासशिष्योंके बैठनेपर महातेजस्वी गीतकोविद नारद, तुम्बुरु, विश्वावसु, चित्रसेन तथा नृत्यगीत जाननेवाले गन्धर्व्वगण उन ब्राह्मणोंको आनन्दित करने लगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, याजक द्विजातियोंने अन्यान्य रमणीय पशुओंका विधानपूर्व्वक श्रपण अर्थात् संस्कार करके शास्त्रके अनुसार उस घोड़ेका बध किया। अनन्तर याचकगणने यथा रीति घोड़ेको मारके मन्त्र द्रव्य और श्रद्धायुक्त विधिपूर्व्वक मनस्विनी द्रुपदपुत्रीको बैठाया। हे भरतश्रेष्ठ! तिसके अनन्तर द्विजातियोंने शास्त्रके अनुसार उस घोड़ेके वक्षस्थलसे वपा उठाकर सावधानचित्तसे उसे अग्निमें संस्कार किया। उस समय धर्म्मराजने भाइयोंके सहित सर्व्वपापनाशक उस वपाके धूमयुक्त गन्धको शास्त्रके अनुसार सूंघा; हे नरनाथ! वे धीरवर सोलह ऋत्विक् उस घोड़ेके अवशिष्ट अङ्गोंको अग्निमें होम करने लगे; भगवान् व्यासदेव शिष्योंके सहित इन्द्रसदृश तेजस्वी धर्म्मराजके उस यज्ञको इस ही भांति पूरा करके वचनसे राजा युधिष्ठिरको वर्द्धित करने लगे। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंको विधिपूर्व्वक एक एक सहस्र निष्क (स्वर्णमुद्रा) दान करके वेदव्यास मुनिको वसुन्धरा प्रदान की। हे महाराज! सत्यवती पुत्र व्यासदेव पृथ्वी प्रतिग्रह करके भरतश्रेष्ठ धर्म्मराज युधिष्ठिरसे बोले, हे राजसत्तम! यह पृथ्वी तुम्हें ही अर्पित हुई, ब्राह्मण लोग धन पानेसे ही परम सन्तुष्ट होते हैं, इसलिये मुझे तथा उन लोगोंको इसका मूल्य दो।

महामना युधिष्ठिर भाइयोंके सामने उन ब्राह्मणोंसे बोले, कि अश्वमेध यज्ञमें पृथ्वी-दक्षिणा ही विहित है; इस ही लिये मैंने अर्ज्जुनके द्वारा अर्ज्जित यह वसुन्धरा ऋत्विकोंको प्रदान की है। हे विप्रगण! आप लोग इस पृथ्वीको विभाग करके ग्रहण करिये, मैं वनको जाऊंगा। चातुर्होत्रके प्रमाण अनुसार इस पृथ्वीको मेरे चार भागमें विभक्त करनेसे यह ब्रह्मस्व हुई, मैं फिर इसे लेनेकी इच्छा नहीं करता। हे विप्रगण! मैंने जो कहा, मेरे भाइयोंका भी ऐसा ही अभिप्राय है।

युधिष्ठिरके ऐसा कहनेपर उनके भाइयों और द्रौपदीने कहा, कि महाराजने जो कह दिया, 'हमारा भी वही अभिप्राय है।' उस समय उन लोगोंका ऐसा वचन सुनकर सबके शरीरके रोएं खड़े होगये।

हे भारत! तिसके अनन्तर आकाशसे साधुवाद और सभाके बीच द्विजगणका प्रशंसावाद प्रकट हुआ। मुनिश्रेष्ठ वेदव्यास और कृष्ण ब्राह्मणोंके बीच युधिष्ठिरको पूजा रीतिसे पूजा करते हुए फिर बोले, कि तुमने मुझे पृथ्वी दान किया था, मैंने इसे तुम्हें फिर दे दी; तुम ब्राह्मणोंको पृथ्वीके पलटेमें सुवर्ण दान करो; यह वसुन्धरा तुम्हारी ही रहे।

अनन्तर कृष्णने धर्म्मराज युधिष्ठिरसे कहा, कि भगवान वेदव्यासने जैसा कहा आपको वैसा ही करना उचित है।

कुरुराज युधिष्ठिर व्यासदेव और श्रीकृष्णचन्द्रका ऐसा वचन सुनके प्रसन्नचित्तसे भाइयोंके सहित यज्ञके त्रिगुण कोटि कोटि सुवर्णदक्षिणा ब्राह्मणोंको दान की। हे भरतसत्तम! मरुत्त यज्ञके अनुकारी कुरुराजने जो किया, इस लोकमें उनके अतिरिक्त कोई राजा भी वैसा कार्य्य करनेमें समर्थ न होगा।

मुनिसत्तम विद्वान् व्यासदेवने युधिष्ठिरके दिये हुए रत्नोंको प्रतिग्रह करके ऋत्विकोंको प्रदान किया, उन लोगोंने चार भाग कर लिया। युधिष्ठिर पृथ्वीके मूल्यस्वरूप उस सुवर्णको दान कर भाइयोंके सहित निष्पाप होकर स्वर्ग जय करते हुए अत्यन्त आनन्दित हुए।

उस समय ऋत्विकोंने अपरिसीम आनन्द और उत्साहके सहित द्विजातियोंके समीप वह अपर्य्याप्त सुवर्ण आपसमें बांटके ले लिया। यज्ञवाटमें जो सब सुवर्णमय विभूषण तोरण, यूप, घट, इष्टका और पात्र विद्यमान थीं, ब्राह्मणोंने धर्म्मराजकी आज्ञानुसार उन द्रव्योंको भी विभाग करके ले लिया। अनन्तर क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंने उन ब्राह्मणोंकी वस्तु हर लिया; फिर बुद्धिमान धर्म्मराजने वसुके द्वारा ब्राह्मणोंको परितृप्त किया, तब वे लोग अधिक सन्तुष्ट होके अपने अपने स्थानपर गये।

इधर महातेजस्वी भगवान् व्यासदेवने महामूल्य हिरण्यके परिमाण अनुसार अपना हिस्सा कुन्तीको दे दिया। पृथा श्वशुर व्यासदेवके पास प्रीतिपूर्व्वक दान पाके प्रसन्नचित्तसे उस वसुके सहारे उत्तम महत् पुण्यकर्म्म करने लगी। राजा युधिष्ठिर भाइयोंके सहित अवभृतस्थानमें जाकर पापरहित होके देवताओंसे परिवेष्टित महेन्द्रकी भांति शोभित हुए। हे महाराज! पाण्डवगण राजाओंसे घिरके तारासमूहसे घिरे हुए ग्रहोंकी भांति शोभित होने लगे। अनन्तर युधिष्ठिरने राजाओंको विविध रत्न, हाथी, घोड़े, आभूषण, स्त्री, वस्त्र तथा सुवर्ण प्रदान किया। हे राजन्! उस राजमण्डलीके बीच अपर्य्याप्त धन देनेके समय पार्थ विश्रवापुत्र कुवेरकी भांति शोभित हुए।

उसही समय वीरश्रेष्ठ राजा बभ्रुवाहनको समीप बुलाके बहुतसा धन देके गृहमें भेजा और भगिनी दुःशलाके पौत्र उस बालकको प्रीतिपूर्व्वक उसके राज्यपर अभिषिक्त किया। अनन्तर कुरुराज युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित सावधानचित्तसे उन समागत सुविभक्त भली भांतिसे पूजित राजाओंको उनके निज निज स्थानपर भेजकर महात्मा गोविन्द, महाबली बलदेव और प्रद्युम्न आदि वृष्णिवंशियोंको विधिपूर्व्वक सम्मानित करते हुए प्रस्थापित किया।

हे भरतर्षभ! बुद्धिमान धर्म्मराजके बहुतसे अन्न, धन, रत्न, मैरेय सुराके सागर, घृतके पङ्किल तालाब, अन्नके पर्व्वत और रसकी सकर्द्दम युक्त वह महायज्ञ इस ही भांति पूर्ण हुआ। कहांतक कहें, उस यज्ञमें इतने खाण्डव-राज खाद्य अर्थात् पिष्टकी शष्कुली और शर्करयुक्त मुद्गकी खाद्य सामग्री बनी थीं तथा भोजनकी वस्तु वा पशुवध हुए थे, कि कोई उसकी सीमा करनेमें समर्थ न हुआ। उस समय यज्ञस्थल मत्त, प्रमत्त, मुदित युवतियोंसे और मृदङ्ग तथा शङ्खके शब्दसे परिपूरित होनेसे अत्यन्त मनोरम हुआ; अनेक देशवासी पुरुषोंके सदा 'दीयतां भुज्यतां' इस ही प्रकार कोलाहल करते रहने तथा हृष्ट पुष्टजनोंसे परिपूर्ण होनेसे महान् उत्सव होगया। इधर भरतश्रेष्ठ युधिष्ठिरने धनधारा तथा अभिलषित रत्न रूपी रसकी बरसाते हुए कृतार्थ होकर नगरमें प्रवेश किया।

८९ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, मेरे पितामह बुद्धिमान धर्म्मराजके यज्ञमें कौनसा अद्भुत कार्य्य हुआ था, उसे आप वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजेन्द्र ! अश्व-मेध महायज्ञके निवृत्त होनेपर जो उत्तम आश्चर्य्य व्यापार हुआ था, उसे आप सुनिये। हे प्रभु ! द्विजवर ब्राह्मणों, स्वजनों, बन्धुसम्बन्धी दीन, अन्ध और दयापात्र लोगोंके तृप्त, महा-दानके सर्व्वत्र प्रचारित और धर्म्मराजके सिर-पर पुष्पवृष्टि होनेपर वहां रुक्मपार्श्व अत्यन्त प्रगल्भ बिलमें बसनेवाला वृहदाकार नीललो-चन युक्त एक नकुलने वज्र सदृश शब्द किया। वह नेवला एक बार वैसा शब्दकर मृग तथा पक्षियोंको भयभीत करते हुए मनुष्य वाक्यसे बोला, "हे नराधिपगण ! आपने जो यज्ञ किया है, वह कुरुक्षेत्र निवासी वदान्य उञ्छवृत्ति ब्राह्मणके शक्तुप्रस्थ प्रदानके सदृश नहीं हुआ।"

हे नरनाथ ! ब्राह्मण लोग उस नेवलेका ऐसा वचन सुनके सब कोई अत्यन्त विस्मित हुए। अनन्तर उन सबने मिलके उस नेवलेसे पूछा, कि तुम कहांसे इस साधुसमागम युक्त यज्ञमें आये ? तुम्हारा बल, बुद्धि और अवलम्ब कैसा है ? हम लोग किस प्रकारसे तुम्हें जान सकेंगे ? हमने आगमको उल्लङ्घन न करके शास्त्र तथा न्यायके अनुसार विविध यज्ञीय सामग्रीके द्वारा उत्तम रीतिसे इस यज्ञको सम्पन्न किया है, यह यज्ञ पूजनीय पुरुषोंके शास्त्रदृष्टिके अनुसार विधिपूर्व्वक पूजित, मन्त्र और आहुतिके द्वारा अग्निहुत तथा बिना मत्सरके इसमें सब वस्तु दान की गई हैं, अनेक प्रकारके दानसे द्विजातिगण, उत्तम युद्धसे क्षत्रि-यगण, श्राद्धसे पितामहगण, पालन करनेसे वैश्य, कामसे वरस्त्री, अनुक्रोशके सहारे शूद्र और दानशेषके द्वारा पृथक् जनगण परितुष्ट हुए हैं। हमारे राजाकी पवित्रतासे स्वजन और सम्बन्धीगण, पुण्य होमसे देववृन्द और रक्षा करनेसे शरणागत लोग सन्तुष्ट हुए हैं। ब्राह्मण लोग इच्छापूर्व्वक तुमसे यह पूछते हैं, कि इस यज्ञमें तुमने द्विजातियोंका जो यथार्थ कार्य्य देखा वा सुना है, उसे सत्य कहो। तुम प्राज्ञ हो, दिव्यरूप धारण करके ब्राह्मणोंके सङ्ग तुम्हारा समागम हुआ है ; इसलिये तुम जो कहोगे, उस विषयमें हम लोगोंकी श्रद्धा होगी।

नकुल द्विजगणके ऐसा पूछनेपर हंसके बोला। हे द्विजगण ! मैं कभी मिथ्या वा अभि-मानयुक्त वचन नहीं कहता। हे द्विजसत्तमगण ! मैंने जो कहा, कि "तुम्हारा यज्ञ शक्तुप्रस्थके तुल्य नहीं हुआ" उसे तुम लोगोंने भी सुना। परन्तु मैंने जिस प्रकार उस कुरुक्षेत्रनिवासी उञ्छवृत्ति वदान्य ब्राह्मणका अद्भुत अनुत्तम शक्तुप्रस्थ देखा तथा अनुभव किया है ; जिसके सहारे वह ब्राह्मण पत्नी, पुत्र और पुत्रवधूके सहित स्वर्गमें गया है और जिससे मेरा आधा शरीर सुवर्णमय हुआ है, वह मुझे अवश्य कहना योग्य है ; इसलिये तुम लोगोंके समीप विस्तारपूर्व्वक यथार्थ रीतिसे वह सब वृत्तान्त कहता हूं, तुम लोग एकाग्रचित्त होकर सुनो।

नेवला बोला, हे विप्रगण ! न्यायसे प्राप्त ब्राह्मणके दिये हुए उस सूक्ष्म शक्तुप्रस्थका जो उत्तम फल मैं तुम लोगोंसे कहता हूं, उसे तुम सब कोई सावधान होके सुनो। अनेक धार्म्मि-कोंसे परिवृत्त धर्म्मक्षेत्र उस कुरुक्षेत्रमें कोई उञ्छवृत्ति ब्राह्मण कापोतिक वृत्ति अवलम्बन करके निवास करता था। वह धर्म्मात्मा जिते-न्द्रिय सदाचारयुक्त द्विजवर भार्य्या पुत्र और पुत्रवधूके सहित सदा तपस्या करता और दिनके छठें भागमें उनके सङ्ग भोजन करता था। किसी समय दारुण दुर्भिक्ष उपस्थित होनेपर दिनके छठें भागमें उसके भोजनकी वस्तु सञ्चित न होनेसे वह अन्य समयमें भोजन करने लगा।

हे विप्रगण ! उस समय शस्य समाविष्ट शेष होनेसे उसके पास कुछ भी सञ्चय न रहा, इस-लिये वह द्रव्यहीन हुआ। किसी समय उसके पास भोजनकी वस्तु न रहनेसे वह परिवारके सहित अत्यन्त क्षुधित हुआ। तब वह तपस्वी

शिप्र शुक्लपक्षमें प्रचण्ड सूर्य्यकी धूपसे युक्त मध्यान्ह समयमें उञ्छवृत्तिके सहारे शस्यका दाना इकट्ठा करते हुए तृष्णार्त्त तथा क्षुधार्त्त हुआ। वह उञ्छ अर्थात् शस्यका दाना न पानेसे परिजनोंके सहित भूखे ही रहा। उस समयको अत्यन्त कष्टसे बिताकर तिसके अनन्तर यव प्रस्थ उपार्ज्जन किया। अनन्तर उस ब्राह्मणने यवप्रस्थसे सत्तू बनाकर जप सन्ध्या तथा होम आदिक अनेक सत्कर्म्मोंको विधि पूर्व्वक पूरा किया।

अनन्तर उन हरएक तपस्वियोंके कुड़व परिमाणसे सत्तू विभाग करके लेनेपर कोई ब्राह्मण अतिथि होकर वहां आके बोला, कि 'मुझे भोजन कराओ'।

हे द्विजसत्तमगण! पवित्रचित्तवाले दान्त, श्रद्धा, दम और शम गुणसे युक्त, असूया, क्रोध, मत्सर मान और अहङ्काररहित उन साधुतपस्वियोंने उस आये हुए अतिथिको देखकर अत्यन्त सन्तुष्ट चित्तसे उसे प्रणाम करते हुए स्वागत तथा ब्रह्मचर्य्यके सहित गोत्रादि पूछा। वे लोग परस्परमें गोत्रादि मालूम करके उस क्षुधार्त्त अतिथिको कुटीके बीच ले जाके बोले, हे अनघ! तुम्हारे लिये मेरा दिया हुआ यह पाद्य, अर्घ्य, आसन और नियमसे उपार्ज्जित पवित्र सत्तू तैयार है; हे प्रभु! आप कृपा करके यह सब प्रतिग्रह करिये।

हे राजेन्द्र! वह द्विजवर तपस्वी ब्राह्मणका ऐसा वचन सुनके कुड़व परिमित सत्तू प्रतिग्रह पूर्व्वक भोजन करके तुष्ट न हुआ। वह उञ्छ वृत्ति ब्राह्मण अतिथिको क्षुधार्त्त देखकर उसकी तुष्टिके निमित्त फिर भोजन खोजने लगा। जब ब्राह्मण अतिथिके भोजनके निमित्त सोचने लगा, तब उसकी भार्य्या उससे बोली, कि आप मेरा हिस्सा अतिथिको दीजिये, तो यह द्विजवर परितुष्ट होके अभिलषित स्थानमें जायगा। उस द्विजसत्तमने साध्वी भार्य्याको इतनी बात सुनके उसे भूखी जानकर उसका सत्तू लेना नहीं चाहा।

उस समय उस विद्वान् विप्रवरने निज अनुमानके अनुसार उस बूढ़ी तपस्विनी परिश्रान्ता चर्म्म और अस्थिभूता कांपती हुई भार्य्याको भूखी जानके उससे कहा। हे शोभने! कीट, पतङ्ग और मृगजाति भी अपनी अपनी स्त्रियोंकी रक्षा तथा पोषण किया करते हैं; इसलिये तुम्हें ऐसा कहना उचित नहीं है। देखो पुरुष पत्नीके द्वारा अनुकम्पनीय, पुष्ट तथा रक्षित हुआ करता है, धर्म्म, अर्थ, काम, सब सांसारिक कार्य्य सेवा, कुल सन्तति और अपना तथा पितरोंके धर्म्म ये सब पत्नीके ही अधीन हैं। जो पुरुष कार्य्यमें अनभिज्ञ तथा भार्य्याकी रक्षा करनेमें असमर्थ है, उस मनुष्यको महत् अयश तथा नरक प्राप्त हुआ करता है और प्रदीप्त यशसे भ्रष्ट होनेसे उसे सब लोक नहीं प्राप्त होते।

वह तपस्विनी ब्राह्मणी पतिका ऐसा वचन सुनके उससे बोली, हे द्विज! हम दोनोंका धर्म्म और अर्थ समान ही है, इसलिये आप मुझपर प्रसन्न होके यह चौथा भाग सत्तू प्रस्थ प्रतिग्रह करिये। हे द्विजसत्तम! सत्य, रति, धर्म्म और स्वर्ग ये सब गुणके सहारे निर्ज्जित होते हैं, स्त्रियोंका पति साधन ही सदा अभिलषित है; माताका रज, पिताका वीर्य्य और पति परम देवता है। पतिके प्रसन्न रहनेसे स्त्रियोंको रति तथा पुत्ररूपी फल उत्पन्न होता है, आप पालन करनेसे पति और भरण करनेसे भर्त्ता है, पुत्र प्रदान करनेसे वरद हुए हैं; इसलिये आप मेरा सत्तूदान करिये। आप जरायुक्त, क्षुधार्त्त, अत्यन्त दुर्व्वलवृद्ध और उपवाससे परिश्रान्त होकर अत्यन्त कृश हुए हैं।

तपस्वी ब्राह्मण भार्य्याका ऐसा वचन सुनके उसका सत्तू प्रतिग्रह करके अतिथिसे बोला, हे द्विज! आप फिर इस सत्तूको प्रतिग्रह करिये।

अतिथि ब्राह्मण फिर शक्तु लेकर उसे खाके तृप्त न हुआ। तब उञ्छवृत्ति उसे देखके बहुत ही सोचने लगा।

अनन्तर पुत्र बोला, हे सत्तम! आप मेरे इस शक्तुको लेकर ब्राह्मणको दीजिये, यह मैंने सुकृत समझके दान किया। विशेष करके सर्व्वदा यत्नपूर्व्वक आपको प्रतिपालन करना ही मेरा अवश्य कर्त्तव्य कार्य्य है, क्यों कि वृद्ध पिताका प्रतिपालन करना ही साधुओंकी अभिलषित है। हे विप्रर्षि! तीनों लोकके बीच यह जनश्रुति सदा विद्यमान है, कि बूढ़े पिताको प्रतिपालन करना ही पुत्रका परम प्रयोजन है, आप केवल प्राण धारण करके तपस्या कर सकते हैं, देहधारियोंके शरीरमें प्राण ही परम धर्म्मरूपसे निवास किया करता है।

पिता बोला, हे पुत्र! तुम सहस्र वर्षके होजाओ, तोभी मैं तुम्हें बालक ही समझूंगा, पिता पुत्र उत्पन्न करके उस पुत्रसे कृतकृत्य हुआ करता है। हे पुत्र! इसे मैं जानता हूं, कि बालकोंकी भूख अत्यन्त बलवती होती है, मैं बूढ़ा हूं, इसलिये भूख सहूंगा। हे पुत्र! तुम इस शक्तुको भोजन करके बलवान बनो। हे पुत्र! मेरी अवस्था जीर्ण होनेसे भूख मुझे बाधा न दे सकेगी, मैंने बहुत समयतक तपस्या की है, इसलिये मैं मरनेसे नहीं डरता।

पुत्र बोला, ऐसी जनश्रुति है, कि पुत्र पिताको पुन्नाम नरकसे परित्राण करता है, इसलिये मैं भी आपका पुत्र हूं; जब कि आत्मा पुत्ररूपसे उत्पन्न होता है, तब आपही इस लोकमें अपना परित्राण करिये।

पिता बोला, हे पुत्र! तुम रूप, शील और दमगुणसे मेरे समान हुए, मैंने अनेक भांतिसे तुम्हारी परीक्षा की है; इसलिये तुम्हारा शक्तु ग्रहण किया। द्विजसत्तमने इतना कहके हंसकर शक्तु लेकर अतिथिको दिया, परन्तु अतिथि उस शक्तुको भोजन करनेपर भी तृप्त नहीं हुआ तब वृद्ध धर्म्मात्मा उञ्छवृत्ति अत्यन्त लज्जित हुआ।

साध्वी पुत्रवधू ब्राह्मणकी प्रियकामनासे अपना शक्तु लेकर प्रसन्नचित्तसे श्वशुरसे बोली, हे विप्र! आपके सन्तानसे मेरे सन्तान होगा, इसलिये आप मेरा यह शक्तु लेकर अतिथिको दीजिये। आपकी कृपासे मेरा सब अक्षय हो, मनुष्यगण जिन स्थानोंमें जाके शोकसे छूटते हैं, वे सब स्थान पौत्रके द्वारा प्राप्त हुआ करते हैं। जैसे धर्म्म, अर्थ और काम ये त्रिवर्ग तथा दक्षिणाग्नि गार्हपत्य और आहवनीय, ये तीनों अग्नि अक्षय स्वर्गजनक हैं,—पुत्र पौत्र और प्रपौत्र ये तीनों भी वैसेही हैं। मैंने ऐसा सुना है, कि पुत्र पुरुषको पितृऋणसे मुक्त करता है, पुरुष सदा पुत्र और पौत्रके सहारे उत्तम लोकोंको भोग किया करता है।

श्वशुर बोला, हे सुव्रतचारिणी! मैं तुम्हारे अङ्गोंको वातातपसे विशीर्ण तथा विवर्ण और तुम्हें भूखी तथा हतचेतन देखकर धर्म्मका उपघातक होकर किस प्रकार तुम्हारा शक्तु ग्रहण करूं? हे कल्याणचरितयुक्त कल्याणी! तुम मुझसे ऐसा मत कहो। हे सुभगे! तुम व्रतवती, शौच, शील, तपस्या, तथा कृच्छ्रवृत्तिशालिनी हो; इसलिये इस दिनके छठें भागमें मैं तुम्हें किस प्रकार भूखी देखूंगा?

पुत्रवधू बोली, हे प्रभु! आप मेरे गुरुके भी गुरु होनेसे परमदेवतास्वरूप हैं, इसीलिये आप मेरा शक्तु ग्रहण करिये। हे विप्र! मेरी देह, प्राण तथा धर्म्म गुरुसेवाके ही लिये प्रस्तुत है, इसलिये मैं आपकी कृपासे शुभद लोक प्राप्त करूंगी। आप मुझे भी दृढ़ भक्त जानके मेरा शक्तु ले सकते हैं?

श्वशुर बोला, हे साध्वि! तुम धर्म्म तथा व्रतयुक्त होकर गुरुवृत्ति अवेक्षण करने इस शीलवृत्तिके द्वारा अत्यन्तही शोभा पाती हो; इसलिये तुम वञ्चनाकी पात्री नहीं हो, तुम्हारा

सक्तू ग्रहण करूंगा, परन्तु आज मैंने तुम्हें धर्म्मशीला स्त्रियोंके बीच मुख्य गिना। उन्होंने ऐसा कहके उसका सक्तू लेकर अतिथिको दिया।

तिसके अनन्तर अतिथि उस विप्रवर साधु महात्मा ब्राह्मणके विषयमें सन्तुष्ट हुआ, वह प्रसन्नचित्त होकर उस द्विजवरसे कहने लगा। उस समय पुरुष विग्रह धर्म्मस्वरूप उस वाग्मी द्विजवर अतिथिने ब्राह्मणसे कहा, हे द्विजसत्तम! मैं आपके न्यायसे उपार्ज्जित यथाशक्तिके अनुसार शुद्धदानसे परम परितुष्ट हुआ, सुरलोकमें स्वर्गवासी लोग तुम्हारे इस दानको 'आश्चर्य्य दान' कहके घोषणा कर रहे हैं। यह देखिये, आकाशसे पृथ्वीपर फूलकी वर्षा होरही है; सुरर्षि, देवर्षि, गन्धर्व्व तथा देवदूतगण देवताओंको आगे करके स्तुति करते हुए आपके दानसे विस्मित होकर निवास करते हैं। हे द्विज! आप शीघ्र सुरपुरमें जाइये; ब्रह्मलोकगामी विमानपर ब्रह्मर्षिगण तुम्हारे दर्शनकी आकांक्षा करते हैं। पितृलोकवासी पितरवृन्द तुम्हारे द्वारा तर गये हैं। बहुतेरे लोग कई युगतक ब्रह्मचर्य्य, दान, यज्ञ तथा तपस्या करके भी सुरपुरमें जानेमें समर्थ नहीं होते। हे द्विज! आप परम श्रद्धापूर्व्वक असङ्कर धर्म्माचरण करते हुए जो तपस्या करते हैं, उस पुण्यसे स्वर्गमें जाइये। हे ब्राह्मणसत्तम! जब आपने शुद्धचित्तसे यह सब दान किया है, तब उस दानसेही देवगण परितुष्ट हुए हैं। क्षुधा प्रज्ञा तथा धर्म्मबुद्धिको नष्ट करती है, जब ज्ञान क्षुधाके विषयमें गमन करता है, तब धीरज दूर हो जाता है; तथापि आपने ऐसे कष्टकर समयमें निजकर्म्मके सहारे स्वर्ग जय किया; इसलिये मुझे बोध होता है, कि जो लोग भूखको जीत सकते हैं, वे निश्चयही स्वर्ग जय करनेमें समर्थ होते हैं। जब पुरुष दान करनेका अभिलाषी होता है, तब उसका धर्म्म किसी प्रकार अवसन्न नहीं होता। आपने ऐसाही विचार करके पुत्र और कलत्रका स्नेह त्यागके धर्म्मको बड़ा जानके तृष्णाको तुच्छ समझा है। मनुष्योंका द्रव्यागम अत्यन्त सूक्ष्म है, सत्पात्रको दान करना उससे भी सूक्ष्म है, सत्पात्रको दान देनेकी अपेक्षा काल, उसकी अपेक्षा श्रद्धा और श्रद्धासे भी स्वर्गद्वार परम सूक्ष्मरूपसे निर्णीत है, इस ही लिये मनुष्यगण मोहवशसे उसका दर्शन करनेमें समर्थ नहीं होते। परन्तु क्रोध जीतनेवाले जितेन्द्रिय पुरुषगण स्वर्गरूप अर्गलयुक्त रागगुप्त दुरासद लोभ बीज दर्शन किया करते हैं। जो सब तपोनिष्ठ ब्राह्मण शक्तिके अनुसार दान करते हैं, सहस्र दान करनेमें समर्थ पुरुष एक सौ दान करते हैं, एक सौ दान करनेमें समर्थ पुरुष दस दान करते हैं और जो लोग शक्तिके अनुसार जल दान करते हैं, वे सबके तुल्य फलभागी हुआ करते हैं। हे विप्र! अकिञ्चन राजा रन्तिदेव शुद्धचित्तसे जलदान करके स्वर्गलोकमें गये। हे तात! धर्म्म न्यायसे प्राप्त हुए श्रद्धायुक्त अर्थात् अल्पमात्र दानसे जिस प्रकार परितुष्ट होता है, उस भांति महाफलजनक अधिक दानसे परितुष्ट नहीं होता। राजा नृगने द्विजेन्द्रगणको सहस्र गऊ प्रदान की उसके बीच बिना जाने एक दूसरेकी गऊ दी गई थी, इसीसे वह नरकगामी हुए थे। हे सुव्रत! उशीनर-पुत्र राजा शिविने अपने शरीरका मांस दान करके पुण्यकृत लोकोंको पाके सुरलोकमें विविध सुखभोग किया था। हे विप्र! यथारीति सञ्चित विविध यज्ञ और निज शक्तिसे उपार्ज्जित पुण्यही साधु पुरुषोंका वैभव है। क्रोधसे पुरुषके दानका फल निष्फल होता है और लोभसे स्वर्गगति रोध हुआ करती है। न्यायवृत्त दानवित् मनुष्य केवल तपस्यासे ही स्वर्ग भोग करते हैं, परन्तु दूसरे लोग अनेक दक्षिणायुक्त राजसूय प्रभृति विविध यज्ञ करके भी स्वर्ग भोगनेमें समर्थ नहीं होते। हे विप्र! आपने जो सक्तुप्रस्थके सहारे

अक्षय ब्रह्मलोक जय किया, कई सौ अश्वमेध यज्ञसे भी आपको ऐसा फल न मिलता। हे द्विजवर! आप निष्पाप हुए हैं, इसलिये आजसे सबके बीच मुख्य हुए। यह दिव्य बिमान उपस्थित हुआ है, आप इसपर चढ़के स्वच्छन्दतासे ब्रह्मलोकमें जाइये। हे द्विजवर! तुम सुखसे चढ़ो, मैं धर्म्म हूं, मेरा दर्शन करो; तुमने जिस प्रकार अपने शरीरको पवित्र किया; इससे लोकके बीच तुम्हारी कीर्त्ति स्थिर रहेगी। इस समय तुम भार्य्या, पुत्र और पुत्रवधूके सहित सुरपुरमें चले जाओ।

धर्म्मके ऐसा कहनेपर वह द्विजवर भार्य्या, पुत्र और पुत्रबधूके सहित दिव्य यानपर चढ़के सुरलोकमें गया। जब वह धर्म्मज्ञ बिप्रवर भार्य्या, पुत्र और पुत्रवधूके सहित सुरलोकमें गया, तब मैं बिलसे बाहिर हुआ।

तिसके अनन्तर सत्तूकी सुगन्धि, जलके क्लेद दिव्य फूलोंके अवमर्द्दन, उस साधु विप्रके दान, जप और तपस्याके बलसे मेरा मस्तक सुवर्णमय हुआ। हे विप्रगण! तुम लोग देखो, सत्याभिसन्ध बुद्धिमान ब्राह्मणके सत्तू दान और तपोबलसे मेरे इस उत्तम विपुल शरीरका अर्द्ध-भाग स्वर्णमय हुआ है। हे द्विजगण! मेरा दूसरा पार्श्व किस भांति ऐसा होगा, इस विषयको सोचकर मैं प्रसन्नचित्तसे तपोवन और यज्ञस्थलमें बार बार भ्रमण करता हूं। बुद्धिमान कुरुराजका यज्ञ सुनके आश्वासित होकर यहां आया, परन्तु मैं सुवर्णमय न हुआ। हे ब्राह्मणश्रेष्ठगण! इस ही लिये मैंने हंसके कहा, कि तुम्हारा यज्ञ सब भांतिसे सत्तूप्रस्थके सदृश नहीं हुआ। उस समय मैं सत्तूप्रस्थके लेश मात्रसे सुवर्णमय हुआ हूं, इसीसे ऐसा समझता हूं, कि यह महायज्ञ उसके सदृश नहीं हुआ। नेवलने यज्ञस्थलमें उन द्विजोंसे ऐसा कहके उनके दर्शनपथको अतिक्रम किया, तब ब्राह्मण लोग भी निज निज स्थानपर गये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे परपुरञ्जय! उस महाक्रतु बाजिमेधमें जो आश्चर्य व्यापार हुआ था, मैंने वह सब बृत्तान्त आपके समीप कहा। हे नरनाथ! आप उस यज्ञमें किसी भांति विस्मय बोध न करिये, क्यों कि सहस्र कोटि ऋषियोंने उस तपोबलसे सुरलोकमें गमन किया है। सर्व्व भूतोंमें अद्रोह, सन्तोष, शील, आर्ज्जव, तपस्या, दम, सत्य और दान, ये सब साधुसम्मत हैं।

९० अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे प्रभु! जब राजा लोग यज्ञ, महर्षिगण तपस्या और ब्राह्मण लोग शम, दम तथा शान्ति करनेमें समर्थ हैं, तब मेरी समझमें ऐसा निश्चय होता है, कि इस लोकमें यज्ञफलके सदृश कुछ भी नहीं दीखता। हे द्विजसत्तम! बहुतेरे राजा बहुतसे यज्ञ करते हुए इस लोकमें परमयश पाके परलोक तथा सुरपुरमें गये हैं। महातेजस्वी सहस्रनयन सुरराजने अनेक दक्षिणायुक्त बहुतसे यज्ञ करके अखिल सुरराज्य प्राप्त किया है। हे द्विजवर! समृद्धि और बिक्रममें सुरराजसदृश भीमार्ज्जुनके सहित महात्मा युधिष्ठिरने जो अश्वमेध महायज्ञ किया था, नेवलने उस यज्ञकी किस निमित्त निन्दा की।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे नरनाथ! यज्ञकी प्रधान विधि और फल मैं आपके समीप यथार्थ रीतिसे कहता हूं, सुनिये।

पहले यज्ञ करनेवाले देवराजके विस्तृत यज्ञमें ऋत्विकोंके कार्य्यमें व्यग्र रहनेपर उस गुणशाली यज्ञमें अग्नि तथा देवगण आहूत और परमर्षिवृन्द उपस्थित हुए। अनन्तर सुप्रतीत उत्तम स्वरयुक्त अश्रान्त स्वागम अध्वर्य्यु वृषभोंके द्वारा पशुगण गृहीत हुए; आलम्भन समयमें ऋषियोंने पशुओंको दीनभावयुक्त देखकर कृपापूर्व्वक इन्द्रके समीप जाकर

उनसे कहा, कि यह यज्ञकी विधि शुभ नहीं हुई है। हे पुरन्दर! आप महान् धर्म्म करनेके अभिलाषी हुए हैं, परन्तु आप इसे विशेषरूपसे नहीं जानते; क्योंकि पशुओंसे यज्ञ करना विधिविहित नहीं है। हे प्रभु! जब कि हिंसा धर्म्म कहके वर्णित नहीं हुआ है, तब यह यज्ञ धर्म्मयुक्त नहीं होता है, इसलिये आपका यह समारम्भ धर्म्मोपघातक होता है। हे सुरराज! यदि आप धर्म्मकी अभिलाष करते हैं तो ऋत्विकगण वेदके अनुसार आपका यज्ञ करें, उस विधिदिष्ट यज्ञके सहारे ही आपको उत्तम महान् धर्म्म होगा। हे सहस्राक्ष! आप हिंसा परित्याग करके त्रिवर्षोषित बीजके सहारे यज्ञ करिये। हे शक्र! यह धर्म्म ही महागुण तथा महाफलजनक कहके विहित है। शतक्रतुने मान और मोहके वशमें होकर उन तत्त्वदर्शी ऋषियोंके वचनको प्रतिग्रह नहीं किया। हे भारत! इन्द्रके यज्ञमें उन तपस्वियोंके बीच अत्यन्त ही विवाद होने लगा। किसीने कहा, जङ्गम और कोई बोला, स्थावरके द्वारा यज्ञ करना उचित है, ऐसा कहके वे लोग विवाद करते हुए खिन्न हुए। अनन्तर ऋषियोंने इन्द्रके सङ्ग मिलके राजा बसुसे प्रश्न किया, कि हे महाभाग! यज्ञमें वेद विधि कैसी है? और मुख्य पशु, किम्वा बीज वा रसके द्वारा यज्ञ करना उचित है?

पृथ्वीपति बसु उन लोगोंके वचनको सुनकर बलाबलको बिना विचारे ही यह वचन बोले, कि यथोपनीय वस्तुओंके द्वारा यज्ञ करना उचित है। चैदीराज प्रभु राजा बसुने ऐसाही बोलने तथा प्रश्न विषयमें मिथ्या कहनेसे रसातलमें प्रवेश किया। इस ही निमित्त संशयके स्थलमें स्वयम्भू प्रजापति ब्रह्माके अतिरिक्त बहुज्ञ पुरुषने भी कुछ न कहा और अल्पज्ञोंकी तो कुछ बात ही नहीं है; पापात्मा अशुद्धबुद्धि मनुष्य यदि दान करे, तो उसका सब दान विनष्ट होता है। उस अधर्म्ममें प्रवृत्त दुरात्मा हिंसक पुरुषको इस लोक तथा परलोकमें दानसे कीर्त्ति नहीं होती। जो मूर्ख धर्म्माभिज्ञ पुरुष निरन्तर अन्यायोपगत वस्तुओंके सहारे यज्ञ करता है, वह उस धर्म्मफलको प्राप्त करनेमें समर्थ नहीं होता। जो धर्म्मवैतंसिक पापात्मा अधम पुरुष सब लोगोंके विश्वासके निमित्त ब्राह्मणोंको दान करता है और जो निरङ्कुश विप्र राग तथा मोहके वशवर्त्ती होकर पापकर्म्मसे धन उपार्ज्जन करता है, उसे सदा कलुषगति प्राप्त होती है। सञ्चयबुद्धि पुरुष भी पाप तथा अशुद्धताके कारण लोभ और मोहके वशमें होकर प्राणियोंको उद्वेगयुक्त किया करता है। जो मनुष्य मोहके वशमें होकर इस प्रकार धन प्राप्त करके दान वा यज्ञ करता है, पापसे प्राप्त हुए धनसे उसको परलोकमें उस दान तथा यज्ञका फल नहीं मिलता। तपोधन धार्म्मिक पुरुषगण विभवके अनुसार उञ्छ, मूल, फल, शाक और जलपात्र दान करके स्वर्गमें गमन किया करते हैं, यही महायोग धर्म्म कहके वर्णित हुआ है। परन्तु दान सब प्राणियोंके विषयमें दया, ब्रह्मचर्य्य, सत्य, अनुक्रोश, धृति और क्षमा, ये सब सनातन धर्म्मके सनातन मूल हैं; इतिहासके सहारे विश्वामित्र प्रभृति राजाओंका विषय इस ही प्रकार सुना जाता है। तपस्वी विश्वामित्र, असित, जनक, कक्षसेन, आर्ष्टिसेन, सिन्धु और दिलीप,—ये सब कोई तथा अन्यान्य तपस्वी राजा लोग सत्य और न्यायसे प्राप्त हुए धनसे परम सिद्धिको प्राप्त हुए हैं। हे भारत! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्यान्य तपस्निष्ठा करनेवाले पुरुषगण दानधर्म्मादिके सहारे पवित्र होकर सुरपुरमें गमन किया करते हैं।

९१ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, हे भगवन्! यदि धर्म्मयुक्त दानसे स्वर्ग मिलता है, तो आप उस विषयको विशेष रीतिसे मेरे समीप वर्णन करिये। हे द्विजवर! आप ही इस विषयको कहनेमें समर्थ हैं। हे ब्रह्मन्! उस उञ्छवृत्तिने सत्तू दान करके जो महत् फल प्राप्त किया, वह विषय सत्यरूपसे मेरे समीप कहा गया है, उसमें सन्देह नहीं है, परन्तु सब यज्ञोंमें किस प्रकार इसका निश्चय होगा उसे पूरी रीतिसे आपको वर्णन करना उचित है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे अरिदमन! पहिले अगस्त्यके महायज्ञमें जो घटना हुई थी, ऐसे स्थलमें पण्डित लोग उदाहरणरूपसे उसी ही इतिहासको वर्णन किया करते हैं।

हे महाराज! पहिले सर्व्वभूतहितकारी महातेजस्वी अगस्त्य मुनि द्वादश वार्षिकी दीक्षामें दीक्षित हुए थे; उस यज्ञमें मूलाहारी, फलाहारी, अश्मकुट्ट और मरीचिपायी अग्नितुल्य ऋषिगण होतकार्य्यमें नियुक्त थे। वहां परिवृष्टिक, वैघसिक अप्रक्षाल प्रभृति यति तथा भिक्षुगण उपस्थित थे। वे लोग सब कोई प्रत्यक्ष धर्म्मजितक्रोध, जितेन्द्रिय, दान्त, हिंसा और दम्भ वर्ज्जित, पवित्र वृत्तिमें स्थित इन्द्रियोंके द्वारा अपराजित थे, उन्होंने ही यज्ञमें उपस्थित होके यज्ञ किया। उस यज्ञमें अगस्त्य भगवानने सामर्थ्यके अनुसार अन्न इकट्ठा किया था। हे भरतसत्तम! उस यज्ञमें जो कृत तथा योग्य कर्म्मके निर्द्दिष्ट हुआ था, उसके अनुसार ही बहुतेरे मुनियोंने महायज्ञ किया था। परन्तु इस प्रकार अगस्त्य मुनिका यज्ञ होते रहनेपर इन्द्रने जलकी वर्षा नहीं की। हे महाराज! उस ही निमित्त महात्मा अगस्त्य मुनिके उस यज्ञके समय भावितात्मा मुनिगण यह वार्त्ता करने लगे, कि यह यजमान अगस्त्य मुनि मत्सररहित होकर अन्न दान कर रहे हैं, परन्तु बादल जलकी वर्षा नहीं करते हैं, तब किस प्रकार अन्न उत्पन्न होगा? हे विप्रगण! अगस्त्य मुनिका यह यज्ञ बारह वर्षमें पूरा होगा, इस बारह वर्षके बीच इन्द्र जलकी वर्षा न करेगा; इसलिये आप लोग विचार करके बुद्धिमान महर्षि परम तपस्वी अगस्त्यके विषयमें अनुग्रह करिये। तब महर्षिगण ऐसा कहने लगे, तब परम प्रतापवान् अगस्त्य मुनिने सिर भुकाकर मुनियोंको प्रसन्न करके कहा, कि यदि इन्द्र बारह वर्षतक जलकी वर्षा न करे, तो मैं चिन्ता अर्थात् मानस-यज्ञ करूंगा, यही सनातन विधि है। हे ऋषिगण! यदि इन्द्र बारह वर्षतक जलकी वर्षा न करे, तो मैं स्पर्श यज्ञ करते हुए उपाहृत द्रव्योंको बिना व्यय किये ही देवताओंको सन्तुष्ट करूंगा, यही सनातन विधि है। यदि इन्द्र बारह वर्षके बीच जलकी वर्षा न करे, तो मैं व्यायाम अर्थात् ध्यानसे द्रव्य आहरण करके व्रतातिरिक्त अन्य यज्ञ सम्पन्न करूंगा। मैंने जो कई वर्षसे यह बीज यज्ञ आरम्भ किया है, इसे बीजसे ही सम्पन्न करूंगा, इसमें कुछ भी विघ्न न होगा, मेरे इस यज्ञको व्यर्थ करनेकी सामर्थ्य किसीको भी नहीं है; यदि इन्द्र वर्षा न करे, तो वह देवताओंके बीच परिगणित न होगा। इसके अतिरिक्त यदि वह इच्छानुसार मेरी इस अभ्यर्थनाको पूरा न करे, तो मैं स्वयं इन्द्र होकर प्रजासमूहको जीवित रखूंगा और जिस समय उन लोगोंको जिस भोजनीय वस्तुओंका प्रयोजन होगा, उस समय उन्हें वही आहार प्राप्त होगा। मैं बार बार ऐसी ही विशेषता करूंगा और आज पृथ्वीमें जितनी वस्तु तथा स्वर्ण है, वे सब मेरे समीप उपस्थित होवें, तीनों लोकके बीच जो सब वस्तु हैं, वे सब स्वयं ही मेरे समीप आगमन करें। दिव्य अप्सरा, गन्धर्व्व, किन्नर और विश्वावसु प्रभृति सब प्राणि मेरे यज्ञमें आवें। उत्तर कुरुदेशमें जो सब वस्तु विद्यमान हैं, वे सब वस्तु मेरे यज्ञमें

स्वयं आके उपस्थित होवें और स्वर्ग स्वर्गवासी प्राणी तथा धर्म्म स्वयं आगमन करें।

जब अगस्त्य मुनिने ऐसा बचन कहा, उस समय उस प्रदीप्त अग्निसदृश चित्तसम्पन्न तेजस्वी मुनिके तपोबलसे वह सब उसही प्रकार हुआ। तिसके अनन्तर वे सब मुनिगण अगस्त्य मुनिके तपोबलको देखकर प्रसन्नचित्त तथा विस्मित होकर महान् अर्थयुक्त यह बचन कहने लगे।

ऋषिवृन्द बोले, हे मुनि! तुम्हारे बचनसे हम लोग परम प्रसन्न हुए, परन्तु तपस्याके फलको व्यर्थ करना हम लोगोंको अभिलषित नहीं है, हम लोग न्यायके अनुसार उस तपोबलसे ही यज्ञ करके तुष्ट होनेकी इच्छा करते हैं। हम लोग यज्ञ, दीक्षा, होम तथा दूसरे जिस कार्य्योंको करनेकी चेष्टा करते हैं, न्यायसे उपार्ज्जित बस्तुओंको भोजन करके उस ही कार्य्यमें अभिरत होंगे। हम लोग न्यायके अनुसार ब्रह्मचर्य्यसे देवताओंकी प्रार्थना करते हैं, इसके अनन्तर न्यायके अनुसारही गृहसे बाहिर होंगे और धर्म्मदृष्ट विधिके सहारे तपस्या करेंगे। हे प्रभु! आप जो यज्ञमें सदा अहिंसाका विषय कहा करते हैं, उसही निमित्त आपकी बुद्धि पूरी रीतिसे हिंसा विहीन हुई है। हे द्विजसत्तम! इस ही लिये हम अत्यन्त प्रसन्न हुए हैं; यज्ञकी समाप्ति होनेपर हम लोग यहांसे गमन करेंगे। उन लोगोंके इसही प्रकार वार्तालाप करते रहनेपर देवराज पुरन्दर उनके तपोबलको देखके जलकी वर्षा करने लगे। हे जनमेजय! अगस्त्यमुनिके यज्ञकी समाप्ति पर्य्यन्त अमित पराक्रमी पर्ज्जन्य निःशेषरूपसे वर्षा करने लगा। हे राजर्षि! त्रिदशनाथ इन्द्रने बृहस्पतिको आगे करके स्वयं अगस्त्य मुनिके निकट आके उन्हें प्रसन्न किया। अनन्तर यज्ञ समाप्त होनेपर अगस्त्य मुनिने परम प्रसन्न होकर उन महामुनियोंकी विधिपूर्व्वक पूजा करके उन्हें विदा किया।

जनमेजय बोले, हे सत्तम! जिस काञ्चनशिरा नकुलरूपी प्राणीने मनुष्यकी भांति बचन कहा, वह कौन था? मैं उसे जाननेकी इच्छा करता हूं, आप मेरे समीप यह विषय विस्तारपूर्व्वक कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, आपने पहिले मुझसे यह विषय नहीं पूछा था, इसीलिये मैंने इसका बर्णन नहीं किया; परन्तु अब वह नकुल कौन था और किस प्रकार उसका मनुष्यकी भांति बचन हुआ, वह सब कहता हूं, सुनो। पहिले जमदग्नि ऋषिके श्राद्धका सङ्कल्प करनेपर होमधेनु उनके निकट आई, उन्होंने स्वयं उसका दूध दुहा। उन्होंने उस दूधको पवित्र स्थानमें दृढ़ नवीन बर्त्तनमें रखा, तब धर्म्मने क्रोधरूपसे उस बर्त्तनमें प्रवेश किया। अनन्तर "ऋषिवर जमदग्निको विप्रिय करना योग्य है," ऐसा बात पूछनेके निमित्त उस दूधको धर्षित किया। हे महाराज! मुनिने उस समय धर्म्मस्वरूप क्रोधको जानके उसके ऊपर क्रोध नहीं किया। क्रोधरूपी धर्म्म भृगुश्रेष्ठ जमदग्निके निकट इस ही प्रकार पराजित होके ब्राह्मणका रूप धरके उनसे बोले, हे भृगुदह! मैं तुमसे पराजित हुआ, हे ऋषिश्रेष्ठ! तुमसे मेरे निर्ज्जित होनेसे भृगुवंश अत्यन्त रोषान्वित है, यह लोकप्रवाद मिथ्या हुआ। तुम महात्मा और क्षमावान हो, इसलिये आजसे मैं तुम्हारे वशवर्त्ती हुआ। हे साधु! मैं तुम्हारी तपस्यासे डरता हूं, इसलिये तुम मुझपर प्रसन्न होओ।

जमदग्नि बोले, हे क्रोध! आप साक्षात् दीख पड़े, आपने मेरा कुछ अपराध नहीं किया, इसलिये मुझे क्रोध नहीं है, आप शोकरहित होकर जाइये। मैंने जो पितरोंके उद्देश्यसे दूधके निमित्त सङ्कल्प किया था, आप उन महाभाग पितरोंके निकटही जाने सकोगे; इस समय जाइये।

क्रोधरूपी धर्म्म जमदग्निका ऐसा बचन सुनके त्रास पूर्व्वक अन्तर्हित हुए और पितरोंके

अभिशाप वशसे नकुलत्वको प्राप्त हुए। उन्होंने शापान्तके निमित्त उन लोगोंको प्रसन्न किया, तब उन्होंने कहा, कि आप धर्म्मकी निन्दा करके पापसे मुक्त होंगे। धर्म्म उन लोगोंका ऐसा वचन सुनके नेवलरूपसे यज्ञीयस्थान तथा धर्म्मारण्यमें बिचरते हुए यज्ञमें उपस्थित हुआ और वहां युधिष्ठिरको "तुम्हारा यज्ञ उस शक्तुप्रस्थके सदृश नहीं हैं,"—इसही प्रकार निन्दा करते हुए उस शापसे मुक्त हुआ और युधिष्ठिरसे बोला, हे युधिष्ठिर! तुमही साक्षात् धर्म्म हो। उस समय हम महात्मा युधिष्ठिरके यज्ञमें ऐसी घटना होनेपर हम लोगोंके सामनेही वह नेवला अन्तर्द्धान हुआ।

९२ अध्याय समाप्त।

———

इति श्रीभाषा महाभारते अश्वमेधपर्व्व समाप्त।

महाभारत।

आश्रमवासिक पर्व्व।

नारायण, नरोत्तम, नर और सरस्वती देवीको प्रणाम करके जय कीर्त्तन करे।

जनमेजय बोले, हे द्विजसत्तम! मेरे पितामह महात्मा पाण्डवोंने राज्य-पाके महात्मा धृतराष्ट्रके विषयमें कैसा आचरण किया? ऐश्वर्य्य, मित्र और पुत्रोंके नष्ट होनेपर अवलम्ब रहित राजा धृतराष्ट्र तथा यशस्विनी गान्धारी किस प्रकार निवास करने लगीं? मेरे पूर्व्व-पितामह पाण्डवोंने कितने समयतक राज्यमें निवास किया? यह सब आप मेरे समीप यथार्थ वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे कुरुसत्तम! शत्रुओंके मारे जानेपर महात्मा पाण्डवगण राज्य पाके धृतराष्ट्रको आगे करके राज्य पालन करने लगे। विदुर, सञ्जय और वैश्यापुत्र मेधावी युयुत्सु, ये सब कोई धृतराष्ट्रकी आराधना करने लगे। पाण्डव लोग उस राजा धृतराष्ट्रसे पूछ पूछकर पन्द्रह वर्षतक उनकी आज्ञानुसार सब कार्य्य करते रहे; धर्म्मराजके मतके अनुसार वीरश्रेष्ठ पाण्डवगण सर्व्वदा उनके निकट जाके पादाभिनन्दन करते हुए उनकी सेवा करने लगे, राजा धृतराष्ट्रने उनका मस्तक सूंघा और वे लोग सब कार्य्य करने लगे, कुन्तीभोजपुत्री कुन्ती, द्रौपदी सुभद्रा तथा अन्यान्य पाण्डवोंकी स्त्रियें समभावसे विधिपूर्व्वक श्वशुर और सासकी सेवा करने लगीं। हे महाराज! युधिष्ठिरने राजा धृतराष्ट्रको राजयोग्य शय्या, महामूल्यवान वस्त्र, आभूषण तथा अनेक भांतिके भक्ष्यभोज्य प्रदान किये और कुन्ती गान्धारीका गुरुकी भांति सम्मान करने लगी। विदुर, सञ्जय और युयुत्सु उस हतपुत्र बूढ़े धृतराष्ट्रकी उपासना करने लगे; द्रोणके प्रिय साले महाधनुर्द्धारी ब्राह्मणश्रेष्ठ कृपाचार्य्य धृतराष्ट्रके निकट रहे। पुराण ऋषि श्रीवेदव्यास मुनिने सदा देव, ऋषि, पितर और राक्षसोंकी कथा कहते हुए उनके निकट निवास किया, विदुर धृतराष्ट्रकी आज्ञानुसार धर्म्म और व्यवहारयुक्त कार्य्योंको करने लगे। विदुरकी सुन्दर नीतिके अनुसार सुलघु अर्थके सहारे सामन्तगणके निकट धृतराष्ट्रका बहुतसा प्रिय कार्य्य सम्पादित होने लगा। जब वह किसी पुरुषको कैद करते वा कैद हुएको छोड़ते थे, तब उसके विषयमें राजा युधिष्ठिर कदापि कोई बार्त्ता उल्लेख नहीं करते थे। विहार तथा यात्राके समयके निमित्त महातेजस्वी कुरुराजयुधिष्ठिरने अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्रको समस्त काम्य विषय प्रदान किये; आरालिक अर्थात् शाकपाचक और पिप्पली, शुण्ठी तथा शर्करोपेत मुद्गपाचकगण पहलेकी भांति राजा धृतराष्ट्रकी सेवा करने लगे। पाण्डव लोग पहलेकी भांति न्यायपूर्व्वक राजा धृतराष्ट्रको महामूल्यवान विविध वस्त्र, माला, मैरेय, मद्य, मत्स्य, मांस, पीनेकी वस्तु, मधु और विचित्र विविध भक्ष्य वस्तु प्रदान करने लगे। जो सब राजा अनेक देशोंसे वहांपर आये थे, वे सब

कोई उस कुरुराज धृतराष्ट्रको पुत्र वियोगसे कुछ दुःख उपस्थित न हो, ऐसा समझकर पहलेकी भांति उनकी सेवा करने लगे। इधर कुन्ती, द्रौपदी, यशस्विनी सुभद्रा नागराजपुत्री उलूपी, चित्राङ्गदा देवी, धृष्टकेतुकी बहिन और जरासन्धकी पुत्री, ये सब कोई तथा अन्यान्य स्त्रियें वा अधगण किङ्करी होकर, सुबलपुत्री गान्धारीकी सेवा करने लगीं। युधिष्ठिरने अपने भाइयोंको धृतराष्ट्रकी सेवा करनेके लिये आज्ञा दी: परन्तु धृतराष्ट्रकी दुर्बुद्धिसे जो जुआ हुआ था, वह उस समयतक भीमके हृदयसे दूर न होनेसे केवल भीमसेनके अतिरिक्त सब भ्राता ही धर्मराजके अर्थयुक्त वचनको सुनकर विशेष यत्नपूर्वक उस कार्य्यमें प्रवृत्त हुए।

१ अध्याय समाप्त।

—— ——

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अम्बिका पुत्र राजा धृतराष्ट्र पाण्डवोंके द्वारा इस प्रकार पूजित और ऋषियोंसे समुपासित होकर पहलेकी भांति विहार करने लगे, कुरुकुलतिलक राजा धृतराष्ट्रने ब्राह्मणोंको देनेयोग्य जिन सब उत्कृष्ट हारोंको प्रदान करनेकी अभिलाष की, कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिरने वह सब उन्हें प्रदान किये। अनन्तर सरलस्वभाववाले राजा युधिष्ठिरने परम प्रसन्न होकर मन्त्रियों और भाइयोंसे कहा, कि ये नरनाथ राजा धृतराष्ट्र हमारे तथा तुमलोगोंके माननीय हैं, इसलिये जो लोग इनके निकट रहेंगे, वेही हमारे सुहृद करके परिगणित होंगे और जो लोग इनके विपरीत आचरण करेंगे, वे शत्रुरूपसे समझे जावेंगे; पितृवासर, तथा पुत्र वा सुहृदोंके श्राद्धकालमें इनको जो कुछ करनेकी इच्छा होगी, ये वही करेंगे।

तिसके अनन्तर कुरुकुलतिलक महामना राजा धृतराष्ट्र युधिष्ठिरकी सम्मतिके अनुसार ब्राह्मणोंको बहुतसा धन दान करने लगे। धर्मराज, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव इन सबने उनको प्रियकामनासे उस विषयका अनुमोदन किया और उन लोगोंने मनही मन ऐसा विचारा, कि जब ये बूढ़े राजा पुत्र तथा पौत्रवधसे पीड़ित और हम लोगोंके द्वारा शोकित होके भी नहीं मरे, तब ये कुरुपति धृतराष्ट्र पुत्रके रहनेपर जिस प्रकार सुख भोग करते थे, इस समयभी उन सब सुखोंको भोगकरें।

तिसके अनन्तर वे पाण्डुपुत्र वैसे स्वभावसे युक्त पांचो भाई एकत्रित होकर धृतराष्ट्रकी आज्ञासे निवास करने लगे। धृतराष्ट्र भी शिष्यवृत्तियुक्त नियममें स्थित विनीत उन पाण्डुपुत्रोंके विषयमें गुरुकी भांति आचरण करने लगे। इधर गान्धारीने पुत्रोंके विविध श्राद्ध कार्य्यके उपलक्षमें ब्राह्मणोंको सब काम्यवस्तु दान करके अनृणत्व लाभ किया। धार्म्मिकश्रेष्ठ धीमान् धर्मराज युधिष्ठिर भाइयोंसे घिरके इस ही प्रकार उस नरनाथ धृतराष्ट्रकी सेवा करते रहे, जब उस कुरुकुलोद्वह महातेजस्वी वृद्ध राजाने पाण्डुपुत्रोंका कुछ भी अप्रिय कार्य्य न देखा, तब उस समय वह सद्वृत्ति सम्पन्न महात्मा पाण्डवोंके ऊपर प्रसन्न हुए। सुबलपुत्री गान्धारी भी पाण्डवोंकी वृत्ति देखकर पुत्रशोक परित्याग करके निजपुत्रकी भांति उन लोगोंके विषयमें सन्तुष्ट हुई। कुरुप्रवीर वीर्य्यवान् युधिष्ठिर विचित्रपुत्र राजा धृतराष्ट्रके विषयमें अप्रिय आचरण न करके केवल प्रिय कार्य्य ही करने लगे; प्रजानाथ धृतराष्ट्र और तपस्विनी गान्धारीने गुरु वा लघु जो कुछ कहा, पाण्डवभारवाही परवीरघाती महाराज युधिष्ठिरने उनकी पूजा करके उस वचनको प्रतिपालन किया। नरनाथ धृतराष्ट्र युधिष्ठिरके व्यवहारसे प्रसन्न होकर उस मन्दबुद्धि निजपुत्रको स्मरण करके अनुताप करने लगे। अनन्तर राजा धृतराष्ट्र प्रतिदिन भोरके समय उठके सन्ध्या और जप आदि दैवकार्य्योंको सम्पन्न करते हुए पवित्रचित्तसे पाण्डपुत्रोंके

लिये युद्धमें अपराजयकी आकांक्षा करने लगी। ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराके अग्निमें आहुति देते हुए पाण्डुपुत्रोंके लिये अपरिमित आयुकी अभिलाष करते रहे। वह कुरुपति पाण्डुपुत्रोंके निकट जिस प्रकार प्रसन्न हुए उन्हें निज पुत्रोंके निकट वैसी प्रसन्नता प्राप्त न हुई।

उस समय वे यथोक्तवृत्त तथा यथोक्त विधानवित ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंके समादरणीय हुए। धृतराष्ट्रके पुत्रोंने उनके विषयमें जो अनिष्टाचरण किया था, उस समय वे लोग उस विषयको हृदयसे निकालके नरनाथ धृतराष्ट्रके अत्यन्त अनुवर्त्ती हुए; उस समय जिस किसी पुरुषने अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्रका तनिक भी अप्रिय कार्य्य किया, उसे ही कुन्तीपुत्र बुद्धिमान् धर्म्मराजने अपना शत्रु समझा। युधिष्ठिरके भयसे कोई मनुष्य ही राजा धृतराष्ट्र वा दुर्य्योधनके विषयमें दोषारोप करनेमें समर्थ न हुआ। हे शत्रुनाशन! गान्धारी और विदुर अजातशत्रु नरनाथ युधिष्ठिरके धीरज और शौचाचारसे जिस प्रकार सन्तुष्ट हुए, भीमके विषयमें वैसे सन्तुष्ट नहीं हुए। धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर राजा धृतराष्ट्रके अनुवर्त्ती होकर सदा उनका दर्शन करते हुए शोकितचित्त हुए, शत्रुघाती कुरुवंशावतंस धनञ्जय धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरको धृतराष्ट्रके अनुवर्त्ती देखकर मन ही मन पराजित होकर उनके अनुवर्त्ती हुए।

२ अध्याय समाप्त।

——

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जनपदवासी सब पुरुष राज्यके बीच राजा युधिष्ठिर और दुर्य्योधनके पिता नरनाथ धृतराष्ट्रकी प्रीतिके विषयमें कुछ भी अन्तर न मालूम कर सके।

हे महाराज! जब राजा धृतराष्ट्र दुर्म्मति पुत्रको स्मरण करते थे, तब वह भीमको अपराधी नहीं समझते थे। इस ही लिये भीम भी सदा दुष्टकी भांति नरनाथ धृतराष्ट्रके विषयमें कोप नहीं करते थे, उसके अनन्तर वृकोदर धृतराष्ट्रके परोक्षमें अप्रिय कार्य्य करते हुए सदा कृतकर्म्मा पुरुषोंके द्वारा उनकी आज्ञा पालन करते थे। भीमसेन धृतराष्ट्रके किसी कार्य्य तथा दुर्य्योधनके बुरे विचारको स्मरण करके सुहृदोंके बीच ताल ठोंकते थे।

एक बार भीमसेन धृतराष्ट्र और गान्धारीके समीप शत्रु दुर्य्योधन, कर्ण और दुःशासनकी प्रशंसा सुनके अत्यन्त कुपित होकर अभिमानपूर्व्वक इस प्रकार कठोर वाक्य कहने लगे, कि अनेक शस्त्र और अस्त्रधारी महायोद्धा अन्धे राजा धृतराष्ट्रके पुत्रगण मेरे परिघसदृश दोनों भुजाके सहारे इस लोकमें मारे गये; धृतराष्ट्रगण जिन भुजाओंके बीचमें पड़के नष्ट हुए, मेरे ये वेही परिघसदृश दुरासद दोनों भुजा विद्यमान हैं। धृतराष्ट्रके मूढ़ पुत्रगण युद्धमें जिन दोनों भुजाओंके बीच पड़के मृत्युको प्राप्त हुए, ये हाथीके सूण्ड समान पीन सुवृत्त मेरी भुजा विद्यमान हैं। जिन भुजाओंके द्वारा सुयोधन पुत्र और सुहृदोंके सहित नष्ट हुआ, मेरे ये चन्दनाह दोनों भुजा सुगन्ध चन्दनसे चर्च्चित होकर शोभित होती हैं।

नरनाथ धृतराष्ट्रने भीमके शल्यसदृश ऐसे तथा अन्य प्रकारके वचन सुनकर परम दुःख पाया; परन्तु वह बुद्धिमती समयकी गति जाननेवाली सर्व्व धर्म्मज्ञा गान्धारीने भीमसेनके उस वचनको अलीक समझा। जिसके अनन्तर पन्द्रह वर्ष बीतनेपर राजा धृतराष्ट्र भीमके वाक्यवाणसे पीड़ित होकर परम दुःखको प्राप्त हुए। कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर, श्वेताश्व अर्ज्जुन धर्म्मज्ञ माद्रीपुत्र नकुल सहदेव, कुन्ती और यशस्विनी द्रौपदी;—ये लोग उस विषयको न जाननेके हेतु उनके चित्तके अनुवर्त्ती हुए; परन्तु, उन लोगोंने राजाके चित्तकी रक्षा करते हुए कुछ अप्रिय वचन न कहा। अनन्तर

धृतराष्ट्र आंखोंमें आंसू भरके सुहृदोंको सम्मानित करते हुए उन लोगोंसे कहने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, जिस प्रकार कुरुकुलका नाश हुआ है, उसे तुम लोग विशेष रीतिसे जानते हो, मेरे ही अपराधसे कौरवोंके द्वारा वह सब उत्पात हुआ है। मैंने जो दुष्ट, विवश स्वजनोंके भयवर्द्धक दुर्योधनको कौरवोंके राज्यपर अभिषिक्त किया था, उस दुर्मतिदुर्योधनको मन्त्रियोंके सहित वध करनेके लिये श्रीकृष्णचन्द्र, मनीषी विदुर, भीष्म, द्रोण, कृप महात्मा भगवान व्यासदेव, सञ्जय और गान्धारीने जो सार्थक वचन कहे थे, उस हितकर वचनको मैंने जो पुत्रस्नेहसे युक्त होकर नहीं सुना और गुणवान् महात्मा पाण्डुपुत्रोंको यह पितृपैतामहसे प्राप्त प्रदीप्त श्रीप्रदान नहीं की उसहीसे मैं इस समय दुःखित होरहा हूं। गदाग्रज जनार्दनने राजाओंके विनाशको अवलोकन करके ही इसे परम मङ्गल समझा था। निज दोषसे उत्पन्न हुए अपरिमित वचनरूपी शल्योंको मैं हृदयमें धारण करता हूं ; पन्द्रह वर्ष व्यतीत हुआ आज यह विशेष दीखता है, कि मैं दुर्मति होनेसे उस पापकी शान्तिके लिये इस प्रकार निबद्ध हुआ हूं। मैं जो समयके चौथे भाग कभी आठवें भागमें केवल तृष्णा निवारणके योग्य भोजन किया करता हूं, उसे गान्धारीही जानती है। मेरे भूखा रहनेसे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर अत्यन्त दुःखी होंगे इसही भयसे मैं इस प्रकार भोजन करता हूं, कि जिसमें सारी प्रजा मुझे भूखा न समझे। यशस्विनी गान्धारी और मैं नियमच्छलसे अजिन पहरके ध्यान परायण होकर पृथ्वीमें दर्भशय्यापर शयन किया करता हूं ; युद्धमें जो मेरे न भागनेवाले एक सौ पुत्र मारे गये हैं, क्षत्रधर्म समझके मैं उस विषयमें शोक नहीं करता।

कुरुनन्दन धृतराष्ट्र धर्मराज युधिष्ठिरसे ऐसा वचन कहके फिर उनसे कहने लगे। हे यादवीपुत्र! तुम्हारा मङ्गल हो, तुम मेरा यह वचन सुनो। हे पुत्र! मैं तुमसे उत्तम रीतिसे रक्षित होकर सुखसे निवास करते हुए बार बार श्राद्ध और महादान करता हूं। हे पुत्र! मैं बलके अनुसार यथार्थ रीतिसे पुण्य सञ्चय करता हूं, इसीसे यह हतपुत्रा गान्धारी धीरज अवलम्बन करके उत्तम दृष्टिसे मेरा दर्शन करती है। हे कुरुनन्दन! जिन्होंने द्रौपदीकी बुराई की थी, वे नृशंस कौरवगण युद्धमें क्षत्रधर्मके अनुसार मरके शस्त्रकृत लोकोंमें गये हैं, इसलिये उन लोगोंके विषयमें कुछ भी कर्त्तव्य नहीं देखता हूं। परन्तु इस समय भी मुझे तथा गान्धारीको निज हितके लिये पुण्यकर्म करना चाहिये, उस विषयमें तुम्हें अनुमति करनी उचित है। हे राजेन्द्र! तुम सब प्राणियोंके बीच श्रेष्ठ हो, सबके राजा, गुरु और सदा धर्म वत्सल हो ; इसही लिये मैंने तुमसे ऐसा कहा है। हे राजन्! तुम्हारी अनुमति होनेसे मैं चीर वल्कल पहरके गान्धारीके सहित वनको अवलम्बन करूं। हे पुत्र! मैं वनवासी होके तुम्हें आशीर्वाद करते हुए निज कुलोचित कार्य्य करनेकी अभिलाष करता हूं। हे तात! मेरी अवस्था शेष हुई है, इस समय मैं पुत्रोंको ऐश्वर्य्य सौंपकर इस पत्नीके सहित वनमें जाकर वहां वायुभक्षी तथा निराहार होकर परम तपस्या करूंगा, तो तुम भी पृथ्वीपति होनेसे तपस्याके फलभागी होगे ; क्यों कि राजा लोग सत् तथा असत् कार्य्यके फलभागी हुआ करते हैं।

युधिष्ठिर बोले, हे नरनाथ! आपके इस प्रकार दुःखित होनेसे यह राज्य मुझे प्रीतिकर न होगा। मैं अत्यन्त दुर्बुद्धि राज्यासक्त और प्रमादी हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है, क्यों कि भाइयोंके सहित आपको दुःखार्त्त, उपवाससे अत्यन्त कृश, जिताहारी और भूतलशायी न जान सका। तुम्हारे गूढ़बुद्धिके द्वारा मैं मूढ़बुद्धि वञ्चित हुआ हूं ; क्यों कि आप पहले

मेरा विश्वास करके इस प्रकार दुःख भोग करते हैं। हे महीपाल! मेरे जीवित रहते जब आपको ऐसा दुःख मिला है, तब राज्य भोग, यज्ञ और सुखसे मुझे क्या प्रयोजन है? हे जननाथ! आपके इस दुःखसूचक वचनके सहारे राज्य तथा आपको पीड़ित करता हूं। आप हमारे पिता माता और परमगुरु हैं इसलिये हम लोग आपसे रहित होके कहां निवास करेंगे? हे नृपसत्तम! आपके औरस पुत्र युयुत्सु अथवा आप जिसके लिये इच्छा करें, वह पुरुषही इस राज्यपर अभिषिक्त होवे; मैं वनमें जाऊंगा, आप इस राज्यका शासन करिये आप अब अयशके सहारे मुझे न जलाइये। मैं राजा नहीं हूं, आपही राजा धर्म्मज्ञ और हमारे गुरु हैं; इसलिये मैं आपके अधीन होकर किस प्रकार आपके विषयमें आज्ञा करनेमें उत्साहित हूंगा? हे अनघ! दुर्य्योधनके निमित्त हमारे अन्तःकरणमें तनिक भी क्रोध नहीं है, उस समय होतव्यताके अनुसारही हम लोगोंके सहित अन्यान्य राजा मोहित हुए थे। दुर्य्योधनादिकी भांति हम लोग भी आपके पुत्र हैं; हे राजन्! इसलिये यदि आप मुझे परित्याग करके जायेंगे, तो मैं भी आपका अनुगामी होकर सत्यस्वरूप परमात्माको प्राप्त करूंगा। आपसे रहित होनेपर यह धन तथा सागरमेखला सारी पृथ्वी मुझे प्रिय न होगी। हे राजेन्द्र! हम लोग आपकेही अधीन हैं, इसलिये मैं सिर झुकाकर आपको प्रसन्न करता हूं, आप अपना यह सब ग्रहण करके मनका दुःख दूर करिये। हे पृथ्वीपति! मुझे बोध होता है, कि आप भवितव्यके अनुवर्त्ती होकरही इस प्रकार मनका दुःख भोग करते हैं, इसलिये मैं भाग्यसे ही आपकी सेवा करके आपके मनका दुःख दूर करूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे पुत्र! वनमें जाना हमारा कुलोचित कर्म्म है, इसलिये मेरा मन तपस्यामें प्रवृत्त हुआ है। हे पुत्र! मैं बहुत समय तक तुम्हारे समीप रहके तुमसे उपासित हुआ हूं, अब मैं वृद्ध हुआ, इसलिये मुझे वनमें जानेके लिये तुम्हें आज्ञा करनी उचित है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्र धर्म्मराजसे इतनी बात कहके कांपते हुए शरीरसे हाथ जोड़के फिर बोले। हे वसुधाधिप! मैं तुम लोगोंके सहित इस स्थानमें महात्मा सञ्जय और महारथ कृपसे विनय करनेकी इच्छा करता हूं। हे पुत्र! वृद्धावस्थाके धर्म्म वा वचन बोलनेसे मेरा मन मलिन तथा मुख परिशुष्क होता है। श्रीमान धर्म्मात्मा वृद्ध राजा धृतराष्ट्रने इतनी बात कहके सहसा चेतरहितकी भांति गान्धारीके शरीरका सहारा ग्रहण किया।

परवीरघाती कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर कुरुनन्दन धृतराष्ट्रको चेतरहितकी भांति बैठे हुए देखकर मनमें तीव्र व्यथाको प्राप्त हुए और बोले, हाय! जो सौ हजार हाथीका बल धारण करते हैं, उन्होंने इस समय स्त्रीका सहारा करके चेतरहितकी भांति शयन किया? जिन्होंने पहले भीमसेनकी लोहमयी प्रतिमा चूर कर दिया था, उन्होंने इस समय अबला स्त्रीका आश्रय ग्रहण किया? जब कि इस पृथ्वीपति राजा धृतराष्ट्रने मेरे निमित्त अनुचितरूपसे शयन किया, तो मैं अधर्म्मयुक्त हूं, इसलिये मेरी बुद्धि, शास्त्रज्ञान तथा मुझे धिक्कार है। यदि यह राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी भोजन न करेंगे, तो मैं भी अपने गुरु राजा धृतराष्ट्रकी भांति उपवास करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! तिसके अनन्तर धार्म्मिकश्रेष्ठ पाण्डुपुत्र जलकी भांति उत्तम शीतल कर कमलके सहारे धृतराष्ट्रका वक्षस्थल और मुखमण्डल धोने लगे। तब राजा धृतराष्ट्र महीपति युधिष्ठिरके रत्नौ-

थिं सम्पन्न पवित्र गन्धयुक्त हाथके स्पर्शसे चेतन्य होकर बोले, हे राजीवलोचन पाण्डुपुत्र! तुम अपने उत्तम शीतल कर कमलोंसे मुझे बार बार स्पर्श तथा आलीङ्गन करो, हे पुत्र! तुम्हारे स्पर्शसे मानो मैं फिर जीवित हुआ। हे नरनाथ! इस समय मैं तुम्हें मस्तकाघ्राण और दोनों भुजाओंसे स्पर्श करनेकी इच्छा करता हूं, ऐसा कहनेसे मैं परम परितुष्ट हूंगा। हे कुरुशार्द्दूल! मैं दिनके आठवें भागमें आहार करता हूं, इसीसे आज हाथ पांव आदि अंङ्गोंकी चलानेमें असमर्थ होरहा हूं, विशेष करके यह सब वृत्तान्त तुम्हें विदित करनेमें मुझे अत्यन्त परिश्रम हुआ, इसीसे मन दुःखित तथा संज्ञा विलुप्त हुई है। हे कुरुकुलोद्वह! फिर ऐसा समझता हूं, कि तुम्हारे इस अमृत रसयुक्त हाथके स्पर्शसे मैं जीवित हुआ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! उस समय कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर पितासे जठे राजा धृतराष्ट्रका ऐसा वचन सुनके सुहृदता पूर्व्वक धीरे धीरे उनके सारे शरीरको स्पर्श करने लगे; अनन्तर पृथ्वीपति धृतराष्ट्रने युधिष्ठिरके कर-स्पर्शसे प्राणलाभ करके अपनी दोनों भुजाओंसे पाण्डुपुत्रको आलिङ्गन करते हुए उनका मस्तक सूंघा। विदुर प्रभृति सब कोई अत्यन्त दुःखित होकर रोदन करने लगे। परन्तु अत्यन्त दुःखके कारण वे लोग राजा युधिष्ठिरसे कुछ कह न सके। हे महाराज! धर्म्म जाननेवाली गान्धारी भी व्याकुलचित्तसे मनके बीच दुःखको धारण करती हुई यह वचन बोली, कि आप, लोग ऐसा न करिये। कुन्तीके सहित अन्य स्त्रियें आंखोंसे आंसू बहाती हुई उनके चारों ओर बैठीं।

तिसके अनन्तर राजा धृतराष्ट्र युधिष्ठिरसे फिर बोले, हे महाराज! तुम मुझे तप करनेके लिये आज्ञा करो। हे तात! इस विषयमें बार बार आलोचना करते हुए मेरा मन मलिन होता है, इसलिये इसके अनन्तर मुझे क्लेश देना तुम्हें उचित नहीं है। वह कौरवेन्द्र धृतराष्ट्र जब पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरसे ऐसा कह रहे थे, उस समय योद्धाओंके बीच महान् आर्त्तनाद होने लगा। धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर जेठे पिता महाप्रभु राजा धृतराष्ट्रको विवर्ण, उपवाससे परिश्रान्त, कृशलक् और अस्थि मात्र अवशिष्ट देखकर आलिङ्गन करके शोकयुक्त होकर आंसू बहाते हुए फिर उनसे कहने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे नरनाथ! आपके प्रिय-कार्य्यको करना जैसा मुझे अभिलषित है, पृथ्वी वा जीवन मुझे वैसा अभिलषित नहीं है। हे महाराज! यदि आप मेरे कहनेसे भोजन करें, तो मैं जानूं, कि मैं आपको प्रिय हूं, तथा मुझपर आपकी कृपा है।

तिसके अनन्तर महातेजस्वी धृतराष्ट्र युधिष्ठिरसे बोले, हे पुत्र! जब तुम भोजनके लिये मुझसे अनुरोध करते हो, तो इस समय मुझे इच्छानुसार भोजन करना होगा।

राजेन्द्र धृतराष्ट्रके ऐसा ही कहते रहनेपर सत्यवतीपुत्र ऋषिश्रेष्ठ वेदव्यास मुनि वहां आके कहने लगे।

३ अध्याय समाप्त।

श्रीवेदव्यास मुनि बोले, हे महाबाहो युधिष्ठिर! महातेजस्वी कुरुनन्दन धृतराष्ट्र जो कहते हैं, तुम उस विषयमें कुछ विचार न करके उस कार्य्यको पूरा करो। यह राजा वृद्ध और विशेष करके पुत्ररहित हैं, इसलिये मुझे बोध होता है, कि ये इस समय इस प्रकार कष्ट सहनेमें समर्थ न होंगे। हे महाराज! करुणावेदिनी बुद्धिमती महाभागा यह गान्धारी भी धैर्य्यके सहारे हृदयमें पुत्रशोक धारण करती है; इस लिये मैं भी तुम्हें यही कहता हूं, कि जिसमें राजा इस स्थानमें न मरें, इस ही निमित्त इन्हें वनमें जानेके लिये आज्ञा करके मेरा वचन प्रतिपालन करो। जब कि अन्तकालमें राजर्षि-

योंको वनका अवलम्बन करना ही कल्याण-कारी है, तब ये भी पुराने राजर्षियोंके गन्तव्य पथमें गमन करें।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय महा-तेजस्वी धर्म्मराज राजा युधिष्ठिर अद्भुतकर्म्मा महामुनि व्यासदेवका ऐसा वचन सुनके उनसे बोले, हे भगवन्! आप हमारे महामान्य गुरु और इस राज्य तथा कुलके परम अवलम्ब हैं। हे भगवन्! राजा और आप मेरे पिता तथा गुरु हैं; जब कि पुत्र धर्म्मपूर्व्वक पिताका आज्ञाकारी हुआ करता है, तब आप लोग मुझे जो कुछ आज्ञा करेंगे, मैं उस ही समय उसे करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महातेजस्वी वेद जाननेवालोंमें श्रेष्ठ महाकवि व्यासदेवसे जब युधिष्ठिरने ऐसा वचन कहा, तब वह फिर उनसे कहने लगे।

हे महाबाहो भारत! तुमने जो कहा, वह सत्य है; परन्तु इस राजा धृतराष्ट्रने वृद्धत्वको प्राप्त होके परम ज्ञानपद अवलम्बन किया है। इस समय ये तुम्हारे द्वारा तथा मुझसे अनु-ज्ञात होकर निज अभिप्राय साधन करें; तुम उसमें विघ्नकारी मत बनो। हे युधिष्ठिर! तुम राजर्षियोंका युद्धमें वा विधिपूर्व्वक वनमें प्राण त्याग करना ही परम धर्म्म जानो। हे राजेन्द्र! तुम्हारे पिता पृथ्वीपति पाण्डु शिष्यवृत्ति अवल-म्बन करके गुरुकी भांति इस राजाकी उपासना करते थे, इससे इन्होंने पहले पर्व्वत परिमित रत्नोंसे सुशोभित बहुतसी दक्षिणायुक्त महायज्ञ करते हुए समस्त पृथ्वी भाग तथा प्रजापालन किया था। इसके अतिरिक्त तुम्हारे तेरहवर्ष प्रवासमें रहनेसे राजा धृतराष्ट्रने अपने पुत्रोंके निकट विपुल राज्य भाग तथा विविध वसु दान किया है। हे निष्पाप पुरुषश्रेष्ठ! तुम भी सेव-ककी भांति इस राजा धृतराष्ट्र तथा यशस्विनी गान्धारीकी गुरुसदृश सेवा करते हो। हे युधि-ष्ठिर! परन्तु इस समय इनके तपोनुष्ठानका समय हुआ है, इसलिये तुम इन्हें वनमें जानेके लिये आज्ञा करो, तुम्हारे ऊपर इनका अणु-मात्र भी क्रोध नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अब व्यासदेवने इतनी बात कहके इस प्रकार आज्ञा की और कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने उसे स्वीकार किया, तब वह वनको चले गये। भगवान् वेदव्यास मुनिके वनमें चले जानेपर पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर सिर झुकाके वृद्ध पिता धृतराष्ट्रसे बोले, हे तात! आपको जो अभिलषित है, भगवान् व्यासदेवने वही कहा है। महेष्वासकृप, विदुर, युयुत्सु और सञ्जय, ये लोग मुझसे जो कहेंगे, मैं उस ही समय उसे करूंगा, क्यों कि ये लोग सब ही मेरे माननीय तथा इस कुलके हितैषी हैं। हे नरनाथ! परन्तु मैं सिर झुकाके आपके समीप यह प्रार्थना करता हूं, कि आप पहले भोजन करिये, पीछे आश्रममें गमन करिये।

४ अध्याय समाप्त।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर प्रतापवान् धृतराष्ट्र राजा युधिष्ठिरसे अनुज्ञात होकर गान्धारीके सहित निज गृहमें गये। उस समय मन्दप्राण और मन्दगति बुद्धिमान् महीपति धृतराष्ट्र जीर्ण गजपतिकी भांति अत्यन्त कष्टसे पृथ्वीपर पांव रखने लगे। विद्वान् विदुर, सूत सञ्जय और परम धनुर्द्धारी शारद्वत कृपाचार्य्य उनके पीछे पीछे चलने लगे। हे महाराज! उन्होंने निज भवनमें प्रवेश कर प्रातःकर्म्म प्रभृति सब कार्य्य करके तथा द्विजा-तियोंको तृप्त करते हुए भोजन किया। हे भारत! धर्म्म जाननेवाली मनस्विनी गान्धारीने कुन्तीके सहित वधूगणसे उपचारके द्वारा पूजित होकर भोजन किया। पाण्डुपुत्र और विदुर प्रभृति भोजन करके कृताहार कुरुश्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्रकी उपासना करने लगे।

हे महाराज! तिसके अनन्तर अम्बिकापुत्र निकटमें बैठे हुए कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरकी पीठपर हाथ फेरके उनसे बोले, हे राजेन्द्र! तुम इस धर्म्म पुरस्कृत अष्टाङ्ग राज्यमें किसी प्रकार असावधान न होना। हे तात कुन्तीपुत्र! तुम विद्वान हो, इसलिये जिस प्रकार धर्म्मपूर्व्वक राज्यकी रक्षा कर सकोगे, वह विषय मेरे समीप सुनो। हे युधिष्ठिर! तुम सदा विद्यावृद्ध पुरुषोंकी उपासना करना, वे लोग जो कहें, उसे सुनना और कुछ विचार न करके ही उनकी आज्ञा पालन करना। हे महाराज! भोरके समय उठके विधिपूर्व्वक उनकी पूजा करते हुए कार्य्यके समय उन सबसे ही निज कर्त्तव्य पूछना। हे पुत्र! तुम निज हितके अभिलाषी होकर उनका सम्मान करनेसे वे लोग सदा तुमसे हितवचन कहेंगे। हे महाराज! तुम इन्द्रियोंको तुरङ्गकी भांति प्रतिपालन करना वे द्रविणकी भांति रक्षित होनेसे तुम्हारी हितकारी होंगी। कपटरहित पवित्रचित्तवाले, दान्त, विशुद्धवंशमें उत्पन्न हुए सत्कर्म्मशाली पितृ पैतामह क्रमके अनुसार पुरुषोंको मन्त्री पदपर नियुक्त करना। स्वराष्ट्र प्रतिवासी परीक्षायुक्त दूसरोंसे अविदित अनेक प्रकारके दूतोंके द्वारा सदा प्रचारण करना; निज पुरकी उत्तम रीतिसे रक्षा करना, दीवार और तोरण अत्यन्त दृढ़ करना और किलेके ऊपर सड़ाई स्थानके चारों ओर छः समाज निर्म्माण करना। उनके सब द्वार यथेष्ट बृहत् तथा सब ओर उत्तम रीतिसे विभक्त होवें और वे यत्नवान पुरुषोंके द्वारा रक्षित रहें। हे भारत! जिनका कुल और शील विदित है, वैसे पुरुषोंके द्वारा तुम्हारा अर्थ भली भांति रक्षित होवे और तुम स्वयं सदा भोजनादिके समय रक्षित रहना, हे युधिष्ठिर! शीलवान् कुलीन विद्वान् आत्मीय वृद्धगण तुम्हारी स्त्रियोंकी रक्षा करें; स्त्रियें गुप्त रीतिसे अहार विहार करें, मान्य लोगोंके आसनपर न बैठें और उनकी शय्यापर शयन न करें। हे महाराज! तुम विद्याविशारद कुलीन विनीत धर्म्मार्थमें निपुण और सरल द्विजगणको मन्त्री करके उनहीके सङ्ग विचार करना, कदाचित दूसरे बहुतसे लोगोंके सङ्ग सलाह न करनी, तृणारहित जङ्गल तथा गृहमें विचार करना, रात्रिके समय कदापि सलाह न करना; वानर, पक्षी, अनुकारी मनुष्य, जड़ और पङ्गुओंको विचार गृहमें न रहने देना। राजाओंके मन्त्रभेदसे जो सब दोष उत्पन्न होते हैं, मुझे बोध होता है, उनका किसी प्रकारसे हो समाधान नहीं किया जा सकता। हे अरिंदमन! इसलिये तुम मन्त्रिमण्डलीके बीच बैठकर मन्त्रणाभेदके दोष और मन्त्रगुप्तिके गुणोंको बार बार वर्णन करना। हे महाराज! तुम सदा आप्तजनोंके बीच अधिष्ठित होकर व्यवहारके सहारे पौर और जनपदवासियोंका शौचा जिस प्रकार मालूम हो सके, वैसा करना। हे भारत! तुम सन्तुष्टचित्तसे हितकारी दूतोंसे घिरके दण्डनीय धन तथा अपराधके परिमाणको विचारकर दण्डार्ह पुरुषोंको दण्ड प्रदान करना। हे युधिष्ठिर! तुम घूसखानेवाले, परस्त्रीगामी, उग्रदण्ड प्रधान, मिथ्यावादी, आक्रोशकारी, लोभी, हर्त्ता, साहसप्रिय, सभाविहार वेत्ता और वर्णदूषक पुरुषोंको देश, काल, तथा न्यायके अनुसार हिरण्यदण्ड अथवा प्राणवध करना। तुम प्रातःकालमें ही अपने व्ययकर्म्मकारी पुरुषोंके कार्य्योंको देखकर उसके अनन्तर सुसज्जित होकर भोजनादि समाधान करना। तिसके अनन्तर सर्व्वदा योद्धाओंको हर्षित करते हुए उनके विषयमें दृष्टि रखना। अनन्तर प्रदोष समयमें दूत तथा चरोंके निकट सम्वाद सुनके अपर रात्रिमें कार्य्य और अर्थका निर्णय करना; प्रतिदिन मध्यरात्रि तथा मध्याह्न समयमें विहार करना। हे भूरिदक्षिण भरतर्षभ!

जिन कार्य्योंका जिस प्रकार उपयुक्त समय निर्द्दिष्ट है, तुम उसही समयमें उन कार्य्योंको पूरा करते हुए नियमित समयमें अलंकृत होकर विश्राम करना; क्योंकि कार्य्यका पर्य्याय सदा चक्रकी भांति प्रवर्त्तित होते हुए देखा जाता है। हे तात! तुम न्यायके अनुसार अनेक प्रकारके कोष सञ्चय करनेका यत्न करना और विपरीत कार्य्योंको परित्याग करना। हे नरनाथ! राजाओंके अन्तरैषी शत्रुओंको दूतोंके द्वारा मालूम करके आप्त पुरुषोंके सहारे दूर-हीसे उनका वध करना, हे कुरुद्वह! सेवकोंके कार्य्यको देखकर उन्हें यथा योग्य पारितोषिक देना और अधिष्ठित, युक्त तथा अयुक्त पुरुषोंके सङ्ग कार्य्य करना। हे तात! तुम दृढ़व्रती शूर क्लेश सहनेवाले हितकारी भक्त पुरुषको सेनाका नायक करना। हे पाण्डुनन्दन! जो लोग सदा तुम्हारे शिल्पादि कार्य्योंको करते हैं, वे सब जनपदवासी गऊ तथा गर्द्दभकी भांति तुम्हारे कार्य्यको करें। युधिष्ठिर तुम सदा अपने और दूसरोंके छिद्रोंकी अन्वेषण करना; निज कार्य्यमें विक्रान्त अनुगामी हितकारी देशज पुरुषोंपर अनुग्रह करना। हे जननाथ! जो लोग गुणार्थी और विद्वान् हों, उनके गुणको ग्रहण करना योग्य है; क्योंकि वे लोग सदा अचलकी भांति अविचलित रूपसे निवास किया करते हैं।

५ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे भारत! तुम आत्मीय, परकीय, उदासीन और मध्यस्थोंके शत्रु, मित्रादि रूपी मण्डलको विशेष रीतिसे मालूम करना, हे अरिकर्षण! चार प्रकारके शत्रुओं और आततायियोंके बीच कौन मित्र तथा कौन शत्रु-मित्र है, उसे तुम्हें विशेष रीतिसे जानना उचित है। हे कुरुश्रेष्ठ! शत्रुगण मन्त्रियों, जनपदों, विविध किलों तथा समस्त बलमें इच्छानुसार भेद किया करते हैं; इसलिये जिस प्रकार उनमें फूट न हो उसही भांति सावधान होकर निवास करना। हे कुन्तीपुत्र! राजाओंके सन्धिप्रधान विषय सम्बन्धीय चार प्रकारके शत्रु, अग्निद प्रभृति छः आततायी मित्र और अमित्र मित्र ये आठ प्रकारके नृपति अर्थादि आठ प्रकारके सस्थानकार्य्य निवातादि बीस, नास्तिक्यादि चौदह दोष और मन्त्रादि अट्ठारह तीर्थ येही षष्टिगण हैं; नीतिज्ञ आचार्य्यगण इन्हें ही मण्डल कहा करते हैं। हे युधिष्ठिर! उसमें जो सन्धि विग्रह प्रभृति षाड़्गुण्य वर्णन करना होता है, उसे सुनो। हे कुरुसत्तम! राजाओंकी वृद्धि, क्षय और स्थानको विशेष रीतिसे जानना उचित है। हे महाबाहो! षष्टिगण और द्वादश नृपति, इनसे यहां षाड़्गुण्यज गुण बहत्तर प्रकारके हुआ करते हैं। हे कुन्तीनन्दन! जब अपना पक्ष बलिष्ठ और शत्रुका पक्ष दुर्ब्बल हो, तब राजा शत्रुओंको पराजित करके जय लाभ करे और जब परपक्ष सबल और अपना पक्ष दुर्ब्बल हो, तब विद्वान् राजा क्षीण होकर शत्रुओंके सङ्ग सन्धि करते हुए बहुतसा धन सञ्चय करे। हे भारत! जब राजा शीघ्र युद्धमें जानेके लिये समर्थ होवे, तब वह विचारपूर्व्वक स्थानके सहित सब वस्तुओंको विधिके अनुसार ठीक करे। हे भारत! मित्र और बल क्षीण होनेपर सन्धिविशारद राजा जिससे शत्रुको अल्प फल प्राप्त हो वैसी भूमि सोना और चांदी आदि इधर धनं तथा बहुतसा हिरण्य दान करे और स्वयं विपरीत वस्तु ग्रहण करे। हे भरतर्षभ! सन्धि करनेके समय जो सन्धि करे, उसके पुत्रको विश्वासके लिये निकट रखे। जब कोई आपदकाल उपस्थित हो, तब विपरीत पुरुषोंको निकटमें रखना कल्याणकारी नहीं है; इसलिये तुम उपाय और मन्त्रको जानके उन्हें परित्याग करनेके लिये यत्न करना। हे राजेन्द्र! निज राज्यर-

चक महाबली नरपति राजा तथा प्रजा समूहकी पूजा करना और क्रमसे तथा एक ही समयमें शत्रुओंके सब व्यवसायको रुद्ध करके यत्नपूर्व्वक उन्हें पीड़न स्तम्भन तथा उनका कोष भङ्ग करना। हे कौन्तेय! ऊंचे पदका, अभिलाषी राजा समीप आये हुए सामन्त और पृथिवी विजयकी इच्छा करनेवाले राजाकी हिंसा न करना बल्कि तुम गणभेदके निमित्त मन्त्रियोंके सहित योग लाभकी आकांक्षा करना। बलवान् राजा साधुओंको संग्रह और पापियोंको निग्रह करे, परन्तु निबल पुरुषोंको कदापि उच्छिन्न न करे। हे राजशार्दूल! यदि बलवान पुरुष तुम्हें निबल समझकर आक्रमण करे, तो तुम वैतसीवृत्ति अवलम्बन करके निवास करना। क्रमसे साम आदि उपायके सहारे उसे निवृत्त करनेकी चेष्टा करना उससे असमर्थ होनेसे मन्त्रियोंके सहित युद्धके निमित्त बाहिर होना। जो लोग उसके प्रियकारी हों, उनके कोष तथा पौरको दण्डके द्वारा दण्डित करना, परन्तु सभी असम्भव होनेपर मुख्य उपाय शरीरके सहारे युद्धके निमित्त बाहिर होना, इस क्रमके अनुसारहो केवल शूर पुरुषोंका शरीर मुक्त हुआ करता है।

६ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे राजसत्तम युधिष्ठिर! ऐसे स्थलमें प्रबल और निबल शत्रुके निमित्त इस हियोनि सम्भूत दो प्रकारकी उपाययुक्त बहुकल्प सन्धि तथा विग्रहकी पर्य्यालोचना करना। हे कौरव्य! शत्रुके तुष्ट, पुष्ट, बलयुक्त तथा बुद्धिमान होनेपर अपने बलाबलको जानके स्थिरभावसे जयका उपाय सोचते हुए जबतक जय प्राप्त न हो, तबतक उसकी उपासना करना। हे राजेन्द्र! उपासनाके समय शत्रुका बल अतुष्ट और अपुष्ट होनेपर युद्धयात्राके लिये उद्योग करना और बलपूर्व्वक निष्पीड़नका समय उपस्थित होनेपर उसके बाद युद्धके निमित्त यात्रा करना। तिसके अनन्तर युद्धमें शत्रुओंके व्यसन, भेदन, कर्षण, भीषण और बल क्षय करना। शास्त्रविशारद राजा प्रमाणके पहिले अपनो और शत्रुओंकी तीन प्रकारकी शक्ति अर्थात् उत्साह शक्ति, प्रभुशक्ति और मन्त्रशक्तिका बिचार करे। हे भारत! राजा उत्साह, शक्ति, प्रभुशक्ति और मन्त्र शक्तिसे युक्त होकर युद्धके निमित्त यात्रा करे और बिपरीत कार्य्योंको परित्याग करे। हे प्रभु! महीपति धनबल, मित्रबल, अटवी बल, प्राणिबल और श्रेणीबल ग्रहण करे। हे राजन्! मेरा यही मत है, कि सब लोकोंके बीच मित्रबल और धनबल मुख्य है और श्रेणीबल तथा भृत्य ये सब तुल्य हैं। हे नरनाथ! दूतबल परस्पर तुल्य है, समय उपस्थित होनेपर राजा उसे बहुत समयमें जान सकता है।

हे नराधिप! आपद अनेक प्रकारको मालूम करना; हे कौरव्य! राजाओंको जो सब आपद उपस्थित होती हैं, उसे पृथक् करके कहता हूं, सुनो। हे राजन् पाण्डुपत्र! सब आपदोंके बीच विकल्प अर्थात् इति प्रभृति अनेक प्रकारकी आपद उपस्थित होनेपर राजा सामादि उपायके सहारे उस हो इति प्रभृतिको प्रकाश्य रूपसे आपद कहके गिने। हे परन्तप! राजा देश, काल आत्मगुणसदृश बल तथा सहलसम्पन्न होकर युद्ध करनेके लिये गमन करे। हे पाण्डव! वृद्धि और उदय निरत बलवान राजा हृष्टपुष्ट बलसे युक्त होकर अकालमें भी युद्ध करनेके निमित्त गमन करे। तूण जिसमें पत्थर, घोड़े और रथ प्रवाह, जिसका करार तथा तट ध्वजारूपी वृक्षोंसे संवृत्त और बहुतसे पैदल तथा हाथियोंके द्वारा जो कर्दममय हो, राजा युक्तिके सहित शत्रुनाशके समयमें ऐसी नदीसे शकट व्यूह प्रयोग करे। हे बिभु! शुक्राचार्य्य जो शास्त्र जानते हैं, उसमें ही यह सब

विहित है। राजा निज बलकी ओर दृष्टि रखके परबलको प्रचारण करते हुए निज भूमि अथवा पर भूमिमें युद्ध करे; महीपति निज-बलको प्रसन्न करके बलवान् परबलको निराकृत करे और निज विषयको जानके सामादि उपायके सहारे पर विषयमें गमन करनेकी इच्छा करे।

हे महाराज! इस लोकमें सब प्रकारसे यत्नपूर्व्वक शरीरकी रक्षा करना, शरीर रक्षित होनेसे ही इस लोक और परलोकमें परम मङ्गल लाभ हुआ करता है। हे राजन्! राजा लोग इन सब विषयोंका पूरी रीतिसे आचरण करते हुए धर्म्मपूर्व्वक प्रजापालन करनेसे परलोकमें स्वर्ग प्राप्त करते हैं। हे तात कुरुश्रेष्ठ! तुम भी दोनों लोक प्राप्त करनेके लिये सदा ऐसा ही आचरण करते हुए प्रजाके हितमें रत रहो। हे नृपसत्तम! यद्यपि भीष्म, कृष्ण और विदुरने तुमसे सब कहे हैं, तथापि तुम्हारे ऊपर मेरी अत्यन्त प्रीति रहनेसे अवश्य ही मुझे कहना पड़ा। हे भूरिदक्षिण! तुम न्यायके अनुसार यह सब आचरण करनेसे प्रजासमूहके प्रियपात्र होकर सुरपुरमें सुख-भोगनेमें समर्थ होगे। हे जननाथ! जो महीपति सहस्र अश्वमेध करता है और जो धर्म्मपूर्व्वक प्रजापालन करता है, उन दोनोंको तुल्य फल प्राप्त होता है।

७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पृथ्वीपति! आपने जो कहा, मैं उन सब कार्य्योंको करूंगा, अनन्तर जो जो करना होगा, उसके लिये आप मुझे आज्ञा करिये। हे पार्थिवश्रेष्ठ! भीष्मके सुरलोकमें जाने तथा मधुसूदन कृष्ण, विदुर और सञ्जयके न रहनेपर अब दूसरा कौन मुझसे ऐसा कहेगा। हे महीपाल! आज आपने मेरे हितैषी होकर जो कुछ मुझे आज्ञा की, मैं वही करूंगा; इसके अनन्तर आप वनमें जानेसे निवृत्त होइये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतर्षभ! उस राजर्षि धृतराष्ट्रने बुद्धिमान धर्म्मराजका ऐसा वचन सुनके कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरके आज्ञा करनेकी इच्छा की।

धृतराष्ट्र बोले, मुझे अत्यन्त श्रम हुआ है, इसलिये तुम कुछ समय तक शान्त रहो, इतनी बात कहके उन्होंने गान्धारीके गृहमें प्रवेश किया। समयको जाननेवाली धर्म्मचारिणी गान्धारी उस समय आसनपर बैठे हुए प्रजापतिसदृश पति धृतराष्ट्रसे बोली, हे स्वामी! आप तो महर्षि व्यासदेवसे अनुज्ञात तथा युधिष्ठिरसे आदिष्ट हुए हैं, इसलिये कब वनमें चलियेगा?

धृतराष्ट्र बोले, मैं जब पिताकी आज्ञा पा चुका, तब शीघ्र ही वनमें गमन करूंगा, परन्तु मैं निज गृहमें सबको प्रकृतिस्थ कराके उन निन्दित द्यूतक्रीड़ा करनेवाले पुत्रोंके लिये प्रेतभावके अनुगत वस्तु दान करनेकी इच्छा करता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय महीपति धृतराष्ट्रने धर्म्मराजसे इतनी कथा कहके उन्हें प्रजासमूहको बुलानेके लिये भेजा, उन्होंने उनके कहनेके अनुसार नगरकी सारी प्रजाको बुलाया। अनन्तर ब्राह्मण, कुरुजाङ्गलवासी क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रगण प्रहृष्ट चित्तसे वहां पर आये।

तिसके अनन्तर राजा धृतराष्ट्रने अन्तःपुरसे बाहिर होकर समस्त प्रजा तथा आये हुए पुरुषोंको देखा। हे पृथ्वीनाथ! बुद्धिमान राजा धृतराष्ट्र उन समागत पुरवासी, जनपदवासी, सुहृद, ब्राह्मण और अनेक देशोंसे आये हुए राजाओंको वहांपर इकट्ठे हुए देखकर बोले। आप लोग बहुत समयसे कुरुकुलके सहित एकत्र वास करते हुए परस्परमें परस्परके

हितैषी हुए हैं, परन्तु उपस्थित समयमें मैं आप लोगोंसे जो कहता हूं, आप लोग विचार न करके मेरे बचनकी रक्षा करिये। व्यासदेव और कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिरकी आज्ञाके अनुसार मैं बनमें जानेकी अभिलाष करता हूं, आप लोग भी इस विषयमें विचार न करके मुझे आज्ञा करें और मेरी यह प्रार्थना है, कि आप लोगोंके सङ्ग मेरी यह प्रीति जिसमें सदा अविचलितभावसे निवास करे, मुझे ऐसा मालूम है, कि वह प्रीति अन्य देशीय राजाओंके सहित स्थिर रहनेकी नहीं है। हे अनघगण! मैं गान्धारीके सहित पुत्रविरह और अवस्था क्रमके अनुसार अत्यन्त श्रान्त तथा उपवाससे कृश हुआ हूं। युधिष्ठिरको राज्य मिलनेसे मैं उत्तम रीतिसे सुखभोग करता हूं। हे सत्तमगण! दुर्य्योधनके ऐश्वर्य्यसे युधिष्ठिरके ऐश्वर्य्यको मैं श्रेष्ठ बोध करता हूं। हे महाभागगण! इस समय मुझे हतपुत्र वृद्ध अन्ध धृतराष्ट्रकी बनमें जानेके अतिरिक्त और गति कहां है? इसलिये तुम लोग मुझे बनमें जानेके लिये आज्ञा करो।

हे भरतर्षभ! वे सब कुरुजाङ्गलवासी प्रजा धृतराष्ट्रके बचनको सुनके गद्गद स्वरसे बिलाप करती हुई रोदन करने लगीं। महातेजस्वी धृतराष्ट्र उन बिलाप करनेवाले शोकपरायण कुरुजाङ्गलवासियोंसे फिर ऐसा बचन कहने लगे।

८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे तातगण! जिस प्रकार शान्तनुने इस बसुन्धराको पालन किया था, उस ही भांति बिचित्रबीर्य्यने भीष्मके द्वारा रक्षित होकर तुम लोगोंको पालन किया था, यह तुम लोगोंको बिदित है, इसलिये उसमें सन्देह नहीं है। तुम लोगोंको यह भी बिदित है, कि मेरे भाई पाण्डु भी तुम लोगोंको पूरी रीतिसे पालन करके प्रियपात्र हुए थे। हे अनघगण! मैंने भी सम्यक् रीतिसे तुम लोगोंकी जो सेवा की थी, वह यदि असम्यक् हुई हो, तो उसे तुम लोग अतन्द्रित होकर क्षमा करना। यद्यपि उस मन्दमति दुर्बुद्धि दुर्य्योधनने इस अकण्टक राज्यको पाके भोग किया था, तथापि उसने उस समय तुम लोगोंका कुछ अपराध नहीं किया। केवल उस दुर्बुद्धिके अभिमान तथा निजकृत दुर्णयसे ही राजाओंके बीच यह महत् बिमर्द हुआ; मैं हाथ जोड़के तुम लोगोंके निकट यह प्रार्थना करता हूं, कि उसने भला किया हो वा बुरा किया हो, उसे तुम लोगोंको मनमें न लाना चाहिये। तुम लोग मुझ वृद्ध हतपुत्र दुःखित नरपतिको पूर्व्व-राजाओंका पुत्र करके जानना।

इसके अतिरिक्त यह हतपुत्रा कृपित कृपणा, पुत्रशोकार्त्ता तपस्विनी गान्धारी मेरे सहित तुम लोगोंके निकट यह प्रार्थना करती है, कि हम लोग तुम्हारे शरणागत हुए, इस समय तुम लोग हमें हतपुत्र और वृद्ध जानके बनमें जानेके लिये आज्ञा करो, तुम लोगोंका मङ्गल हो। इस कुन्तीपुत्र कुरुराज युधिष्ठिरको तुम लोग सम तथा बिषम पथसे रक्षा करना और देखना ये कदापि बिषम पथमें गमन न करें; इनके चारों भाई अत्यन्त बलशाली लोकपाल सदृश और सर्व्वधर्म्मार्थदर्शी हैं; वेही इनके मन्त्री हैं। सब प्राणियों तथा समस्त जगतके प्रभु छः ऐश्वर्य्योंसे युक्त ब्रह्मासदृश ये महातेजस्वी युधिष्ठिर तुम लोगोंको पालन करेंगे। मेरा अवश्य बक्तव्य होनेसे मैंने तुम लोगोंसे ऐसा कहा है। तुम्हारे इस न्यासस्वरूप युधिष्ठिरको तुम लोगोंको प्रदान किया और तुम लोग भी मेरे द्वारा वीरश्रेष्ठ युधिष्ठिरके निकट थातीरूपसे अर्पित हुए। यदि मेरे पुत्रों अथवा मेरे अन्य किसी पुरुषके द्वारा तुम लोगोंको कुछ दुःख उपस्थित हो, तो तुम इनके निकट आवेदन करना। पहले तुम लोगोंने मेरे ऊपर

किसी प्रकार क्रोध नहीं किया, तथा तुम लोगोंके अत्यन्त गुरुभक्त होनेसे मैं हाथ जोड़के तुम लोगोंको नमस्कार करता हूं । हे अनघगण! मैं गान्धारीके सहित उन अस्थिर बुद्धि लोभी और कामाचारियोंके निमित्त तुम लोगोंसे चमा मांगता हूं। वे सब पुरवासी और जनपदवासी लोग धृतराष्ट्रका ऐसा बचन सुनके आंसू भरे नेत्रसे परस्परको देखते हुए कुछ भी कहनेमें समर्थ न हुए।

८ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे कौरवनाथ! वे सब पुरवासी और जनपदवासी लोग बूढ़े राजा धृतराष्ट्रका ऐसा बचन सुनके संज्ञाविहीन हुए। महीपति राजा धृतराष्ट्र उन लोगोंको मौनावलम्बी तथा बिसूरते देखकर फिर कहने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सत्तमगण! पिता कृष्णद्वैपायन और धर्म्मज्ञ राजा युधिष्ठिरने धर्म्मपत्नी गान्धारीके सहित मुझ बृद्ध हतपुत्र बहुविध बिलापकारी दीन धृतराष्ट्रको बनबासके निमित्त आज्ञा की है। हे अनघगण! हम दोनों सिर झुकाके बार बार तुम लोगोंके निकट प्रार्थना करते हैं, इसलिये गान्धारीके सहित मुझे बनमें जानेके लिये तुम लोगोंकी आज्ञा करनी उचित है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! वे कुरुजाङ्गलबासी प्रजासमूह धृतराष्ट्रके ऐसे करुणायुक्त बचनको सुनके सब कोई इकट्ठे होकर रोदन करने लगे; उन लोगोंने पितामाताकी भांति शोकसे सन्तापित होकर दुपटेके सहित दोनों हाथोंसे मुंह मूंदके मुहूर्त्तभर रोदन किया; अनन्तर उन्होंने शून्यप्राय हृदयमें धृतराष्ट्रके प्रवासजनित दुःखको धारण करते हुए चेतरहितकी भांति निवास किया। कुछ समयके अनन्तर उन लोगोंने धृतराष्ट्रके बियोगजनित दुःखको त्यागके धीरे धीरे आपसमें अपना अपना मत प्रकाश किया। हे राजन्! अनन्तर उन सब लोगोंने एकत्रित होकर सन्धान करते हुए एक ब्राह्मणके समीप अपना अपना बचन सुनाके वह सब धृतराष्ट्रसे कहनेके लिये उन्हें अनुरोध किया। हे महाराज! अनन्तर सर्व्वसम्मत धर्म्मबिशारद पवित्राचारी वह ऋक्वेत्ता शाम्ब नाम ब्राह्मण राजासे वह सब बचन कहने लगा।

हे महाराज! उस मेधावी अत्यन्त प्रगल्भ बिप्रने सभाको प्रसन्न तथा सम्मानित करके राजा धृतराष्ट्रसे कहा, हे महाराज! इन लोगोंका सब बचन मुझमें अर्पित है। हे बीर नरनाथ! वह सब मैं आपसे कहता हूं, आप सुनके स्वीकार करिये। आप हम लोगोंको अपना और अपनेको हम लोगोंका सुहृत कहते हैं, सो वह सब सत्य है, इस बिषयमें कुछ भी मिथ्या बचन नहीं हुआ। हे प्रजापाल! इस बंशके राजाओंके बीच जो जिस समय राजा हुए हैं, उस समयें वह प्रजाके प्रिय होनेके अतिरिक्त अप्रियभाजन नहीं हुए; बरन पिता और भ्राताकी भांति हम लोगोंको प्रतिपालन किया है, राजा दुर्य्योधनने भी हम लोगोंके बिषयमें कुछ अत्याचार नहीं किया। हे महाराज! सत्यवतीपुत्र महात्मा महामुनि व्यासने आपको जैसा कहा है, आप इस समय वही करिये; वेही हमें लोगोंके परम गुरु हैं। हे राजन्! हम लोग आपके द्वारा परित्यक्त होकर अत्यन्त शोकार्त्त तथा दुःखित हुए; परन्तु हम लोग बहुत कालके लिये आपके गुणसमूहसे बद्ध होकर निवास करेंगे। हे पार्थिव! राजा शान्तनु, चित्राङ्गद और भीष्मके बलसे रचित आपके पिता बिचित्रबीर्य्य तथा आपके कृपादृष्टिबलसे पृथ्वीपति पाण्डुने जिस प्रकार हम लोगोंको पालन किया था, राजा दुर्य्योधनने भी उस ही प्रकार हम लोगोंको पालन किया है। हे नृपवर! आपके पुत्रने हम

लोगोंका कुछ भी अप्रिय कार्य्य नहीं किया, इस लिये हम लोग उस राजाका पिताकी भांति विश्वास करते थे, हम लोग जिस प्रकार सुखसे रहते थे, आपको वह सब विदित है। उस ही भांति बुद्धिमान कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरके द्वारा सहस्र वर्षतक प्रतिपालित होकर परम सुख-भोग करेंगे। हे नरनाथ! ये धर्म्मात्मा भूरिदक्षिणा युधिष्ठिर कुरु, सम्वर और धीमान भरत प्रभृति राजर्षियोंके व्यवहारके अनुवर्त्ती हुए हैं। हे महाराज! इसलिये इन युधिष्ठिरके विषयमें कुछ भी वक्तव्य नहीं है। हम लोगोंने आपके द्वारा प्रतिपालित होकर सुखसे वास किया है, उस समय पुत्रके सहित आपका अणुमात्र भी अप्रिय कार्य्य नहीं था। हे कुरुनन्दन! परन्तु आप इस ज्ञातिविनाशके विषयमें दुर्य्योधनके ऊपर दोषारोप करते हैं, उसके निमित्त हम आपसे विनय करते हैं, कि आप वैसा न कहिये।

ब्राह्मण बोला, हे महाराज! जो कुरुकुल नष्ट हुआ है, वह दुर्य्योधन, आप कर्ण तथा शकुनिके द्वारा नहीं हुआ। जिसे निवारण नहीं किया जा सकता, उसे ही दैव जानो; दैव पुरुषार्थके द्वारा कदापि बाधित नहीं होता। हे महाराज! योद्धाओंमें श्रेष्ठ कौरवोंके हाथसे अट्ठारह अक्षौहिणी सेना अट्ठारह दिनमें मारी गई। हे नरनाथ! दैवबलके अतिरिक्त भीष्म, द्रोण, कृप, महात्मा कर्ण, महावीर युयुधान, धृष्टद्युम्न और भीम, अर्ज्जुन, नकुल-सहदेव, इन चार पाण्डुपुत्रोंके द्वारा इस समस्त सेनाका नाश नहीं हुआ। युद्धमें क्षत्रिय तथा क्षत्रबन्धुगण अवश्य ही मरते हैं और समय पहुंचनेपर सभी मृत्युके मुखमें पतित हुआ करते हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! उन बाहुबलशाली क्षत्रियोंके हाथसे घोड़े हाथी और रथसे युक्त इस समुद्र सहित पृथ्वीके सब वीर मारे गये हैं। हे महीपाल! आपके वे पुत्र तथा आप अथवा कर्ण, शकुनि वा आपके सेवक, कोई भी महात्मा राजाओंके विनाश विषयमें कारण नहीं हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! सहस्रों राजा लोग जो विनष्ट हुए हैं, उसे दैवकर्म्म जानो, इस विषयमें कोई भी कुछ कहनेमें समर्थ नहीं होता; आप हम लोगोंके गुरु और समस्त जगतके प्रभु हैं। हे धर्म्मात्मन्! इसलिये हम लोग आपको वनमें तथा आपके पुत्रोंको स्वर्गमें जानेके लिये आज्ञा करते हैं। वह राजा दुर्य्योधन सहायोंके सहित वीरलोक पावें और द्विजोंकी आज्ञानुसार सुरलोकमें सुखभोग करें। हे सुव्रत! आपकी भी पुण्यधर्म्ममें परम स्थिति तथा समस्त वेदधर्म्म प्राप्त हों; पाण्डवोंके ऊपर जो आपकी दृष्टि पड़ी है, वह वृथा नहीं है, उस दृष्टिबलसे वे लोग पृथ्वीकी तो बात दूर रहे, स्वर्गको भी पालन करनेमें समर्थ होंगे। हे धीमान् कुरुकुलप्रवर! प्रजा सम वा विषमपथमें शील भूषणसम्पन्न पाण्डवोंकी अनुवर्त्ती होगी; पृथिवीपति पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर पुराने राजाओंके द्वारा अपराध पुरुषों तथा ब्राह्मणोंको प्रदान किये हुए अनुत्तम हार तथा परिच्छद प्रभृतिकी रक्षा करेंगे।

भरतकुल श्रेष्ठ अक्षुद्र-सचिव मेधावी महामना कुन्तीपुत्र दीर्घदर्शी मृदुदान्त धनाध्यक्षकी भांति शत्रुओंके विषयमें भी सानुकूल होकर सरलचित्तसे सदा पुत्रकी भांति हम लोगोंका पालन करते हैं। हे राजर्षि! इस धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरके संसर्गसे भीम तथा अर्ज्जुन प्रभृति भी अप्रिय आचरण न करेंगे। हे कारव्य! ये वीर्य्यवान महात्मा पुरवासियोंके हितैषी भीम प्रभृति पाण्डवगण मृदुस्वभाववाले पुरुषोंके विषयमें मृदुता और उग्रस्वभाववालोंके विषयमें उग्रता आचरण किया करते हैं। हे महाराज! कुन्ती, द्रौपदी, उलूपी और सात्वत कुलमें उत्पन्न हुई सुभद्रा, ये लोग इस समयमें कदापि आपके प्रतिकूल आचरण न करेंगी; पुरवासी और

जनपदवासी प्रजासमूह युधिष्ठिरके द्वारा चिन्हित होकर आपके इस स्नेहको कदापि न भूलेंगे। महारथ कुन्तीपुत्रगण धर्म्मपरायण होके अधार्म्मिक मनुष्योंको भी पालन करेंगे। हे पुरुषश्रेष्ठ महाराज! आपको हम लोग प्रणाम करते हैं, आप युधिष्ठिरसे मानसिक दुःख दूर करके धर्म्मकार्य्य करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सब लोगोंने उस ब्राह्मणके उत्तम गुणयुक्त धर्म्म समन्वित वैसे वचनका सम्मान करते हुए धन्य धन्य कहके ग्रहण किया। उस समय धृतराष्ट्रने भी उस वाक्यको उत्तम कहते हुए धीरे धीरे प्रजासमूहको विसर्ज्जन किया। हे भरतकुलतिलक! राजा धृतराष्ट्रने उस प्रजासमूहसे पूजित तथा शुभदृष्टिसे अवलोकित होकर हाथ जोड़के उस ब्राह्मणको पूजा की। तिसके अनन्तर उन्होंने गान्धारीके गृहमें प्रवेश करके रात्रि बीतनेपर जो किया था, उसे सुनो।

१० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर रात बीतनेपर सवेरे अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्रने विदुरको युधिष्ठिरके भवनमें भेजा। बुद्धिमान् पुरुषोंमें अग्रगण्य महातेजस्वी विदुर राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञानुसार अच्युत ईश्वर युधिष्ठिरके निकट जाके उनसे बोले, हे राजन्! महाराज धृतराष्ट्र वनवासके निमित्त दीक्षित हुए हैं, वह आगामी कार्त्तिकी पूर्णिमाके दिन वनमें जायंगे, हे कुरुकुलप्रवर! वह महात्मा गङ्गातनय भीष्मके श्राद्ध दानके अभिलाषी होकर आपके समीप किञ्चित धनको आकांक्षा करते हैं और यदि आपकी अनुमति हो, तो द्रोण, सोमदत्त, बुद्धिमान वाह्लीक, पुत्रगण, सैन्धवापसद जयद्रथ तथा जो सब सुहृद युद्धमें मरे हैं, उन सबका भी श्राद्ध करें। पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर और गुडाकेश अर्ज्जुनने विदुरका वैसा वचन सुनके प्रसन्न होकर सम्मानपूर्व्वक उसे स्वीकार किया। परन्तु उस समय महातेजस्वी दृढ़क्रोधी भीमने दुर्य्योधनके कार्य्योंको स्मरण करते हुए विदुरके उस वचनको स्वीकार न किया; किरीटि फाल्गुन भीमसेनका अभिप्राय जानके किञ्चित विनयपूर्व्वक पुरुषश्रेष्ठ भीमसे बोले, हे भीम! बूढ़े राजा पिता धृतराष्ट्र वनवासके निमित्त दीक्षित होकर सुहृदोंके ऊर्द्धदेहिक श्राद्ध करनेके अभिलाषी हुए हैं। हे महाबाहो कौरव! जब वह भीष्मादिके ऊर्द्धदेहिक कार्य्यकेलिये तुम्हारे द्वारा निर्ज्जित धन दान करनेकी इच्छा करते हैं, तब उस विषयमें आपको अनुमति करनी ही उचित है। हे महाबाहो! देखिये समयका कैसा उलट फेर है, कि पहले जो हम लोगोंके द्वारा याचित हुए थे आज वेही धृतराष्ट्र भाग्यवशसे हमलोगोंके निकट प्रार्थना करते हैं; जो धृतराष्ट्र सारी पृथ्वीके अधिपति होकर शत्रुके द्वारा मन्त्रियोंके मारे जानेसे वनमें जानेके लिये अभिलाषी हुए हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! दानके अतिरिक्त अन्यकार्य्यमें आपकी प्रवृत्ति न हो, क्यों कि दानके अतिरिक्त अन्य कार्य्यमें प्रवृत्ति होनेसे अयश और अधर्म्म हुआ करता है। हे भरतर्षभ! आप सबके प्रभु ज्येष्ठ भ्राता राजा युधिष्ठिरके निकट शिक्षित होइये, राजाके विद्यमान रहते आप लेने देनेमें समर्थ नहीं हैं।

विभत्सु अर्ज्जुनके ऐसा कहनेपर धर्म्मराजने भी उन्हें सम्मानित किया, परन्तु उस समय भीमसेन क्रोधपूर्व्वक उनसे बोले, हे फाल्गुन! मुझे ऐसी विवेचना होती है, कि हम लोग भीष्म, राजा सोमदत्त, भूरिश्रवा, राजर्षि वाह्लीक, महात्मा द्रोणाचार्य्य तथा अन्यान्य सुहृदोंका श्राद्धादि करेंगे और कुन्ती कर्णका श्राद्ध दान करेगी। हे कुरुनाथ! धृतराष्ट्र दान न करने पावेंगे, ऐसा होनेसे जिन कुलपांसनोंके द्वारा यह पृथ्वी विनाशित हुई है, वे हमारे परम शत्रु दुर्य्योधनादि अत्यन्त कष्टसे

परलोकमें गमन करेंगे। हे अर्जुन! बारह वर्षका बैर, घने वन तथा अज्ञातवास और द्रौपदीके शोकवर्द्धन आदि सब विषयोंको क्या तुम भूल गये? जब तुमने पाञ्चालपुत्री द्रौपदीके सहित आभरण तथा भूषणरहित होकर कृष्णाजिन पहरके राजा धृतराष्ट्रके समीप गमन किया था उस समय हम लोगोंके विषयमें उनका कैसा स्नेह था? जब तेरह वर्षतक बनके बीच वन्यवृत्ति अवलम्बन करके जीविका निर्व्वाह करते थे, उस समय द्रोण, भीष्म और सोमदत्त, ये लोग कहां थे? उस समय तुम्हारे इन ज्येष्ठ पिताने पिताकी भांति तुम्हारे विषयमें क्यों नहीं दृष्टि की? हे पार्थ! इस कुलपांसन दुर्य्योधनने ही उस समय विदुरसे यह बात पूछी थी, कि "क्या जूएमें जीत हुई?" उसे तुम एकबारही भूल गये हो? भीमसेनके ऐसा कहते रहनेपर कुन्तीपुत्र बुद्धिमान राजा युधिष्ठिर उनको निन्दा करते हुए यह वचन बोले, कि शान्त होजाओ।

११ अध्याय समाप्त।

अर्जुन बोले, हे भीम! आप हमारे ज्येष्ठ भाई तथा गुरु हैं, इसही निमित्त आपसे अतिरिक्त कहनेका मुझे उत्साह नहीं होता है; और क्या कहूं, राजर्षि धृतराष्ट्र सब प्रकारसे हम लोगोंके सम्मानाई हैं। देखिये अभिन्न मर्य्यादावाले साधुचित्त उत्तम पुरुष अपकारको स्मरण न करके उपकारहीको स्मरण किया करते हैं। अनन्तर धर्म्मात्मा कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर महात्मा अर्जुनका वचन सुनके विदुरसे बोले, हे वत्स! आप मेरे वचनके अनुसार कुरुकुलश्रेष्ठ पृथ्वीपति धृतराष्ट्र से कहना, कि वह पुत्रों तथा भीष्म प्रभृति आप्तकारी सुहृदोंके श्राद्धमें जो दान करनेकी इच्छा करेंगे, मैं अपने खजानेसे वह सब धन दूंगा; इसमें महाबाहु भीम दुःखित न होंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मराजने इतनी बात कहके अर्जुनको सम्मानित किया, भीमसेनने भी धनञ्जयकी ओर निज दृष्टिसे देखा। अनन्तर बुद्धिमान युधिष्ठिर विदुरसे बोले, हे नरनाथ! धृतराष्ट्र जिसमें भीमसेनके ऊपर कोप न करें, ये धीमान् भीमसेन जो वृष्टि, धूप तथा अनेक प्रकारके दुःखोंसे क्लेशित हुए हैं, वह आपको विदित है। हे भरतर्षभ! परन्तु आप मेरे वचनके अनुसार राजासे कहना, कि उनकी जो इच्छा हो, मेरे गृहसे वह उन सब वस्तुओंको ग्रहण करें और यह भी कहना, कि यह भीमसेन अत्यन्त दुःखित होकर जो मत्सरता करता है, वह उन्हें अन्तःकरणमें रखना उचित नहीं है। और उस नरनाथसे यह वचन कहना, कि मेरे तथा अर्जुनके गृहमें जो सब धन है, आप उस समस्त धनके स्वामी हैं; इसलिये आज राजा पुत्रों तथा सुहृदोंके निमित्त इच्छानुसार दान करके अऋणता लाभ करें। हे जननाथ! आप यह निश्चय जानिये, कि मेरा यह शरीर तथा जो कुछ धन है, वह आपके अधीन है, इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

१२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिसत्तम विदुर राजा युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके धृतराष्ट्रके निकट जाकर युधिष्ठिरके कहे हुए महान् अर्थयुक्त समस्त वचन कहने लगे।

विदुर बोले, हे महाराज! मैंने महातेजस्वी युधिष्ठिरके समीप आपका वचन विस्तारपूर्व्वक कहा, उन्होंने आपका वचन सुनके अत्यन्त प्रशंसा की; महातेजस्वी अर्जुनने भी आपका वचन सुनके निज गृहमें स्थित समस्त धन, गृह तथा प्राण पर्य्यन्त आपको निवेदन किया। हे राजर्षि! आपके पुत्र धर्म्मराजने धन, प्राण तथा गृहमें जो कुछ वस्तु है, वह सब आपको ग्रहण करनेके लिये आज्ञा की; परन्त महाबाहु

भीमसेनने दुःखोंको स्मरण करके सांस छोड़ते हुए बहुत कष्टसे स्वीकार किया ; उसे देखकर धर्म्मशील युधिष्ठिर तथा अर्ज्जुनने महाबाहु भीमसे बहुत विनती करके सुहृदता स्थापन की ; उसके लिये धर्म्मराजने आपको कहा है, कि "भीमने पहिले बैरको स्मरण करके जो अन्याय आचरण किया है, उससे वह भीमके विषयमें क्रोध न करें। हे नराधिप ! जब कि क्षत्रियोंका धर्म्म ही ऐसा है, तब इस वृकोदरने युद्ध तथा क्षत्रधर्म्ममें रत रहनेसे ऐसा आचरण किया है। हे नरनाथ ! इसलिये मैं और अर्ज्जुन भीमके निमित्त आपसे क्षमा मांगता हूं; आप प्रसन्न होइये ; हमलोगोंके जो कुछ है; आप उन समस्त वस्तुओंके प्रभु हैं। हे पृथ्वीपति ! जब कि आप इस राज्य तथा हमारे प्राणके भी प्रभु हैं, तब आपको जितने धनकी इच्छा हो, उतना दान करिये ; पुत्रोंके ऊर्द्ध-दैहिक कार्य्यके लिये आप हमारे पाससे उत्तम हार, रत्न, गज, दास, दासी तथा बकरे प्रभृति समस्त धन लेकर ब्राह्मण, दीनअन्ध और कृपणोंको दान करिये।

हे महाराज ! पार्थ तथा धनञ्जयने आपको ऐसा ही कहके मुझे बहुतसा अन्न, पान, रस प्रभृतिकी सभा, गौवोंको जल पीनेके निमित्त तालाव और अन्यान्य विविध पुण्यजनक कार्य्य करनेके लिये आज्ञा किया ; इसलिये अब इसके बाद जो कुछ करना हो, आप उसे करिये।

हे जनमेजय ! जब विदुरने ऐसा कहा, तब धृतराष्ट्रने पाण्डवोंके विषयमें अत्यन्त सन्तुष्ट होके उन्हें अभिनन्दित करते हुए कार्त्तिकी पौर्णमासीमें महादान करनेकी इच्छा की।

१२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जननाथ धृतराष्ट्र विदुरका ऐसा वचन सुनके राजा युधिष्ठिर तथा जिष्णु अर्ज्जुनके कार्य्यसे बहुत ही प्रसन्न हुए। अनन्तर उन्होंने भीष्म, पुत्रों और सुहृदोंके निमित्त निर्व्वाचनपूर्व्वक सहस्र ऋषिसत्तम ब्राह्मणोंको अन्न-पानादि भोजन कराके द्रोण, भीष्म, सोमदत्त, बाह्लीक, राजा दुर्य्योधन, अन्यान्य पुत्रगण और जयद्रथ प्रभृति सुहृदोंके नाम लेकर उनके उद्देश्यसे उन ब्राह्मणोंको सवारी, वस्त्र, सुवर्ण, मणि, रत्न, दास, दासी, अजाविक और रास्कव कम्बल, विविध रत्न ग्राम, क्षेत्र, सुसज्जित घोड़े, हाथी और आभूषणोंसे युक्त उत्तम कन्या प्रदान किया।

उस समय युधिष्ठिरकी आज्ञाके अनुसार बहुतसे धन-रत्न और अनेक दक्षिणायुक्त वह श्राद्धयज्ञ इस प्रकार वर्द्धित हुआ, कि वहां गणक तथा लेखक पुरुष युधिष्ठिरके वचन अनुसार राजा धृतराष्ट्रसे बार बार पूछने लगे, कि इन लोगोंको क्या दान करना होगा, उसके लिये आप आज्ञा करिये ; आप जो आज्ञा करेंगे, वही इस स्थानमें उपस्थित है। उस समय वे लोग धृतराष्ट्रके वचनको सुनके बुद्धिमान् कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिरके वचन अनुसार जो लोग एक सौ दानके पात्र थे, उन्हें सहस्र और सहस्र दानवाले पात्रको दस सहस्र परिमाणसे धन दान करने लगे, जैसे बादल जलको वर्षा करके शस्योंको पुष्ट करता है, वैसे ही उस नरनाथने वसुकी वर्षा करते हुए ब्राह्मणोंको परितृप्त किया। हे महाप्राज्ञ ! तिसके अनन्तर राजा युधिष्ठिरने उस श्राद्धयज्ञमें अन्न पान तथा रसके सहारे सब वर्णोंको ही प्लावित किया। हे महाराज ! वस्त्र, धन और समस्त रत्न जिसका वेग, मृदङ्गसमूह महाध्वनि गज और अश्वसमूह मकर तथा आवर्त्त, अनेक प्रकारके रत्न ही महान् आकर ग्राम और उत्तम हारसमूह द्वीप, मणि तथा सुवर्ण प्रभृति जल और धृतराष्ट्र उडुपरूपी हुए ; ऐसे दानरूपी समुद्रने समस्त जगत्‌को प्लावित किया। हे महाराज ! उस नरनाथ धृतराष्ट्रने इस ही प्रकार पुत्र,

पौत्र, पितरगण और अपना तथा गान्धारीका ऊर्द्ध दैहिक कार्य्य पूरा किया। अनन्तर जब वह बहुत दान करके थक गये, तब नरनाथ युधिष्ठिरने उस दान यज्ञको निवर्त्तित किया। कुरुपति राजा धृतराष्ट्रने नट, नर्त्तक और नृत्य गीतादि समन्वित बहुतसा अन्न, रत्न और दक्षिणायुक्त दानरूपी महायज्ञको इस ही प्रकार समाधान किया।

हे भरतश्रेष्ठ! अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्र इस ही प्रकार दस दिनतक अनेक भांतिसे धनदान करके पुत्रों और पौत्रोंके निकट अऋणी हुए।

१४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर धीमान् अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्रने गान्धारीके सहित बन बासका समय निश्चय करते हुए वीरश्रेष्ठ पाण्डुपुत्रोंको बुलाके विधिपूर्व्वक उन्हें अभिनन्दित किया। अनन्तर वह कार्त्तिकी पौर्णमासीमें वेद पारग ब्राह्मणोंके द्वारा उदवसनीय नाम यज्ञ पूरा करके वल्कल तथा अजिन पहरके अग्निहोत्रको आगेकर बधूगणोंसे घिरके निज गृहसे बाहिर हुए। अनन्तर विचित्र वीर्य्यपुत्र राजा धृतराष्ट्रके गृहसे बाहिर होनेपर उस समय कुरुश्रेष्ठ पाण्डव तथा कुरुवंशीय अन्यान्य स्त्रियोंके रोदनकी ध्वनि प्रकट हुई। उसके अनन्तर राजा धृतराष्ट्रने लाज तथा विचित्र पुष्पोंसे उस गृहकी पूजा तथा धनसे सेवकोंको तुष्टि करते हुए विषयादि परित्याग करके गमन किया।

अनन्तर राजा युधिष्ठिर हाथ जोड़के कम्पित शरीर तथा सवाष्पकण्ठसे युक्त ऊंचे स्वरसे महानाद करते हुए हे साधो तात! आप कहां जायंगे? ऐसा वचन कहके पृथ्वीपर गिर पड़े। उस समय भारतप्रधान अर्जुनने तीव्र दुःखसे अत्यन्त सन्तापित होकर बार बार लम्बी सांस छोड़ते हुए दीन जनोंकी भांति अवसन्न होकर युधिष्ठिरको "आप ऐसा न होइये," इस प्रकार कहके उन्हें धारण किया। अनन्तर वृकोदर महावीर फाल्गुन, माद्रीपुत्र नकुल-सहदेव, विदुर, सञ्जय, वैश्यापुत्र युयुत्सु और गौतमके सहित धौम्य प्रभृति विप्रगण बाष्परुद्ध कण्ठसे उनका अनुगमन करने लगे। कुन्ती नेत्र बांधके चलनेवाली गान्धारीके निज कन्धेपर स्थित हाथको धरके चलने लगी। राजा धृतराष्ट्र भी गान्धारीके कन्धेपर हाथ रखके विश्वासी होकर चलने लगे। सात्वतकुलमें उत्पन्न हुई सुभद्रा, कृष्णवर्णवाली द्रौपदी, बालापत्या उत्तरा, कुरुराजपुत्री, उलूपी, चित्राङ्गदा और अन्यान्य स्त्रियें बधूगणके बीच घिरके राजाके सङ्ग चलीं। उसके अनन्तर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंकी स्त्रियें उस ध्वनिको सुनकर चारों ओरसे वहां आके निपतित हुईं। हे महाराज! पहले पाण्डवोंके जूएकी खेलमें हारके कौरव-सभासे गमन करनेपर हस्तिनापुरवासी जिस प्रकार दुःखित हुए थे, धृतराष्ट्रके निकलनेके समयमें भी वे लोग उस ही प्रकार दुःखित हुए। ऐसा ही नहीं, वरन जो सब स्त्रियें कभी चन्द्र तथा सूर्य्यको भी नहीं देखने पाती थीं, वे भी उस कुरुपति नरेन्द्र धृतराष्ट्रके महावनमें जानेके समय अत्यन्त शोकार्त्त होकर राजमार्गमें बाहिर हुईं।

१५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे पृथ्वीपाल! उसके अनन्तर समस्त प्रासाद, अट्टालिका तथा भूमण्डलके बीच नर नारियोंका महान् शब्द प्रकट हुआ। बुद्धिमान राजा धृतराष्ट्र हाथ जोड़के तथा कांपते हुए शरीरसे अत्यन्त कष्टके सहित नरनारियोंसे परिपूरित राजमार्गसे बाहिर हुए। अनन्तर उन्होंने बड़े दरवाजेसे हस्तिनापुरके बाहिर होकर उस स्थानमें समा-

गत लोगोंको क्रमसे बिदा किया। महामन्त्री सूत गवल्गणपुत्र सञ्जय और विदुरने राजा धृतराष्ट्रके सङ्ग बनमें जानेके लिये स्थिर सङ्कल्प किया। तब पृथ्वीनाथ धृतराष्ट्रने कृपाचार्य्य और महारथ युयुत्सुको युधिष्ठिरके समीप सौंपकर उन लोगोंको निवृत्त किया। उस समय पुरवासियोंके लौटनेपर राजा युधिष्ठिर अन्तःपुरवासी स्त्रियोंके सहित धृतराष्ट्रकी आज्ञा पाके वहांसे निवृत्त हुए। वह धृतराष्ट्रकी अनुगमनाभिलाषिणी बनमें जानेकी इच्छा करनेवाली निज माता कुन्तीसे बोले, हे माता! मैं राजाके सङ्ग जाऊंगा, तुम लौट जाओ। हे रानी! तपस्याके लिये निश्चय किये हुए ये राजा धृतराष्ट्र बनमें जावें परन्तु आपको बधूगणोंके बीच घिरके नगरमें चलना उचित है।

उस समय कुन्ती धर्म्मराजका ऐसा बचन सुनके आंखोंमें आंसू भरकर गान्धारीको दृढ़ताके सहित धरके गमन करनेमें उद्यत हुई।

कुन्ती बोली, हे महाराज! यह सहदेव सदा तुम्हारा और मेरा अनुरक्त है, इसलिये तुम इसके विषयमें कभी बिरक्त न होना। युद्धमें सदा अपराङ्मुख कर्णको स्मरण करना, वह बीर उस समय दुर्बुद्धिसे ही संग्राममें मारे गये। हे पुत्र! मैं मन्दभागिनी हूं, मेरा हृदय निश्चय ही लोहमय है, क्यों कि सूर्य्यपुत्रको न देखकर अबतक भी सौ टुकड़े होकर न फट गया? हे अरिदमन! जब कि सूर्य्यनन्दन इस प्रकार चले गये, तब उस विषयमें मैं और क्या करूंगी? तब मेरा उसमें एक महान् दोष हुआ है, कि पहले मैंने कर्णको सूर्य्यसे उत्पन्न हुआ कहके प्रकाश नहीं किया। हे अरिमर्द्दन महाबाहो! तुम भाइयोंके सहित उस सूर्य्यपुत्रके उद्देश्यसे उत्तम रीतिसे दान करना। हे शत्रुकर्षण कुरुद्वह! भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेव सदा द्रौपदीके प्रियकार्य्यमें रत रहें। हे महाराज! आज तुमपर ही समस्त कुलका भार अर्पित हुआ है, इसलिये तुम इन सब कार्य्योंको पूरा करना। मैं बनके बीच सास श्वशुर तथा गान्धारी और धृतराष्ट्रका अनुगमन करके इनकी चरणसेवा करती हुई मलपङ्किनी तपस्विनी गान्धारीके सङ्ग बास करूंगी।

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, चित्तको वशमें किये हुए बुद्धिमान धर्म्मात्मा युधिष्ठिर कुन्तीका ऐसा बचन सुनके भाइयोंके सहित अत्यन्त दुःखित होकर कुछ भी उत्तर देनेमें समर्थ न हुए।

चिन्ता शोकपरायण धर्म्मराज युधिष्ठिर मुहूर्त्तभर चिन्ता करके दीनभावसे निज जननी कुन्तीसे बोले, हे माता! तुम्हारा यह कैसा व्यवहार है? आपको ऐसा करना उचित नहीं है; मैं तुम्हें बनमें जानेके निमित्त आज्ञा न करूंगा, आप हम लोगोंके ऊपर प्रसन्न होवें। हे प्रियदर्शने! पहले हम लोगोंके नगरसे बाहिर जानेमें उद्यत होनेपर तुमने हम लोगोंको विदुलाके बचनसे उत्साहित किया था, इस समय क्या हम लोगोंको तुम्हें परित्याग करना उचित होता है? मैंने पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्णके समीप तुम्हारे बुद्धिबलको सुनके उसहीके अनुसार राजाओंको मारके यह राज्य पाया है। हे माता! मैंने तुम्हारी जो बुद्धिवृत्ति सुनी थी, आज तुम्हारी वह बुद्धि कहां है? पहले तुम मुझे क्षत्रधर्म्ममें निवास करना अवश्यकर्त्तव्य कहके इस समय उससे बिच्युत होनेकी इच्छा करती हो? तुम इस राज्य, यशस्विनी पुत्रबधुओं तथा हम लोगोंको परित्याग करके किस प्रकार दुर्गम बनमें बास करोगी? हे माता! मुझपर प्रसन्न होके बनमें जानेसे निवृत्त होजाओ।

कुन्ती पुत्रका ऐसा बाष्पाकुल करुणायुक्त बचन सुनके आंखोंमें आंसू भरके गमन करने लगी, तब भीमसेन उससे बोले, हे माता! जब तुमने पुत्र निर्ज्जित इस राज्यभोग और राजधर्म्म प्राप्त करनेके लिये बिचारा था, तब

तुम्हारी यह बुद्धि कहां थी? तुम किस कारण हम लोगोंको छोड़के बनमें जानेकी इच्छा करती हो? यदि तुम्हारा ऐसा ही अभिप्राय था, तो पहले क्यों हम लोगोंके द्वारा पृथ्वीका नाश कराया? और हम लोग बाल्य अवस्थामें ही बनको गये थे, तब हम लोगोंकी तथा दुःखशोकयुक्त माद्रीपुत्र नकुल सहदेवको क्यों बनसे बुलवाया। हे यशस्विनि माता! तुम प्रसन्न हो जाओ, आज बनमें न जाकर धर्म्मराजके बाहुबलसे उपार्ज्जित इस ऐश्वर्य्यको भोग करो।

भाविनी कुन्तीने शीघ्र बनबासके निमित्त निश्चय करके पुत्रोंके अनेक प्रकारसे बिलापयुक्त बचनको न सुना और न ग्रहण किया। तब द्रौपदी बिलखवदन होकर रोदन करती हुई सुभद्राके सहित बनमें जानेके लिये उद्यत निज सास कुन्तीकी अनुगामिनी हुई। बनबासका निश्चय किये हुई महाबुद्धिमती कुन्ती रोती हुए पुत्रोंको बार बार देखती हुई गमन करने लगी। पश्चिवरण भी सेवकों तथा अन्तःपुरवासियोंके सङ्ग उसका अनुगमन करने लगे। तिसके अनन्तर कुन्ती अत्यन्त कष्टसे आंसू रोककर पुत्रोंसे कहने लगी।

१६ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, हे महाबाहु पाण्डुपुत्र नरपतिगण! तुम लोगोंने जो कहा, वह सत्य है, परन्तु पहले मैंने तुम लोगोंको जो कहा वा तुम्हारे निमित्त जो कुछ किया है; उन सब कार्य्योंको तुम लोगोंके जूए, राज्य और सुखसे भ्रष्ट, स्वजनोंसे पराभूत तथा अवसन्न होनेपर उत्साह बढ़ानेके निमित्त ही हुआ जानो। हे पुरुषप्रवरगण! पाण्डुकी सन्तति तथा तुम लोगोंका यश किसी प्रकार लुप्त न हो, इस ही निमित्त मैंने तुम लोगोंको हर्षित किया था; इन्द्र तथा देवताओंके सदृश पराक्रमशाली तुम लोगोंको दूसरोंका सुखापेक्षी न होनेके लिये मैंने ऐसी बिवेचना करके वैसा किया था। हे युधिष्ठिर! तुम धार्म्मिकश्रेष्ठ और सुरराजसदृश राजा हो, इसलिये जिसमें फिर तुम लोगोंको बनके बीच किसी प्रकारका क्लेश भोगना न पड़े, ऐसा ही समझकर मैंने तुम्हें हर्षित किया था, दश हजार हाथियोंके समान बलशाली बिक्रम तथा पुरुषार्थमें बिख्यात इस भीमसेनके बिनाशकी आशङ्कासे मैंने तुम लोगोंके हर्षको बढ़ाया था। भीमसेनके भाई इन्द्रसदृश यह बिजय किसी प्रकार अवसन्न न हों, इस ही निमित्त मैंने तुम लोगोंको हर्ष उत्पन्न किया। गुरुके आज्ञानुवर्त्ती ये नकुल और सहदेव किसी प्रकार क्षुधासे अवसन्न न हों, ऐसा ही समझके मैंने तुम लोगोंके उत्साहको बिशेष रीतिसे बर्द्धित किया था। यह दीर्घाङ्गी श्यामवर्णवाली बिशालनयनी द्रौपदी सभास्थलमें बृथा क्लेश न पावे, यही समझकर मैंने वैसा किया था।

हे भीम! जब दुःशासनने मूर्खतासे तुम लोगोंके सम्मुखमें ही कदलीकी भांति कम्पित शरीरवाली स्त्रीधर्म्मिणी अरिष्टाङ्गी जूएमें हारी हुई इस द्रौपदीको दासीकी भांति परिकर्षित किया, तभी मैंने इस कुरुकुलको अपने समीप पराजित समझा था। जब द्रौपदी कुररीकी भांति बिलाप करती हुई अन्य नाथकी अभिलाष नहीं की, उस समय मेरे श्वशुर प्रभृति कौरवगण अत्यन्त दुःखित हुए। हे नृप! जिस समय हतबुद्धि पापात्मा दुःशासनने इसका केश पकड़ा, उस समय मैं मुग्ध होगई थी। हे पुत्रगण! उस समय मैंने बिदुरके बचनके अनुसार तुम लोगोंको हर्षित किया था। हे पुत्रगण उस समय पाण्डुका यह राजवंश मेरे पुत्रोंसे बिनष्ट न हो, इस ही अभिप्रायसे मैंने तुम लोगोंका हर्ष बर्द्धित किया था; जिससे वंश प्रनष्ट होता है वे पाण्डुके पुत्र, पौत्र और प्रशा-

पति कौरवगण सुकृत लोकोंको न फल प्राप्त कर सकेंगी ।

हे पुत्रगण ! पहले मैंने स्वामीका विपुल राज्यफल भोग किया है, सब प्रकारसे महादान किया तथा विधिपूर्व्वक सोमपान किया है। मैंने निज फलके निमित्त श्रीकृष्णको नियुक्त नहीं किया, केवल विदुलाके प्रलाप हेतु तथा पालन करनेके निमित्त वैसा किया था। हे पुत्रगण! मैं पुत्रसे निर्ज्जित राज्यफलकी कामना नहीं करती ; हे विभु ! मैं केवल तपस्याके सहारे पुण्यजनक पतिलोककी कामना करती हूं । हे युधिष्ठिर ! मैं वनवासी सासश्वशुरकी सेवा करती हुई तपोबलसे शरीर सुखाऊंगी ; हे कुरुप्रवीर ! इसलिये तुम भीमसेनादिके सहित लौट जाओ, तुम्हारी बुद्धि धर्म्ममें रत रहे और तुम्हारा मन अत्यन्त उच्चपदपर आरूढ़ होवे।

१७ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजसत्तम ! पापरहित पाण्डवगण कुन्तीका ऐसा वचन सुनके लज्जित होकर द्रौपदीके सहित निवृत्त हुए । उस समय कुन्तीके इस प्रकार गमन करनेपर अन्तःपुरवासीगण उसे देखके अत्यन्त शोकार्त्त होकर रोदन करने लगी, उनके रोदन करनेसे तुमुलशब्द हुआ। उस समय पाण्डवगण पृथाको फिर निवृत्त न करके धृतराष्ट्रकी प्रदक्षिणा करते हुए प्रणाम करके निवृत्त हुए ।

अनन्तर महातेजस्वी अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्र गान्धारी और विदुरको सम्भाषणपूर्व्वक ग्रहण करके बोले, युधिष्ठिरने जो कहा है, वह सब सत्य है ; इसलिये युधिष्ठिरकी जननी कुन्तीदेवी सद्भावके सहित निवृत्त होवे। महाफलजनक पुत्रके इस महान् ऐश्वर्य्य तथा पुत्रों को परित्याग करके मूढ़की भांति दुर्गम वनमें कहां जायगी ? आज मेरा यह वचन सुने, कि वह राज्यमें ही रहके महादान तथा तपस्या कर सकेगी । हे धर्म्म जाननेवाली गान्धारी ! मैं बधूकी सेवासे अत्यन्त ही परितुष्ट हुआ हूं, इसलिये तुम ही इसे निवृत्त होनेकी आज्ञा करो। सुबलपुत्री गान्धारीने राजाका ऐसा वचन सुनके कुन्तीको राजवाक्य सुनाया और स्वयं भी विशेष करके अनेक कथा कही ; परन्तु वनवासके निमित्त निश्चय करनेवाली धर्म्मपरायण सती कुन्तीदेवीको किसी प्रकार लौटानेमें समर्थ न हुई । उस समय कुरुस्त्रीगण कुन्तीका धीरज और व्यवसाय मालूम करके तथा कुरुपति गणोंको निवृत्त होते देखकर ऊंचे स्वरसे रोदन करती हुई निवृत्त हुई । अनन्तर पृथापुत्रों तथा बधूगणोंके निवृत्त होनेपर, महाप्राज्ञ राजा धृतराष्ट्रने वनमें गमन किया। शोक-दुःखपरायण पाण्डवगण अत्यन्त दीनभावसे स्त्रियोंके सहित सवारीके द्वारा नगरमें आये; उस समय स्त्री, वृद्ध और बालकोंके सहित हस्तिनापुर मानो उत्सवरहित हुआ । जातमन्यु पाण्डवगण कुन्तीके विरहसे गो-विहीन बछड़ेकी भांति दुःखार्त्त तथा निरुत्साह हुए।

इधर राजा धृतराष्ट्रने उस दिन बहुत दूर जाके भागीरथीके तटपर वास किया। वहां तपोबनमें वेदपारग ब्राह्मणोंके द्वारा विधिपूर्व्वक अग्नि जलाकर प्रकाशित हुए ; उस समय वह बूढ़े राजा विधानके अनुसार अग्निहोत्रकी उपासना तथा आहुति दान करके स्वयं प्रदीप्त अग्निकी भांति प्रकाशित होने लगे । हे भारत ! विदुर और सञ्जयने सन्ध्याके समय सूर्य्यकी उपासना करके कुशके सहारे, राजाके निमित्त शय्या तैयार किया। अनन्तर युधिष्ठिरकी जननी उत्तम व्रतवाली कुन्ती कुरुवीरके समीप ही गान्धारीकी शय्या बिछाकर उसके निकट कुशाके आसनपर सुखसे बैठी ; विदुर प्रभृति सब कोई उनके निकट बैठे और याचक अनुयायी द्विजगणोंने यथास्थानमें निवास किया।

उस समय ब्राह्मणोंकी वेदध्वनि समुत्थित तथा पावकपुञ्ज प्रज्वलित होनेसे वह रात्रि ब्राह्मीकी भांति उनलोगको प्रीतिवर्द्धिनी हुई। तिसके अनन्तर रात बीतनेपर भोरको उपवासपरायण धृतराष्ट्र प्रभृति पुरुषोंने पौर्व्वाह्निक कार्य्योंको पूरा करते हुए विधिपूर्व्वक अग्निमें होम करके इधर उधर देखते हुए क्रमसे उत्तर ओर प्रस्थान किया। हे नरनाथ! शोच्यमान पुरवासी तथा जनपदवासियोंके निमित्त शोकपरायण धृतराष्ट्र प्रभृतिका प्रथम दिन उस भागीरथीके तटपर वास अत्यन्त दुःखकर हुआ था।

१८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर राजा धृतराष्ट्रने विदुरकी सम्मतिके अनुसार पुण्यमान पुरुषोंके वासके योग्य उस गङ्गाके तटपर ही निवास किया। हे भरतर्षभ! वहांपर बहुतसे वनवासी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रगण उनकी सेवा करने लगे। राजाने उनलोगोंके बीच घिरकर अनेक प्रकारके वचनसे उनलोगोंको परितुष्ट करते हुए विधिपूर्व्वक शिष्योंके सहित ब्राह्मणोंकी सम्मानना करके चलनेके लिये आज्ञा किया। फिर उन्होंने यशस्विनी गान्धारीके सहित सायंकालमें गङ्गा-किनारे जाकर शौचादि कार्य्य पूरा किया। हे भारत! विदुरादि अन्यान्य पुरुषोंने पृथक् रीतिसे तीर्थमें आगमन करते हुए वहां शौचादि कार्य्य पूरा किया। हे राजन्! तिसके अनन्तर भोजराजपुत्री कुन्ती शौचादिसे निवृत्त होनेपर वृद्ध श्वशुर धृतराष्ट्र तथा गान्धारीको गङ्गातटपर ले आई, याजक गणोंने वहांपर राजाके निमित्त कुशास्तृत यज्ञवेदी तैयार की; उस सत्यसङ्गर राजा धृतराष्ट्रने वहां अग्निमें होम किया, फिर उन्होंने नियत तथा संयतेन्द्रिय होकर अनुचरोंके सहित कुरुक्षेत्रमें गमन किया। वह बुद्धिमान पृथ्वीपति धृतराष्ट्र आश्रममें आगमन करके मनीषी राजर्षि शतयूपसे मिले।

हे परन्तप! वह शतयूप केकयदेशके महाराज थे; उन्होंने पुत्रको पार्थिव ऐश्वर्य्य तथा राज्यका अधिपति करके वनको अवलम्बन किया था। राजा धृतराष्ट्र उनके सहित व्यासदेवके आश्रममें गये; राजा शतयूपने वहां विधिपूर्व्वक कुरुपतिको प्रतिग्रह किया। कुरुनन्द राजा धृतराष्ट्रने वहां दीक्षा पाकर उस शतयूपके आश्रममें निवास किया। हे महाराज! महाबुद्धिमान राजा शतयूपने वेदव्यासकी अनुमतिक्रमसे राजा धृतराष्ट्रसे समस्त वन्यविधि विशेष रीतिसे कही; तब महात्मा पृथ्वीपति धृतराष्ट्र अनुचरोंके सहित तपस्यामें नियुक्त हुए। हे महाराज! समान तपचारिणी गान्धारी देवी भी वल्कल तथा अजिन धारण करके कुन्तीके सहित तपस्यामें नियुक्त हुई। हे नरनाथ! उन सब लोगोंने कर्म्म, मन, वचन और नेत्रके सहित इन्द्रियोंको संयत करते हुए परम तपस्या अवलम्बन की। वह पृथ्वीपाल धृतराष्ट्र वहां महर्षिकी भांति मोहरहित होकर अस्थिचर्म्म अवशिष्ट शुष्क मांसयुक्त, शरीरको जटा अजिन तथा वल्कलके द्वारा ढांकके तीव्र तपस्या करने लगे। धर्म्मार्थवित् लोकातीत बुद्धिमान जितात्मा क्षत्ता विदुर भी सञ्जयके सहित वल्कल तथा चीरवसन पहरके सस्त्रीक धृतराष्ट्रके निकट अत्यन्त घोर तपस्या करने लगे।

१९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर मुनिश्रेष्ठ महातपस्वी नारद, पर्व्वत, शिष्योंके सहित द्वैपायन मनीषी सिद्धगण और परम धार्म्मिक वृद्ध राजर्षि शतयूप, ये सब कोई राजा धृतराष्ट्रका दर्शन करनेके लिये उस स्थानमें आये। हे महाराज! कुन्तीने उन समागत

तपस्वियोंकी विधिपूर्व्वक परिचर्य्या की, वे सब कोई उसकी सेवासे प्रसन्न हुए। हे तात! उन परमर्षियोंने वहां आपसमें धर्म्मयुक्त बचनकी पर्य्यालोचना करते हुए महात्मा जननाथ धृतराष्ट्रको आनन्दित किया, तिसके अनन्तर किसी कथा प्रसङ्गसे सर्व्व प्रत्यक्षदर्शी देवर्षि नारद यह वार्त्ता कहने लगे।

नारद मुनि बोले, शतयूपके पितामह केकयाधिपति श्रीमान् नरनाथ सहस्रचित्य निःशङ्कचित्त थे। उस धर्म्मात्मा सहस्रचित्य परम धार्म्मिक जेठे पुत्रको राज्यभार अर्पण करके बनमें प्रवेश किया। महातेजस्वी पृथ्वीपति सहस्रचित्यने तपस्याकी पराकाष्ठा लाभ करके अन्तमें प्रदीप्त इन्द्रलोक पाया; मैंने महेन्द्रभवनमें जाके देखा, कि बहुत पहलेके देखे हुए नरनाथ सहस्रचित्य तपस्याके सहारे निष्पाप होकर वहां निवास करते हैं और भगदत्तके पितामह राजा शैलालयने तपोबलसे सुरेन्द्रभवनमें गमन किया है। हे राजन्! इन्द्रसदृश राजा पृषध्रने भी तपोबलके सहारे इसलोकसे स्वर्गमें गमन किया है। हे नरनाथ! इस बनमें ही मान्धातृपुत्र राजा पुरुकुत्सने महती सिद्धि पाई है; नदियोंमें श्रेष्ठ नर्म्मदा जिसकी भार्य्या है, वह राजा इस बनमें तपस्या करके सुरलोकमें गया है। हे राजन्! परम धार्म्मिक राजा शशलोमाने इस बनमें पूरी रीतिसे तपस्या करके स्वर्गलोक पाया है। हे राजन्! आप भी द्वैपायनकी कृपासे इस बनमें तपोबल लाभ करके दुष्प्राप्य अग्र्यागति पावेंगे। हे राजशार्दूल! आप भी तपस्याके अन्तमें श्रीसे परिवृत होकर गान्धारीके सहित उन महात्माओंकी गति प्राप्त करेंगे। हे महाराज! पाण्डु इन्द्रके निकट रहके भी सदा आपको स्मरण करते हैं, वह आपकी श्रीयुक्त करेंगे। हे नरनाथ! हम लोग दिव्यदृष्टिसे यह देखते हैं, कि तुम्हारी बधू युधिष्ठिरकी जननी यशस्विनी कुन्ती आपकी तथा गान्धारीकी सेवा करनेसे वह स्वामीकी सलोकता प्राप्त करेगी, यही सनातन धर्म्म है और बिदुर महात्मा युधिष्ठिरके निकट गमन करेंगे, सञ्जय तपस्याके सहारे इसलोकसे सुरलोकमें जायंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुरुपति महात्मा विद्वान् धृतराष्ट्रने नारद मुनिका ऐसा बचन सुनके भार्य्याके सहित अत्यन्त सन्तुष्ट होकर उनके बचनकी प्रशंसा करके उनकी पूजा की। हे राजन्! तिसके अनन्तर ब्राह्मणोंने राजा धृतराष्ट्रकी प्रीतिके अनुसार अत्यन्त सन्तुष्ट होकर नारद मुनिकी पूजा की; उस समय जब द्विजवरगण वैसे बचनसे नारद मुनिकी प्रशंसा कर रहे थे, तब राजर्षि शतयूप नारदसे बोले, हे महातेजस्वी! यह क्या ही आश्चर्य है, कि आपने हमारी, कुरुराजकी तथा सब लोगोंकी ही श्रद्धा बर्द्धित की है। हे लोकपूजित देवर्षि! धृतराष्ट्रके सम्बन्धमें मुझे कुछ कहना है, मैं उसे कहता हूं, सुनिये। हे महामुनि! आपको सबका वृत्तान्त तथा तत्त्व विदित है, विशेष करके आप दिव्य दृष्टिसे सब प्राणियोंकी विविध गति देखते रहते हैं, आपने सब राजाओंकी इन्द्रकी सलोकता प्राप्तिका विषय वर्णन किया, परन्तु ये राजा धृतराष्ट्र कौनसा लोक प्राप्त करेंगे,—उस विषयमें कुछ भी न कहा। हे विभु! इसलिये इस राजाको किस समय कौनसा स्थान प्राप्त होगा, उसे मैं आपके समीप सुननेकी इच्छा करता हूं, आप उसे विस्तारपूर्व्वक कहिये। दिव्यदर्शी महातपस्वी नारद मुनि शतयूपका ऐसा बचन सुनके सबके मनोनुकूल विषय वर्णन करने लगे।

नारद मुनि बोले, हे राजर्षि! मैंने यदृच्छाक्रमसे इन्द्रके स्थानमें जाकर देखा, कि शचीपति इन्द्र और राजा पाण्डु वहां एकत्र निवास करते हैं। हे नरनाथ! यह धृतराष्ट्र जिस प्रकार दुष्कर तपस्या करते हैं, इनकी वह

वार्त्ता भी वहां होरही थी; मैंने वहां सुरराजके मुखसे ऐसा सुना, कि इस राजा धृतराष्ट्रकी परमायु तीन वर्ष अवशिष्ट है; उसके अनन्तर ये ऋषिपुत्र महाभाग धृतराष्ट्र तपोबलसे सब पापोंको जलाकर दिव्य आभूषणोंसे भूषित और राजाओंसे सत्कृत होकर गान्धारीके सहित दिव्य विमानपर चढ़के कुबेरभवनमें जायंगे और इच्छानुसार देव, गन्धर्व्व तथा राक्षसलोकमें विचरण कर सकेंगे। हे राजन्! आपने मुझसे जो विषय पूछा, वह देवलोकमें गोपनीय होनेपर भी आपलोगोंके श्रुतत्व होने तथा तपसे सब पापोंके जलानेसे और आपलोगोंके विषयमें मेरी महती प्रीति रहनेसे मैंने आपसे यह वृत्तान्त कहा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, देवर्षि नारदके ऐसे मधुर वचनको सुनके राजाओंके सहित सब कोई सुस्थचित्त तथा परम परितुष्ट हुए। उन लोगोंने इस ही प्रकार वचनके सहारे मनीषी धृतराष्ट्रको आश्वासित करके इच्छानुसार सिद्ध गति अवलम्बन की।

२० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! कौरवेन्द्र महाराज धृतराष्ट्रके वनमें जानेके अनन्तर मातृशोकयुक्त पाण्डवगण दुःखित तथा शोकित हुए। पुरवासी लोग जननाथ धृतराष्ट्रके निमित्त शोक करने लगे, ब्राह्मण लोग शोकार्त्त होकर धृतराष्ट्रके सम्बन्धमें ऐसा कहने लगे, कि वह वृद्ध राजा महाभागा गान्धारी और पृथा कुन्ती, ये लोग निर्ज्जन वनमें किस प्रकार वास करते हैं? वह सुखके योग्य प्रज्ञाचक्षु हतपुत्र राजर्षि दुःखजनक महावनमें कैसी दशामें निवास कर रहे हैं? कुन्तीने राजश्री परित्याग करके पुत्रोंको विना देखे किस प्रकार वनवासकी इच्छा की? आत्मज्ञ विदुर भ्राताकी सेवा करते हुए किस अवस्थामें हैं और स्वामि पिण्डानुपालक गवल्गणपुत्र सञ्जय भी किस अवस्थाको प्राप्त हुए हैं? पुरवासी आबाल वृद्ध सब कोई चिन्ता तथा शोकसे परिपूरित होकर आपसमें एक दूसरेके साथ इस ही प्रकार वार्त्तालाप करने लगे उस समय अत्यन्त शोकसे युक्त पाण्डवगण बूढ़ी माता, बूढ़े हतपुत्र जननाथ धृतराष्ट्र महाभागा गान्धारी और महाबुद्धिमान विदुरके निमित्त शोक करते हुए अधिक समयतक पुरके बीच वास न कर सके। अधिक क्या कहें, उन लोगोंके निमित्त सदा चिन्ता करनेवाले पाण्डुपुत्रोंको राज्य, श्री वा वेदाध्ययन, किसीसे भी तृप्ति न हुई, बल्कि उन लोगोंने बार बार नरनाथ धृतराष्ट्रको तथा ज्ञाति वध स्मरण करते हुए चिन्तासे अकुल होकर अपनेको अत्यन्त निकृष्ट समझा और युद्धके अगाड़ी बालक अभिमन्यु, संग्राममें न भागनेवाले महाबाहु कर्ण तथा सुहृद द्रुपदपुत्रोंका विनाश स्मरण करके क्षुब्धचित्त हुए। हे भारत! वे लोग पृथिवीको रत्नविहीन तथा वीरोंसे रहित देखकर सर्व्वदा चिन्ता करते हुए शान्ति लाभ न कर सके; हतपुत्रा द्रौपदी तथा भामिनी सुभद्रा देवी, ये दोनों दुःखिनीकी भांति अप्रीतियुक्त होरहीं। परन्तु तुम्हारे पूर्व्व पितामहोंने तुम्हारे पिता उत्तरापुत्र परीक्षितको देखकर प्राण धारण किया।

२१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वे वीरवर पुरुषश्रेष्ठ मातृनन्दन पाण्डवगण माताको स्मरण करते हुए इस ही प्रकार अत्यन्त दुःख भोगने लगे। पहले जो लोग राजकार्य्यमें नियुक्त थे, उस समय वे सब कोई नगरके बीच पूरीरीतिसे राजकार्य्य करनेमें समर्थ न हुए; वे लोग भी इस प्रकार शोकयुक्त हुए, कि किसीके पूछनेपर भी उत्तर देने तथा किसी विषयको अभिनन्दन करनेमें समर्थ न हुए। गम्भीरतामें समुद्रसदृश

दुराधर्ष वे सब वीरगण अत्यन्त शोकसे ज्ञान रहित होकर सदा चेतरहितकी भांति निवास करने लगे ।

तिसके अनन्तर पाण्डवगण जननीके निमित्त इस प्रकार चिन्ता करने लगे, कि वह अत्यन्त कृशाङ्गी पृथा वृद्ध दम्पतीको किस प्रकार ले चलती है? वह हतपुत्र महीपाल आश्रयरहित हो पत्नीके सहित किस प्रकार अकेले श्वापद-सेवित उस बनमें बास करते हैं? वह महा-भागा हतबान्धव गान्धारी देवी निर्ज्जन बनमें किस प्रकार बूढ़े अन्ध पतिका अनुसरण करती है? पाण्डवोंके इस ही प्रकार उत्सुकतापूर्व्वक विलाप करते रहनेपर कुछ समयके अनन्तर उन लोगोंको धृतराष्ट्रके देखनेकी अभिलाष हुई । अनन्तर सहदेव राजा युधिष्ठिरको प्रणाम करके यह बचन बोले, ओहो! आपके चित्तको गमनोन्मुख देखता हूं । हे राजेन्द्र! मैं गौरव-वशसे सहसा जो चलनेको बात नहीं कह सकता था, इस समय वह गमनकाल उपस्थित हुआ है; अच्छा ही हुआ मैं उस बूढ़ी कुशकाश परिवृता जटाधारिणी तपस्विनी कुन्ती देवीको देखूंगा । ओही! जो सदा प्रासाद तथा कोठेके ऊपर रहती हुई बूढ़ी हुई जिसने कभी सुखके अतिरिक्त दुःख नहीं देखा, इस समय उस अत्यन्त दुःखित परिश्रान्त जननीको कब देखूंगा? हे भरतर्षभ! मर्त्य लोगोंकी गति निश्चय ही अनित्य है, क्यों कि कुन्ती राजपुत्री होकर दुःखके सहित जङ्गलमें बास करती है ।

स्त्रियोंमें मुख्य द्रौपदी देवीने सहदेवका बचन सुनकर राजा युधिष्ठिरको सम्मानपूर्व्वक अभिनन्दित करके कहा । हे जननाथ! यदि वह पृथादेवी जीवित हों, तो मैं किस समय उन्हें देखूंगी? क्यों कि मैं अपनी जीवित अव-स्थामें उनका दर्शन पानेसे अत्यन्त प्रसन्न हूंगी । हे राजेन्द्र! आपकी यह मति सदा वर्द्धित हो और आपका मन सदा धर्म्ममें रत रहे । हे नरेन्द्र! आप शीघ्र हम लोगोंको पृथाके दर्शन-रूपी मङ्गलकार्य्यमें नियुक्त करिये । हे राजन्! आपको मालूम हो, कि ये बधूगण कुन्ती गान्धारी तथा श्वशुरको देखनेकी इच्छासे आगे पांव रखती हुई निवास कर रही हैं ।

हे भरतर्षभ! नरनाथ युधिष्ठिर द्रौपदी देवीका ऐसा बचन सुनके सेनाध्यक्षोंको बुलाके, यह बात बोले, कि मैं उस बनवासी महीपति धृतराष्ट्रको देखनेके लिये जाऊंगा, इसलिये तुम लोग हमारे बहुतसे रथ तथा हाथियोंसे युक्त समस्त सेनाको सज्जित होनेके लिये आज्ञा करो । अनन्तर राजा युधिष्ठिर स्त्रियोंके अध्य-क्षोंसे बोले, कि तुम अनेक प्रकारके यान तथा पालकियोंको सज्जित करो । गाड़ी हांकनेवाले आपण व्यवसायी, वंशधर, शिल्पी और कोषपाल लोग कोष (खजाना) लेकर कुरुक्षेत्राश्रममें जावें, यदि कोई पुरवासी राजाको देखनेकी इच्छा करते हों, तो वे अनावृत्त, सुविहित तथा उत्तम रीतिसे रक्षित होकर जा सकेंगे । हमारे रसो-इयें और पुरमें रहनेवाले सेवकगण अनेक प्रका-रके पाकपात्र तथा भक्ष्यभोज्य प्रभृति सामग्रि-योंको लेकर गाड़ीपर चढ़ें, कल् चलना होगा, इतनी बातको शीघ्र घोषणा करो और मार्गके बीच अनेक प्रकारके गृह बनाओ ।

हे राजन्! पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर भाइयोंके सहित इस ही प्रकार आज्ञा करके दूसरे दिन स्त्रियों और बूढ़ोंके सहित नगरसे बाहिर हुए । उस नरनाथ युधिष्ठिरने नगरके बाहिरी हिस्-सेमें पांच दिन निवासकर सब लोगोंको परिपा-लन करनेके अनन्तर बनकी ओर गमन किया ।

२२ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर भरतस-त्तम राजा युधिष्ठिरने लोकपालसदृश अर्ज्जुन प्रभृति पुरुषोंसे रक्षित सेनाको चलनेके लिये आज्ञा की । हे भारत! तिसके अनन्तर परम

प्रीतिसम्पन्न सेना तथा सवार प्रभृतिका "इकट्ठे होओ इकट्ठे होजाओ, घोड़ोंको जोतो;—" इस ही प्रकार तुमुल शब्द प्रकट हुआ। हे नरनाथ! अनन्तर पैदल और प्रासधारी योद्धाओंके बीच कोई यान, कोई महावेगशाली घोड़े कोई प्रज्वलित अग्निसदृश सुवर्णके बने हुए रथ, कोई हाथी और कोई कोई ऊंटोंपर चढ़के चलने लगीं। धृतराष्ट्रके देखनेकी इच्छा करनेवाले पुरवासी तथा जनपदवासी लोग अनेक प्रकारके यानोंमें चढ़के कुरुराजका अनुगमन करने लगे। गौतमपुत्र कृपाचार्य्य राजाकी आज्ञासे सेनानायक होकर सेनाके सहित आश्रमकी ओर चले। तिसके अनन्तर कुरुराज युधिष्ठिर द्विजवरोंसे घिरकर बहुतेरे सूतमागध और वन्दियोंसे स्तुत, सिरके ऊपर पाण्डुरवर्ण छत्रसे सुशोभित और महान् रथ तथा सेनासमूहसे समावृत होकर नगरसे बाहिर हुए। पवनपुत्र भीमकर्म्म करनेवाले वृकोदरने सज्जित यन्त्र और आयुधयुक्त पर्व्वतसदृश हाथीपर चढ़के गमन किया। चित्तको वशमें करनेवाले अर्ज्जुन सफेदवर्णवाले घोड़ोंसे युक्त, सूर्य्यके समान प्रभासम्पन्न दिव्य रथपर चढ़के राजाके अनुगामी हुए। माद्रीपुत्र नकुल और सहदेवने ध्वजा और कवच बांधकर शीघ्रगामी घोड़ेपर चढ़के भली भांति सेनासे घिरके गमन किया, द्रौपदी प्रभृति सब स्त्रियें पालकीमें चढ़के स्त्रीरक्षकोंसे रक्षित होकर परिमित वस्तु वितरण करती हुई चलने लगीं। हे भरतर्षभ! उस समय समृद्ध रथ, हाथी और घोड़ोंसे युक्त पाण्डवोंकी सेना बांसुरी और वीणासे अनुनादित होकर अत्यन्त शोभित होने लगी। हे पृथ्वीनाथ! वे कहां कहां रमणीय मनोहर नदी तथा तालाबोंके तटपर वास करते हुए क्रमसे चलने लगे; इधर महातेजस्वी युयुत्सु और पुरोहित धौम्य राजाकी आज्ञानुसार नगरकी रक्षा करने लगे। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने क्रमसे परमपावनी यमुना नदी पार होके कुरुक्षेत्रमें पहुंचकर वहांसे दूरमें उस धीमान् राजर्षि शतयूप और कुरुपति धृतराष्ट्रका आश्रम देखा। हे भरतर्षभ! तिसके अनन्तर सब कोई अत्यन्त आनन्दित होकर सहसा महाशब्दसे उस वनको परिपूर्ण करते हुए उसमें प्रविष्ट हुए।

२३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर पदातिके सहित पाण्डवोंने दूरसे ही उतरके विनय और प्रणतिपूर्व्वक राजाके आश्रममें गमन किया। उस समय योद्धा लोग, पुरवासी और कुरुपतिगणकी स्त्रियें पैदल ही चलने लगीं; अनन्तर पाण्डवोंने मृगसमूहसे परिपूरित, कदलीबनसे शोभित पुण्यजनक धृतराष्ट्रके आश्रममें प्रवेश किया।

तिसके अनन्तर नियतव्रती तपस्वीवृन्द समागत पाण्डवोंको देखनेके लिये कौतूहलयुक्त होकर वहां आये। राजा युधिष्ठिरने आंसू डबडबाये हुए नेत्रयुक्त होकर उन लोगोंसे यह बात पूंछी, कि हमारे जेठे पिता वह कुरुवंशपति कहां हैं? उन लोगोंने इतनी बात सुनके राजासे कहा, हे प्रभु! वह फूल और जल लाने तथा यमुनामें स्नान करनेके निमित्त इस ही मार्गसे गये हैं। पाण्डवोंने शीघ्र ही उन लोगोंके कहे हुए मार्गसे गमन किया, पदातियोंने उन्हें दूरसे देखा; अनन्तर वे लोग पिताको देखनेके लिये अत्यन्त उत्सुक होके शीघ्र चले, परन्तु सहदेव वेगपूर्व्वक पृथाके समीप जानेके लिये दौड़े। धीमान् सहदेव माताके दोनों चरण छूके रोने लगे, पृथा नेत्रोंमें आंसू भरके प्रियपुत्रको देखने लगी; अनन्तर दोनों भुजाओंसे पुत्रको आलिङ्गन करके गान्धारीसे सहदेवके आनेका सम्वाद कहा। अनन्तर राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन और नकुलको देखकर शीघ्रताके सहित उनके निकट गमन किया। पाण्डवोंने उस पृथाको अग्रगत दम्पती धृतराष्ट्र

तथा गान्धारीका हाथ धरके उनके आगे आगे आती हुई देखकर उन लोगोंके समीप जाकर भूमिपर झुकके प्रणाम किया। महात्मना मेधावी राजा धृतराष्ट्रने स्वर और स्पर्शसे पाण्डवोंको जानके उन्हें आश्वासित किया। तिसके अनन्तर महात्मा पाण्डवोंने आंसू बहाते हुए गान्धारीके सहित राजा धृतराष्ट्र और कुन्ती माताकी विधिपूर्व्वक पूजा की। फिर पाण्डव लोग सावधान होकर उनका जलकलश ग्रहण करके निज माता कुन्तीके द्वारा फिर आश्वासित हुए; उस समय पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंकी स्त्रियें, अन्तःपुरवासी, पुरवासी और जनपदवासी सब लोग जननाथ धृतराष्ट्रका दर्शन करने लगे। अनन्तर नरनाथ युधिष्ठिरने धृतराष्ट्रको सबका नाम और गोत्र सुनाकर परिचय देके उनकी पूजा की। उस समय वाष्पाविललोचन राजा धृतराष्ट्रने पाण्डवप्रभृति सब लोगोंके बीच घिरके अपनेको मानो हस्तिनापुरमें स्थित समझा। अनन्तर उस पृथ्वीपति धृतराष्ट्रने गान्धारी और कुन्तीके सहित द्रौपदी प्रभृति वधूगणके द्वारा अभिवादित और आनन्दित होकर तारासमूहसे भरे हुए नभमण्डलकी भांति दर्शनेच्छु लोगोंसे परिपूरित, सिद्ध तथा चारणोंसे सेवित आश्रममें गमन किया।

२४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा धृतराष्ट्रने सुरम्य कमलनेत्र पुरुषश्रेष्ठ उन पांचों भाइयोंके सहित आश्रममें निवास किया। महाभाग तपस्वीगण विपुल वक्षस्थलसम्पन्न कुरुपतिकेपुत्र उन पाण्डवोंके देखनेकी अभिलाषसे अनेक देशोंसे आके बोले, कि इन लोगोंके बीच कौन युधिष्ठिर, कौन भीम, कौनसे अर्ज्जुन और कौनसे नकुल सहदेव हैं और कौनसी यशस्विनी द्रौपदी है? हम लोग उन्हें जाननेकी इच्छा करते हैं। उस समय सूत सञ्जय तपस्वियोंको ऐसी बात सुनके पांचों पाण्डव, द्रौपदी तथा अन्यान्य कुरुस्त्रियोंका नाम पृथक् पृथक् कहके परिचय देने लगे।

सञ्जय बोले, ये जो विशुद्ध सुवर्णकी भांति गौर शरीरयुक्त महासिंहकी भांति समुन्नत हैं और जिनकी नासिका ऊंची, नेत्र स्थूल वा दीर्घ अथवा लोचन ताम्रवर्ण, तथा अत्यन्त विस्तृत दीखते हैं; वेही युधिष्ठिर हैं। जिसका चलना मतवारे गजेन्द्रकी भांति, वर्ण प्रतप्त चामीकरके सदृश, मांस स्थूल और विस्तृत है, तथा भुजा मोटी और लम्बी हैं, वेही भीमसेन हैं; आप लोग देखिये, इनके बगलमें महाधनुर्धारी हाथियोंके यूथपतिकी भांति श्यामल, सिंहकी भांति ऊंचे स्कन्धवाले युवा गजगामी कमलनेत्र श्रेष्ठवर पुरुष ही अर्ज्जुन हैं। ये जो पुरुषश्रेष्ठ विष्णु और महेन्द्रसदृश, मनुष्य लोकातीत रूपवान और शीलसम्पन्न दो पुरुष कुन्तीके समीप निवास करते हैं, वेही यमज नकुल सहदेव हैं। यह जो पद्मदलकी भांति विशालनयनी मध्यम अवस्थावाली, नीलोत्पल सदृश मूर्त्तिमती लक्ष्मी तथा सुरदेवताकी भांति निवास करती है, वही कृष्णा द्रौपदी है? हे द्विजवरगण! उसके बगलमें यह जो मूर्त्तिमती इन्द्रप्रभा समान कनकवर्णवाली स्त्री विद्यमान है, वही उस अप्रतिम चक्रधारी कृष्णकी बहिन सुभद्रा है। यह जो विशुद्ध जाम्बूनदकी भांति गौरवर्णवाली नागकन्या और मधूकके पुष्पके समान रूपवाली नरेन्द्र कन्या दीख पड़ती हैं, वे अर्ज्जुनकी भार्य्या हैं। जो नरनाथ कृष्णके सङ्ग सर्व्वदा स्पर्द्धा करते थे, उस राजचमूपतिकी बहिन यह नीलोत्पल दामवर्णवाली स्त्री भीमसेनकी भार्य्या है। यह मगधराज जरासन्धकी पुत्री चम्पक दामकी भांति गौराङ्गी स्त्री ही माद्रीके कनिष्ठपुत्र सहदेवकी भार्य्या है। यह जो इन्दीवरकी भांति श्यामाङ्गी कमलदलके समान विशालनयनी स्त्री पृथ्वीपर बैठी है,

उसे ही माद्रीके जेठे पुत्र नकुलकी भार्य्या जानो। तपाये हुए सुवर्णकी भांति गौरवर्णा पुत्रके सहित यह बिराटराजपुत्री युद्धमें बिरथ हुए रथस्थ द्रोणादिके द्वारा मरे हुए अभिमन्युकी पत्नी है; इनके अतिरिक्त ये जो सीमन्त समन्वित केशवाली, सफेदवस्त्र पहरे हुए हतपुत्रा तथा अनाथ एक सौ राजरानियें दीखती हैं, वे सब इस बूढ़े राजा धृतराष्ट्रकी पुत्रबधू हैं। हे तपस्वीगण! आप लोग ब्रह्मनिष्ठासे सरलचित्त तथा सतोगुणसम्पन्न हैं, इसलिये आप लोगोंने जिन सब विशुद्ध सत्त्वसम्पन्न राजरानियोंका परिचय पूंछा था, मैंने उसे यथार्थ रीतिसे आपके समीप कहा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय तपस्वियोंके गमन करनेपर कुरुकुलवर्य्य राजा धृतराष्ट्रने उन नरदेवपुत्र पाण्डवोंके सहित समागत होकर कुशलादि पूंछा। अनन्तर योद्धाओंके आश्रममण्डल परित्याग करके निज निज स्थानपर जाने और स्त्री, वृद्ध तथा बालकोंके बाहन परित्याग करके अपने स्थानमें प्रविष्ट होनेपर वह पाण्डवोंसे यथोचित कुशलादि पूंछने लगे।

२५ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे महाबाहो युधिष्ठिर! तुम भ्राता, पुरबासी और जनपदबासियोंके सहित कुशलसे तो हो? हे नरनाथ! तुम्हारे जो सब गुरु, सचिव और सेवकबृन्द तुम्हें अवलम्ब करके जीविका निर्व्वाह किया करते हैं, वे लोग निरामय तथा निरातङ्कसे तुम्हारे राज्यमें निवास करते हैं न? तुम राजर्षियोंसे सेवित धृरातनी बृत्तिमें बर्त्तमान तो हो? तुम न्यायपथको अतिक्रम न करके कोषपूरण और शत्रुमित्र उदासीन लोगोंके निकट समभावसे निवास करते हो न? हे भरतप्रवर! तुम ब्राह्मणोंको उत्कृष्ट उपचार प्रदान करके यथा समयमें उनके तत्त्वोंका निश्चय करते हो न? वे सब लोग तथा शत्रु, पुरबासियों सेवक और स्वजनबृन्द तुम्हारे स्वभावसे सन्तुष्ट तो हैं? हे राजेन्द्र! तुम श्रद्धायुक्त होकर पितरों, देवताओं और अन्नजलसे अतिथियोंकी पूजा करते हो न? ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र लोग तुम्हारे नीतिपथके अनुवर्त्ती होकर अपने अपने धर्म्ममें रत तो रहते हैं? कुटुम्ब, स्त्री, बृद्ध और बालकगण तुम्हारे निकट शोक प्रकाश तथा प्रार्थना तो नहीं करते? हे नरवर राजेन्द्र! तुम्हारे गृहमें स्त्रियें पूजित तो होती हैं? तुम्हारे पृथ्वीपति होनेसे यह राजर्षि बंश तुम्हारे द्वारा यशहीन वा अवसन्न तो नहीं हुआ?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब धृतराष्ट्रने ऐसा कहा, तब न्यायवित् बाक्य बोलनेमें कुशल युधिष्ठिर उनसे कुशल प्रश्न संयुक्त बचन कहने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे राजन्! आपकी तपस्या, दम और शम बर्द्धित होता है न? मेरी यह कुन्ती माता बिश्रान्त शरीरसे आपकी सेवा करती है न? हे नरनाथ! यदि ये आपकी सेवामें रत रहें, तो इनका बनबास सफल होगा। शीतल वायु सेवन और मार्गके श्रमसे कातर घोरतपमें निष्ठा करनेवाली ये जेठी माता गान्धारी देवी क्षत्र धर्म्मपरायण मृत पुत्रोंके निमित्त शोक तो नहीं करती? हम लोगोंको पापकर्म्म करनेवाला समझकर सदा हमारी बुराई तो नहीं बिचारती? हे राजन्! बिदुर कहां हैं। वह यहां क्यों नहीं दीख पड़ते हैं? सञ्जय तपस्यामें रत रहके कुशलसे तो हैं?

श्रीवैम्पायन मुनि बोले, धृतराष्ट्रने जननाथ युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके उनसे कहा, हे पुत्र! बिदुर घोर तपस्या अवलम्बन करके कुशलसे हैं, परन्तु वह अन्धोन्ध खानेकी बस्तुओंका परित्याग करके केवल वायु पान करके इस प्रकार कृशित हुए हैं, कि उनका समस्त शरीर शिराओंसे परिपूरित हुआ है और उस ही

अवस्थामें किसी किसी समय इस सूने जङ्गलमें ब्राह्मणोंके द्वारा वह लक्षित हुआ करते हैं। हे राजन्! जब धृतराष्ट्र ऐसा कह रहे थे, उस ही समय वह जटाधारी वीटामुख अत्यन्त दुबले, दिगम्बर, मलिन, देह और वनधूलि-धूसरित क्षत्ता विदुर दूरसे उनके दृष्टिगोचर होते ही सहसा आश्रमकी ओर लौटे। नरनाथ युधिष्ठिर घोर अलक्ष्य जङ्गलके बीच प्रविष्ट उस विदुरके पीछे दौड़े; महाराज 'भो भो विदुर! मैं तुम्हारा प्रियपात्र राजा युधिष्ठिर हूं',—ऐसा वचन कहते कहते अत्यन्त यत्नके सहित उनके पीछे पीछे दौड़े। तिसके अनन्तर प्राज्ञवर विदुरके उस एकान्त तथा निर्ज्जन वनके बीच किसी एक वृक्षको अवलम्बन करके निवास करनेपर महाबुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर आकृति मात्र अवशिष्ट अत्यन्त कृश महाबुद्धियुक्त विदुरके सामने जाकर आगे निवास करते हुए उनके श्रुतिगोचर होनेके लिये ऊंचे स्वरसे "मैं युधिष्ठिर हूं"—ऐसा कहके उनकी पूजा की। तिसके अनन्तर विदुर समाहित होकर अनिमिष नेत्रसे युधिष्ठिरकी ओर देखकर एकटक दृष्टिसे उन्हें देखने लगे। अनन्तर वह धीमान् विदुर योगबल अवलम्बन करके राजाके शरीरमें निज शरीर, प्राणमें प्राण और इन्द्रियसमूहमें इन्द्रियोंको प्रविष्ट करके प्रदीप्त अग्निकी भांति प्रकाशित होने लगे, परन्तु राजाने उस समय विदुरके उस वृक्षाश्रित स्तब्धलोचनयुक्त चेतरहित शरीरको देखा और अपनेको अत्यन्त गुणवान तथा बलवान समझा। हे महाबुद्धिमान्! विद्वान् महातेजस्वी धर्म्मराज पाण्डुपुत्रने व्यासदेवके कहे हुए अपने पुराने योगधर्म्मको स्मरण किया अनन्तर उस समय धर्म्मराजने संस्काराभिलाषी होकर विदुरके शरीरको जलानेकी इच्छा की, तब इस प्रकार देववाणी हुई;—'हे राजन्! इस विदुरको मत जलाओ इस शरीरके इस स्थानमें रहनेसे ही तुम्हें परम धर्म्म होगा। हे परन्तप भारत! इनके यतिधर्म्मको प्राप्त होनेसे इन्हें सन्तानिक लोक मिलेगा; इसलिये इनके निमित्त शोक मत करो।

धर्म्मराजने ऐसा सुनके वहांसे लौटकर विचित्रवीर्य्यपुत्र राजा धृतराष्ट्रके निकट यह समस्त वृत्तान्त वर्णन किया। तिसके अनन्तर द्युतिमान धृतराष्ट्र और भीमसेन प्रभृति सब लोग उस वचनको सुनके अत्यन्त विस्मययुक्त हुए। राजा धृतराष्ट्र विदुरके उस वृत्तान्तको सुनके अत्यन्त प्रसन्न होकर धर्म्मपुत्रसे बोले, कि मेरा यह फल, मूल और जल प्रतिग्रह करो। हे राजन्! ऐसा शास्त्रमें कहा है, कि मनुष्य जैसा अर्थ भोग करता है उसके अतिथियोंको भी वही अर्थ भोगना होता है। धर्म्मराज धृतराष्ट्रका ऐसा वचन सुनके बोले, कि, "आपने जो कहा, वही होवे"; इतनी बात कहके भाइयोंके सहित धृतराष्ट्रके दिये हुए फल मूल भोजन किया। अनन्तर उन लोगोंने वृक्षमूलमें वास करते हुए वह रात्रि व्यतीत की।

२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! अनन्तर पुण्यकर्म्मा पाण्डवोंने उस आश्रममें धर्म्मार्थ लक्षणयुक्त विचित्र पद तथा अनेक श्रुतियुक्त विविध कथा कहते कहते मङ्गलसूचक नक्षत्रोंसे युक्त रात्रि व्यतीत की। हे नरनाथ! उस समय पाण्डवोंने महामूल्यवान शय्या परित्याग करके कुन्तीके चारों ओर पृथ्वीपर शयन किया। उस रात्रिमें महामना राजा धृतराष्ट्रने जो आहार किया नरवीर पाण्डवोंने भी उस समय वही भोजन किया। रात बीतनेपर भोरको राजा युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित पूर्व्वाह्निक क्रिया पूरी करके आश्रममण्डलका दर्शन किया; अनन्तर धर्म्मराज धृतराष्ट्रकी आज्ञानुसार अन्तःपुरके परिवार, सेवकों तथा पुरोहितके सहित सुखपूर्व्वक वहांके सब स्थान

और प्रज्वलित अग्निसम्पन्न तथा मुनियोंके द्वारा होमकी अग्निसे उपासित वेदियोंको देखने लगे। वे सब वेदी वनके पुष्पों तथा आज्य रससे परिव्याप्त तथा मुनियोंके ब्राह्म शरीरकी शोभासे शोभित होरही हैं। हे प्रभु! उन स्थानोंमें मृगोंके समूहोंके अनुद्विग्न तथा अशङ्कित चित्तसे निवास करने और विविध पक्षियोंके मनोहर बोली बोलनेसे मानो सङ्गीत होता हुआ बोध होने लगा। कोई कोई स्थान नीलकण्ठवाले मयूरोंकी केकाध्वनि, दात्यूहोंका कूजना, कोकिलोंका सुखकर श्रुति मनोहर कूकना, वेदपाठी ब्राह्मणोंकी वेदध्वनि और अत्यन्त उत्कृष्ट फलमूलोंसे सुशोभित होरहे हैं।

हे राजन्! तिसके अनन्तर पृथ्वीपति राजा युधिष्ठिरने तपस्वियोंके निमित्त समाहृत सुवर्णोंके कलश, उडुम्बर, अजिन, चित्रकम्बल, स्रुक्, स्रुवा, कमण्डलु, स्थाली, पिठपात्र, लोहमय भाजन तथा अन्यान्य विविध पात्र उन लोगोंको प्रदान किया। धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरने बहुतसा धन बांटते तथा इस ही प्रकार आश्रमोंमें परिभ्रमण करके लौटकर नित्यकर्म्म किये तथा अव्यग्रचित्तसे गान्धारीके सहित बैठे हुए राजा धृतराष्ट्र और उनके निकटमें शिष्यकी भांति प्रणतभावसे स्थित शिष्टाचारयुक्त कुन्तीमाताको देखा। युधिष्ठिर राजा धृतराष्ट्रको अपना नाम सुनाकर पूजा करते हुए बैठनेकी आज्ञा पाकर यतियोंके आसनपर बैठे। हे भरतप्रवर! भीमसेन प्रभृति पाण्डवगण राजाका पांव छूके प्रणाम करनेके अनन्तर उनकी आज्ञानुसार बैठ गये, कुरुराज धृतराष्ट्र ब्राह्मी श्री धारण करते हुए पाण्डवोंके बीच घिरकर उस समय देवताओंसे घिरे हुए बृहस्पतिकी भांति शोभित हुए। उन लोगोंके बैठनेके अनन्तर कुरुक्षेत्रनिवासी शतयूप प्रभृति महर्षिवृन्द उस स्थानमें आये। देवर्षियोंसे सेवित महातेजस्वी भगवान् व्यासदेव शिष्योंसे घिरके पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरको देखनेके लिये वहां आये; कुरुपति कुन्तीपुत्र वीर्य्यवान राजा युधिष्ठिर और भीमसेन आदि सब लोगोंने उठके उन्हें प्रणाम किया।

तिसके अनन्तर व्यास मुनिने शतयूप आदि ऋषियोंसे घिरकर वहां आके पृथ्वीपति धृतराष्ट्रको बैठनेके लिये कहा; उस समय व्यासदेवने अपने लिये उपकल्पित उत्तम कुशासन, कृष्णाजिन और कुशोत्तर पाया। विपुल तेजस्वी द्विजवरगण द्वैपायन मुनिकी आज्ञा पाके चारों ओर कुशाकी चटाईपर बैठ गये।

२७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महात्मा पाण्डवोंके बैठनेपर सत्यवतीपुत्र व्यासदेव बोले, हे महाबाहो धृतराष्ट्र! तुम्हारा तप वर्द्धित होता है न? हे नरनाथ! वनवाससे तुम्हारा मन प्रसन्न तो है? हे अनघ महाराज! तुम्हारे हृदयमें पुत्रविनाशजनित शोक तो नहीं विद्यमान है? तुम्हारा ज्ञाननिवह सुप्रसन्न हुआ है न? तुम बुद्धिको दृढ़ करके अरण्यविधिका आचरण करते हो न? वधू गान्धारी शोकसे अभिभूत तो नहीं होती? महाप्राज्ञ बुद्धिमती धर्म्मार्थदर्शिनी आगम और अपायोंकी तत्त्वोंको जाननेवाली यह गान्धारी देवी शोक तो नहीं करती? हे राजन्! जो अपने पुत्रोंको त्यागके गुरुसेवामें रत हुई है, वह कुन्ती अहङ्काररहित होकर तुम्हारी सेवा करती है? हे नरनाथ! तुमने महामना महात्मा धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवको ढाढ़स दिया है न? इन लोगोंको देखके तुम्हारा चित्त निर्म्मल तथा आनन्दित हुआ है न? और ज्ञान उदय होनेसे शुद्धचित्त हुआ है न? हे महाराज! सब भूतोंमें जितने गुण हैं, उनमेंसे निर्वैरता, सत्य और अक्रोध, येही तीनों मुख्य हैं।

हे भारत! इसलिये वनवाससे तुम्हें मोह तो नहीं हुआ? क्यों अपने वशमें रहनेसे अन्य अन्न अथवा उपवास ही हुआ करता है। हे राजेन्द्र! महात्मा विदुरका विषय तुम्हें विदित है? इसही विधानसे महात्मा धर्म्मका गमन हुआ करता है, धर्म्मही माण्डव्यके शापसे विदुरत्वको प्राप्त हुए हैं, वह महाबुद्धि महा-योगी सुमहामना महात्मा पुरुषप्रवर विदुर जिस प्रकार बुद्धिसम्पन्न हैं, देवताओंके बीच बृहस्पति और असुरोंके बीच शुक्र भी वैसे बुद्धिसम्पन्न नहीं हैं, उस समय सनातन धर्म्म बहुत दिनोंके उपार्ज्जित तपबलको व्यय करके माण्डव्य ऋषिके द्वारा अभिशप्त हुए थे।

वही महाबुद्धिमान् पहले ब्रह्माकी आज्ञा-नुसार निज तेज और बलसे मेरे द्वारा विचित्र-वीर्य्यके क्षेत्रमें उत्पन्न हुए थे। हे महाराज! पण्डित लोग जिसे धर्म्म कहके जानते हैं, तुम्हारे भ्राता वह महाबुद्धिमान् विदुर मनके द्वारा ध्यान तथा धारणासे सनातन देवदेवस्वरूप हुए थे; वह सनातन परुषश्रेष्ठ तपस्या करते हुए सत्य, शम, अहिंसा, दम दानके सहारे वर्द्धित हुए थे। स्वयं धर्म्मरूपी कुरुराज युधि-ष्ठिरने योगबलसे उस अमितबुद्धि प्राज्ञ विदुरके सहित जन्म लिया है। अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी और आकाशकी भांति धर्म्म इस लोक तथा परलोकमें सदा निवास करता है। हे राजेन्द्र! वह सर्व्वग है, इसीसे सब चराचरोंमें व्याप्त होकर निवास करता है, निष्पाप सिद्ध तथा देवगण ही उसका दर्शन किया करते हैं। हे राजन्! जो धर्म्म, वेही विदुर हैं और जो विदुर, वेही पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर निकट हैं, मैं देखता हूं, कि वह पाण्डुका पुत्र युधिष्ठिर दासकी भांति आपके निवास करता है, यही वह विदुर है। तुम्हारे भाई वह महात्मा बुद्धिसत्तम विदुर महात्मा कुन्तीपुत्रको देखकर महायोगबलसे इन्हींमें प्रविष्ट हुए हैं। हे भरतश्रेष्ठ! तुम भी शीघ्र कल्याण लाभ करोगे, इसीलिये तुम्हारा सन्देह छुड़ानेके निमित्त मैं तुम्हारे समीप आया हूं; हे महीपाल! पहले जगत्के बीच किसी महर्षिके द्वारा जो कार्य्य सम्पादित नहीं हुए, मैं उस तपस्याके आश्चर्य्यभूत फलको तुम्हें दिखा-ऊंगा। हे अनघ! तुम मेरे समीप कौनसी वस्तु पाने अथवा कौनसे विषयको देखने, सुनने वा जाननेकी इच्छा करते हो, वह मुझसे कहो, मैं उसे ही करूंगा।

२८ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, हे विप्र! नृपवर महीपति धृतराष्ट्रके निज भार्य्या गान्धारी तथा वधू कुन्तीके सहित वनमें जाने फिर विदुरके धर्म्मराजमें प्रविष्ट होने और पाण्डुपुत्रोंके आश्रम मण्डलमें वास करते रहनेपर उस समय जो आश्चर्य्य व्यापार हुआ था और परम तेजस्वी महर्षि व्यासदेवने जो ऐसा कहा था, कि 'तुम्हारा इष्ट साधन करूंगा,' वह सब मेरे निकट विस्तारपू-र्व्वक कहिये। हे प्रभु द्विजवर! कुरुवंशमें उत्पन्न हुए नरनाथ युधिष्ठिरने उस वनके बीच कितने समयतक वास किया था? और वे महात्मा लोग उस अन्तःपुरवासियों और सेनाके सहित वहां वास करते हुए क्या भोजन करते थे, वह आप मुझसे कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! उस समय पाण्डवलोगोंने कुरुराज धृतराष्ट्रकी आज्ञा पाके अनेक प्रकारके अन्न और पीनेकी वस्तु भोजन की। हे अनघ! उन लोगोंके उस वनमें सेना तथा अन्तःपुरवासियोंके सहित एक महीने तक विहार करनेपर वहांपर व्यासदेव आये यह मैंने तुम्हारे समीप यथार्थ कहा है। हे राजन्! वे लोग राजाके निकट व्यासदेवके पीछे बैठके वार्त्तालाप करने लगे; तब नारद, पर्व्वत, महातपस्वी देवल, विश्वावसु, तुम्बुरु और चित्रसेन प्रभृति अन्यान्य मुनियोंने वहां

आगमन किया। महातपस्वी कुरुराज युधिष्ठिरने धृतराष्ट्रकी आज्ञानुसार उन समागत ऋषियोंकी पूजा की।

तिसके अनन्तर वे लोग युधिष्ठिरके निकट पूजा पाके उत्तम पवित्र मयूरासनपर बैठे। हे कुरुद्वह! मुनियोंके बैठनेके अनन्तर महाबुद्धिमान राजा धृतराष्ट्र पाण्डुपुत्रोंके बीच घिरके बैठे; उनके पीछे गान्धारी, कुन्ती, द्रौपदी, सात्त्वतकुलमें उत्पन्न हुई सुभद्रा तथा अन्यान्य स्त्रियां अपर स्त्रियोंके सहित वहां बैठीं। हे नृपवर! वहांपर प्राचीन ऋषि तथा उन लोगोंमें देवासुर सम्बलित धर्म्मसंयुक्त दिव्य कथा होने लगी। अनन्तर कथाकी समाप्ति होनेपर वेद जाननेवाले पण्डितोंसे मुख्य वाग्मिवर महातेजस्वी व्यासदेव अत्यन्त प्रसन्न होकर प्रज्ञाचक्षु नरेन्द्र धृतराष्ट्रसे फिर कहने लगे। हे राजेन्द्र! पुत्रवियोगजनित शोकसे जलनेपर तुम्हारे हृदयमें जो भाव उदित हुए हैं, मैंने उसे समझा है। हे महाराज! गान्धारीके हृदयमें सदा जो दुःख निवास करता है, कुन्ती और द्रौपदीके भीतर जो सदा विद्यमान है तथा कृष्णकी बहिन सुभद्रा पुत्रविनाशजनित जिस तीव्र दुःखको मनके बीच धारण करती है, वह सब मुझे विदित हुआ है। हे नरनाथ! इस स्थानमें तुम लोगोंका समागम सुनके सन्देह छुड़ानेके निमित्त मैं आया हूं। ये देव, गन्धर्व और महर्षिगण आज मेरे चिरसञ्चित तपस्याके प्रभावको देखें। हे महाराज! तुम्हारी क्या कामना है, वह मुझसे कहो, मैं वही तुम्हें प्रदान करता हूं; मेरी तपस्याका फल देखो, मैं बरदान करनेके लिये प्रस्तुत हुआ हूं।

उस नरेन्द्र धृतराष्ट्रने अमितबुद्धि व्यासदेवका ऐसा बचन सुनके मुहूर्त्तभर सोचके निज अभिप्राय प्रकाश करना आरम्भ किया। धृतराष्ट्र बोले, मैं धन्य हूं! क्यों कि आपके द्वारा अनुग्रहीत हुआ; आज मेरा जीना सफल भया, क्यों कि आज साधुओं तथा आपके सङ्ग मेरा समागम हुआ। हे तपोधनगण! आज ब्रह्मकल्प आप लोगोंके सहित मेरा समागम होनेसे मुझे इस लोकमें ही निज अभिलषित गति प्राप्त हुई। हे अनघगण! आप लोगोंके दर्शनसे मैं निश्चय ही पवित्र हुआ; परलोकसे अब मुझे भय न रहा; परन्तु मेरे पुत्रवत्सल होनेसे उन दुर्बुद्धि मूढ़ पुत्रोंकी दुर्नीतियोंको स्मरण करते हुए मेरा अन्तःकरण अत्यन्त व्यथित होता है। जिस पापबुद्धि दुर्य्योधनके द्वारा पापरहित पाण्डुपुत्रगण निराकृत और हाथी घोड़ोंसे युक्त यह पृथ्वी तथा अनेक जनपद वासी महात्मा राजा लोग मारे गये; उस मन्दभाग्य पुत्रोंके निमित्त ही मेरा हृदय विदीर्ण होता है। हे ब्रह्मन्! जिन लोगोंने मेरे पुत्रोंके निमित्त पिता, माता, पत्नी, प्राण और मनके प्रियपुत्रोंको परित्याग कर युद्धके लिये आकर मित्रके निमित्त मृत्युके वशमें होकर प्रेतराजके स्थानमें गमन किया है, उन लोगोंकी क्या गति हुई? मेरे पुत्रों तथा पौत्रोंके बीच जो लोग महाबलवान शान्तनुपुत्र बूढ़े भीष्म और द्विजसत्तम! द्रोणाचार्य्यके युद्धमें संहार करके मरे हैं, उनके निमित्त मेरा चित्त अत्यन्त सन्तप्त होता है। पृथ्वीभरके राज्यका अभिलाषी सुहृद्द्वेषी पापात्मा उस मूढ़पुत्रके द्वारा यह प्रदीप्त कुल नष्ट हुआ; दिन रात इन्हीं विषयोंको स्मरण करते हुए दुःख और शोकसे समाहत तथा जलके मैं शान्तिलाभ नहीं कर सकता हूं। हे पिता! यह विषय सर्व्वदा मेरे स्मृतिपथारूढ़ होनेसे मुझे तनिक भी शान्ति लाभ नहीं होती है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! उस राजर्षि धृतराष्ट्रका वैसा विविध परिदेवित सुनके गान्धारी, कुन्ती, द्रुपदराजपुत्री द्रौपदी, सुभद्रा तथा अन्यान्य नरनारियों तथा बधूगणोंका शोक फिर नवीन होगया। परन्तु

पुत्रशोकयुक्त वहनेत्रवाली गान्धारी उठके हाथ जोड़कर निज श्वशुर व्यासदेवसे बोली, हे मुनि-पुङ्गव! आज सोलह वर्ष व्यतीत हुआ, मरे हुए पुत्रोंके शोक इस नरनाथको तनिक भी शान्ति नहीं होती है। हे विभु! पुत्रशोकयुक्त यह भूपति धृतराष्ट्र सदा लम्बी सांस छोड़ते हुए सारी रात बिताते हैं, एक बार भी शयन नहीं करते। हे महामुनि! आप तपबलसे दूसरे लोकोंकी सृष्टि करनेमें समर्थ हैं, परन्तु इस राजाके परलोकमें गये हुए पुत्रोंको क्या दिखा सकेंगे? पुत्रबधुओंके बीच अत्यन्त प्रिय ज्ञाति तथा पुत्रोंसे रहित यह कृष्णा द्रौपदी अत्यन्त शोक करती है। उत्तम वचन कहने-वाली कृष्णाकी बहिन भाविनी यह सुभद्रा अभि-मन्युके वधसे अत्यन्त सन्तप्त होकर बहुत ही शोकार्त्त हुई है; यह भूरिश्रवाकी भार्य्या स्वामीके मरनेसे शोकार्त्ता होकर अत्यन्त शोक करती है। बुद्धिमान बाह्लिक जिसके श्वशुर हैं, वेही कुरुकुलोद्वह सोमदत्त पिताके सहित महासंग्राममें मरे हैं। हे महामुनि! संग्राममें न भागनेवाले महाबुद्धिमान श्रीमान् तुम्हारे इस पुत्रके जो एक सौ पुत्र युद्धमें मारे गये, उनकी ये एक सौ भार्य्या दुःख तथा शोकसे समाहत होकर बार बार मेरे तथा राजाके शोकको बढ़ाती हैं और वे सब उस शोकार्त्त-चित्तसे ही मेरी सेवा करती हैं। हे प्रभु! सोमदत्त प्रभृति जो सब महारथ महात्माओंने शूरवर मेरे श्वशुर-कुलको नष्ट किया है, उनकी क्या गति हुई? हे भगवन्! ये महीपति मैं और आपकी वधू कुन्ती जिस प्रकार आपकी कृपासे शोकरहित होवें, आप वैसाही करिये। गान्धारीके ऐसा कहनेपर नियम और व्रतादिसे कृश शरीरवाली कुन्तीने आदित्यसदृश गुप्त रीतिसे उत्पन्न भये उस पुत्रको स्मरण किया। दूरश्रवणदर्शी ऋषिवर वरदाता व्यास-देवने सव्यसाचीकी माता उस दुःखिता कुन्ती देवीकी ओर देखा। तिसके अनन्तर श्रीवेदव्यास मुनि उससे बोले, हे महाभागे! तुम्हारे मनके बीच जो विषय उपस्थित हुआ है, वह तुम मुझसे कहो। तब कुन्ती सिर नीचा करके श्वशुरको प्रणाम कर लज्जापूर्वक पुराना वृत्तान्त विस्तारके सहित कहने लगी।

२९ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, हे भगवन्! आप श्वशुर और देवताके देवता हैं, आपही हमारे देवाधिदेव हैं; इसलिये मैं आपके समीप सत्य वचन कहती हूं, सुनिये।

एकबार क्रुद्धस्वभाववाले परम तपस्वी द्विज-वर दुर्वासा भिक्षा तथा भोजनके निमित्त मेरे पिताके निकट उपस्थित हुए, तब मैंने सेवासे उन्हें सन्तुष्ट किया। मेरे शौच, त्याग निरप-राध तथा शुद्धचित्त सम्पन्न होकर सेवा करने-पर उन्होंने क्रोधके कार्य्यमें भी कोप नहीं किया। बल्कि उस महामुनिने मुझसे परम प्रसन्न और कृतकृत्य होकर वर देनेके लिये उद्यत होकर कहा, कि तुम्हारा वचन अवश्य स्वीकार्य्य है। तिसके अनन्तर मैंने शापभयसे उस विप्रसे फिर विनयवाक्यसे वर मांगा, तब उन्होंने कहा, 'ऐसा ही होगा'। इतनी बात कहके वह फिर मुझसे बोले, हे भद्रे शुभानने! तू धर्मकी जननी होगी और तुम जिन देवता-ओंको आह्वान करोगी, वेही तुम्हारे वशमें होजायंगे। उस विप्रवरके इतनी बात कहके अन्तर्द्धान होनेपर मैं अत्यन्त विस्मित हुई; मेरी स्मरणशक्ति सब अवस्थामें ही समभावसे रहती है, कदापि लुप्त नहीं होती; कुछ दिनके अन-न्तर मैं कोठेपर निवास करती हुई उदय हुए सूर्य्यको देखकर ऋषिके वचनको स्मरण करके दिवाकरकी अभिलाष की; उस समय बाल्य-स्वभावसे मैं उस विषयमें दोष न समझ सकी। अनन्तर सहस्रांशु सूर्य्यदेव निज शरीरको दो

डिस्सों में विभक्त करके आकाश और भूमण्डलमें स्थापित करते हुए मेरे निकट आये। वह एक अंशसे सब लोकोंको ताप प्रदान करते हुए दूसरे अंशसे मेरे समीप आके मुझे कांपती हुई देखके बोले, वर ग्रहण करो; मैंने सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम करके कहा, आप मेरे समीपसे चले जाइये। उस सूर्यने मेरे वचनको न मानके मुझसे कहा, तुमने जिस लिये मुझे आह्वान किया है, वह वृथा न होगा। यदि मुझे प्रत्याख्यात होना पड़े, तो जिसने तुम्हें वर दिया है, मैं उस ब्राह्मणको और तुम्हें भस्म करूंगा। मैंने सूर्यका ऐसा वचन सुनके उस उपकारी ब्राह्मणको शापसे बचाके कहा, हे देव! मेरे तुम्हारे सदृश पुत्र हो, आप मुझे यही वर दीजिये। तिसके अनन्तर सूर्य निजतेजके सहारे मुझमें प्रविष्ट होके मुझे मोहित करते हुए बोले, कि तुम्हारे मेरे समान पुत्र होगा, ऐसा कहके वह स्वर्गमें चले गये। तिसके अनन्तर मैं उस वृत्तान्तको गोपनकर पिताके अन्तर्गृहमें जाके गूढ़ोत्पन्न बालक कर्णको जलमें परित्याग किया। हे विप्र! उस ऋषिने जैसा कहा था, निश्चय ही मैं उस देवके प्रसादसे फिर कन्या होगई। हे विप्रर्षि! मैंने मूढ होकर जानके जो पुत्रके विषयमें उपेक्षाकी थी, वही आज मुझे जलाता है, यह मैंने आपके निकट यथार्थ कहा। हे भगवन्! इसमें चाहे पाप हो वा पुण्य हो, मैंने आपके निकट विस्तारके सहित कहा; परन्तु उस पुत्रको देखनेके लिये मुझे जो इच्छा हुई है, आप कृपा करके उसे पूरण करिये। हे अनघ मुनिसत्तम! इस राजाके हृदयका जो भाव है, वह आपको विदित है, ये जो कामना करते हैं, उसे आज ही प्राप्त करें, यही हमारी अभिलाष है।

वेदविदाम्वर व्यासदेव कुन्तीका ऐसा वचन सुनके बोले, कि तुमने मुझसे जो कहा, वह सत्य है वह सब उत्तम रीतिसे सम्पन्न होगा। तुम्हारा कुछ अपराध नहीं क्यों कि तुम्हें कन्याभाव प्राप्त हुआ है। देवगण निज ऐश्वर्य्यबलसे शरीरमें प्रवेश किया करते हैं, देवताश्रित पुरुष सङ्कल्प वाक्य दृष्टि, स्पर्श और संहर्ष,—इस पांच प्रकारसे जीव उत्पन्न कर सकते हैं। हे कुन्ती! तुम यह निश्चय जानना, कि मनुष्य धर्म्मसे विद्यमान रहनेपर भी तुम्हें कदापि मोह न होगा; मैं कहता हूं, कि तुम्हारी सब मानसिक पीड़ा दूर जागी। देखो बलवान पुरुषोंका सभी हितकर, सभी पवित्र और सभी धर्म्म हुआ करता है।

३० अध्याय समाप्त।

श्रीवेदव्यास मुनि बोले, हे भद्रे गान्धारी! तुम रातमें सोके उठे हुए लोगोंकी भांति, पुत्र, भाई, सखा पितृगणके सहित बान्धवोंको देखोगी, कुन्ती कर्णको, यदुकुलमें उत्पन्न हुई सुभद्रा अभिमन्युको और द्रौपदी अपने पांचो पुत्रों, पिता तथा भाइयोंको देखेगी। हे महाराज! तुम और पृथाने मुझसे जो कहा है, वह विषय पहले ही मेरे अन्तःकरणमें उदित हुआ था; वे महात्मा राजा लोग क्षत्रधर्म्म परायण होके युद्धमें मरनेसे वे किसीके भी शोचनीय नहीं हैं, हे अनिन्दिते! वह सुरकार्य्य अवश्यम्भाव्य था, इसीसे वे सब कोई देवअंशके सहारे पृथ्वीमें जन्मे थे। वेही मनुष्य रूपी गन्धर्व्व, अप्सरा, पिशाच, गुह्य, राक्षस, पुण्यजन, सिद्धदेवर्षि, देव, दानव तथा निर्म्मल देवर्षिवृन्द उस कुरुक्षेत्रके युद्धमें मरे हैं, ये जो धीमान् धृतराष्ट्र हैं, ये पहले गन्धर्व्वराज थे, वेही गन्धर्व्वराज मनुष्य लोकमें धृतराष्ट्ररूपसे जन्म लेकर तुम्हारे पति हुए हैं। विशिष्टतम अच्युत पाण्डु मरुद्गणसे उत्पन्न हुए थे और क्षत्ता विदुर तथा राजा युधिष्ठिर धर्म्मके अंशसे उत्पन्न हुए हैं। हे शुभदर्शने! दुर्य्योधन कलि, शकुनि द्वापर और दुःशासन प्रभृतिको राक्षस जानो। हे शोभने! कर्णको रुताप दातप्रवर

द्विधाकृत विग्रह लोकतापन सूर्य्य समझो। बलवान अरिंदमन भीमसेन मरुद्गण, पृथापुत्र धनञ्जय नर हृषीकेश नारायण और यमजको अश्विनी कुमाररूपी जानना। जो सबको हर्षित करनेवाला पार्थका पुत्र छः महारथोंके द्वारा मारा गया है, उस सुभद्रापुत्र अभिमन्युको योगबलसे दो और धारण किये हुए चन्द्रमा जानो। अग्निसे द्रौपदीके सहित उत्पन्न हुए, धृष्टद्युम्नको अग्निका अंश और शिखण्डीको राक्षस जानो। द्रोणको वृहस्पतिका अंश, द्रोणपुत्र अश्वत्थामाको रुद्रका अंश और गङ्गानन्दन भीष्मको मनुष्यरूपी वसु करके मालूम करो।

हे महाप्राज्ञ शोभने! ये देववृन्द इसही प्रकार मनुष्यत्व प्राप्त करके निज निज कार्य्योंको पूरा करते हुए फिर सुरपुरमें गये हैं। सबके हृदयमें जो यह दुःख सदा रहता है, उसे आज परलोककृत भयसे दूर करूंगा! तुम सब कोई भगीरथी नदीमें जाओ, जो लोग इस रणभूमिमें मरे हैं, वे सब कोई वहांपर तुम लोगोंको दीख पड़ेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय सब लोगोंने व्यासदेवका ऐसा वचन सुनके महासिंहनाद करते हुए गङ्गाद्वारमें गमन किया। धृतराष्ट्रने मन्त्रियों, समागत गन्धर्व्वों, मुनियों तथा पाण्डवोंके सहित गमन किया। तिसके अनन्तर सब लोगोंके गङ्गाद्वारमें जाने तथा प्रीतिपूर्व्वक सुखसे वहां स्थित होनेपर बूढ़े राजा धीमान् धृतराष्ट्रने स्त्रियों, पाण्डवों और सेवकोंके सहित वहां जाके अभिलषित स्थानमें निवास किया। वे लोग मरे हुए राजाओंको देखनेको इच्छासे रात्रिके समागमको प्रतीक्षा करने लगे, वह दिन उन लोगोंको एक सौ वर्षके समान मालूम होने लगा। अनन्तर सूर्य्यके पवित्र अस्तमय गिरिवरमें जानेपर वे सब लोग अभिषेक कार्य्यको पूरा करके रात्रिके कार्य्य करने लगे।

२१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर रात्रिका समय उपस्थित होनेपर वे सब कोई सायं सन्ध्या करके व्यासदेवके निकट गये। उस समय धर्म्मात्मा पवित्र और एकाग्र चित्तसे पाण्डवों तथा ऋषियोंके सहित बैठे; गान्धारीके सहित सब स्त्रियां और तथा जनपदवासी लोग अवस्थाके अनुसार क्रमसे बैठ गये। अनन्तर महातेजस्वी महामुनि व्यासदेवने जलमें स्नान करते हुए कुरुपाण्डवोंकी मृत सेना तथा अनेक देशनिवासी महाभाग राजाओंको आह्वान किया। हे जनमेजय! तिसके अनन्तर जलके बीच कुरुपाण्डवोंकी सेनाका पहिलेकी भांति तुमुल शब्द उत्पन्न हुआ; अनन्तर वे राजालोग भीष्म और द्रोणके सहित सेनाके सङ्ग उस जलसे उठे। सेना और पुत्रके सहित विराट्, द्रुपद, द्रुपदके पुत्र, सुभद्रानन्दन अभिमन्यु, घटोत्कच, राक्षस, कर्ण, दुर्य्योधन, महारथ, शकुनि, दुःशासन प्रभृति महाबली धृतराष्ट्रके सब पुत्र, जरासन्धका पुत्र, भगदत्त, वीर्य्यवान जलसन्ध, भूरिश्रवा, शल, शल्य, भाइयोंके सहित वृषसेन, राजपुत्र लक्ष्मण, धृष्टद्युम्ननन्दन, शिखण्डीके पुत्र, भाइयोंके सहित धृष्टकेतु, अचल, वृषक, अलायुध, राक्षस, वाह्लिक, सोमदत्त, राजा चेकितान, बहुतायतके कारण सबके नाम नहीं कहे गये; इनके सहित दूसरे बहुतेरे लोग दिव्य प्रकाशमान शरीर धारण करके जलसे प्रकट हुए। जिस वीरका जैसा वेष तथा जैसा वाहन था, राजालोग उस ही वेष तथा वाहनसे युक्त होकर सबके दृष्टिगोचर हुए। सब कोई दिव्य वस्त्र, प्रकाशमान कुण्डल तथा माला धारण करते हुए वैर, अहङ्कार, क्रोध और मत्सररहित होकर अप्सरा तथा बन्दिगन्धर्व्वोंके गीतके सहारे स्तुतियुक्त होने लगे। हे नरनाथ! उस समय सत्यवतीपुत्र मुनिश्रेष्ठ व्यासदेवने परम प्रसन्न होकर धृतराष्ट्रको दिव्य नेत्र प्रदान किया। दिव्य ज्ञानबलसे युक्त यश-

स्विनी गान्धारी युद्धमें मरे हुए पुत्रोंको देखने लगी; वे सब कोई अत्यन्त विस्मित होकर टक-टक नेत्रसे उस रोएंको खड़ा करनेवाले अचिन्त्य अद्भुत व्यापार देखने लगे। अत्यन्त उत्कृष्ट प्रहृष्ट नर नारियोंसे युक्त आश्चर्यमय वह उत्सव चित्रपटकी भांति उनके दृष्टिगोचर हुआ। हे भरतश्रेष्ठ! धृतराष्ट्र महामुनि व्यासदेवकी कृपासे दिव्य नेत्रके सहारे उन लोगोंको देखकर अत्यन्त आनन्दित हुए।

३२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर वे पुरुषश्रेष्ठगण क्रोध, मत्सरता और पापरहित होके परस्पर मिले। वे लोग सुरलोकमें समागत देवताओंकी भांति प्रहृष्ट होकर ब्रह्मर्षि-विहित परम पवित्र विधि अवलम्बन करके पुत्र पिता तथा माताके सहित भार्य्या पतिके सङ्ग, भ्राता भ्रातृभावसे और मित्र मित्रके सङ्ग मिले। परन्तु पाण्डव लोग अत्यन्त हर्षके सहित महाधनुर्द्धारी कर्ण, सुभद्रापुत्र अभिमन्यु और द्रौपदीके पुत्रोंके निकट गये। हे महीपाल! उन लोगोंने कर्णके सङ्ग मिलके परम प्रीति अनुभव करते हुए सुहृदताके सहित एकत्र निवास किया। हे भरतप्रवर! मुनिश्रेष्ठ व्यासदेवकी कृपासे वे सब क्षत्रिय योद्धा लोग आपसमें मिलके मन्यु असुहृदता परित्याग करके सुहृदतापूर्व्वक एकत्र स्थित हुए। पुरुषश्रेष्ठ कौरवों तथा अन्यान्य राजाओंने परस्पर पुत्र और बान्धवोंके सङ्ग मिलके प्रसन्नचित्तसे परितोषके सहित इस ही प्रकार उस रात्रिको विहार करते हुए इन्द्रकी भांति सुख अनुभव किया। हे भरतर्षभ! योद्धाओंके परस्पर एकत्रित होनेसे उस समय उन लोगोंमें शोक, भय, त्रास, दुःख तथा अयश कुछ भी न रहा; इसके अतिरिक्त वे सब स्त्रियां पिता, भाई, पति तथा पुत्रके सहित समागत होकर परम हर्षपूर्व्वक एक बारगी दुःखरहित हुईं। वे सब वीरगण तथा स्त्रियें इस ही प्रकार एक रात्रि विहार करके परस्पर आमन्त्रण तथा आलिङ्गन करनेके अनन्तर वीर लोग जिस स्थानसे आये थे, वहां चले गये। अनन्तर मुनिश्रेष्ठ व्यासदेवने जब उन समागत लोगोंको बिदा किया, तो वे लोग सबके सामने ही क्षणभरके बीच अन्तर्द्धान होगये। वे महात्मा लोग पुण्य देनेवाली भागीरथी नदीमें स्नान करके ध्वजायुक्त रथोंमें चढ़कर अपने अपने स्थानपर गये; उनके बीच किसीने सुरलोक किसीने वरुणलोक किसीने कुबेर लोक और किसीने, यमलोकमें गमन किया। राक्षसों तथा पिशाचोंके बीच कोई महात्मा वाहनोंके द्वारा और कोई पांवके सहारे ही विचित्र चालसे उत्तर कुरुदेशमें गये। उन सब लोगोंके जानेके अनन्तर कुरुकुलके हितैषी धर्म्मशील महातेजस्वी वेदव्यासमुनि जलमें निवास करते हुए पतिहीन क्षत्रिय स्त्रियोंसे बोले, कि जिन स्त्रियोंको, पतिलोकमें जानेकी इच्छा है, वे शीघ्र ही अतन्द्रित होकर इस गङ्गाजलमें स्नान करें।

तिसके अनन्तर वे स्त्रियें श्रीवेदव्यास मुनिका वचन सुनके श्रद्धायुक्त होकर श्वशुरको अपना अभिप्राय सुनाके शीघ्र ही देवनदी गङ्गाके जलमें प्रविष्ट हुईं। हे पृथ्वीनाथ! उस समय वे साध्वी स्त्रियें मानुष शरीर छोड़के स्वामीके सङ्ग जा मिलीं; उन शीलवती पतिव्रता क्षत्रियास्त्रियोंने इस ही प्रकार गङ्गाजीमें प्रवेश करके शरीर छोड़कर स्वामीकी सलोकता पाई। उनके पतिका जैसा रूप, आभूषण, माला और वस्त्र था, उन्होंने भी वैसा ही रूप, आभरण, माला और वस्त्र धारण किया। वे शीलगुणसम्पन्न सर्व्वगुणयुक्त स्त्रियें विमानमें निवास करती हुई अमविहीन होकर निज निज स्थानमें गईं। उस समय जिसकी जैसी कामना हुई थी, वरदाता व्यासदेवने उनकी वह कामना पूरी की।

अनेक देशोंके समागत पुरुषगण देवताओंके पुनरागमन वृत्तान्तको सुनके अत्यन्त हर्षित तथा आनन्दित हुए; जो लोग उन लोगोंका प्रियसमागम पूरी रीतिसे सुनते हैं, वे इसलोक और परलोकमें सदा प्रियलाभ किया करते हैं। जो धार्म्मिकवर विद्वान् मनुष्य इस अनामयं इष्ट बान्धवसंयोगको अनायास ही सुनाते हैं, उन्हें इसलोक तथा परलोकमें यश वा शुभ गति प्राप्त हुआ करती है। हे भारत! जो धृतिवान् मनुष्य इस अत्याश्चर्य पर्व्वको सुनते हैं, वे लोग स्वाध्याय, तपस्या, सदाचार, दानयुक्त निष्पाप, सरल, पवित्र, शान्तचित्त, हिंसा और असत्यसे रहित, आस्तिक तथा श्रद्धावान् होकर परम गतिको प्राप्त हुआ करते हैं।

३३ अध्याय समाप्त।

सौति बोले, विद्वान् राजा जनमेजय पितामहोंका इस प्रकार गमनागमन वृत्तान्त सुनके अत्यन्त आनन्दित होकर पुनरागमनका विवरण पूछते हुए बोले, शरीर छोड़े हुए पुरुषोंका फिर उस प्रकार दीख पड़ना कैसे सम्भव हुआ? प्रतापशाली द्विजवर व्यासशिष्य ऐसा प्रश्न सुनके नरनाथ जनमेजयसे कहने लगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! ऐसा निश्चय है, कि समस्त कर्म्म अविनाशी हैं, उन कर्म्मोंसे जीवोंके शरीर तथा आकृतिसमूह उत्पन्न हुआ करता है। महाभूतोंका नित्य भूताधिपतिके संयोग निबन्धनसे उनका नित्य संवास होता है; परन्तु उनके पृथक् होनेपर भी उनका विनाश नहीं होता; कर्म्म अनायास साध्य है, उसका फलागम सत्य प्रधान है, इस ही लिये आत्मा कर्म्मफलसे युक्त होकर सुख दुःख भोग किया करता है। ऐसा निश्चय है, कि चेतन्य अविनाशी होनेपर भी नश्वर प्राणियोंमें युक्त रहता है, इसका अविच्छेद ही प्राणियोंका आत्मीयभाव है; जबतक कर्म्म क्षय नहीं होता, तबतक ही उसकी स्वरूपता रहती है; इस लोकमें मनुष्य क्षीणकर्म्मा होनेसे रूपान्तर प्राप्त हुआ करता है। समस्त स्वभावको संहत होकर एकत्व वा एक शरीर प्राप्त करके पृथक् भावज्ञ पुरुषोंके निकट नित्य रूपसे निवास करते हैं। अश्वमेधमें घोड़ा मारनेके विषयमें ऐसी जनश्रुति है, कि जीवोंका प्राण नित्य लोकान्तरमें गमन करता है। हे पृथ्वीपति! मैं आपसे यह हितकर प्रियवचन कहता हूं, सुनिये। मैंने ऐसा सुना है, कि तुम्हारे यज्ञके समयमें सब मार्ग देवताओंके गमन करनेसे रुद्ध हुए थे। जिस स्थानमें आपने यज्ञ किया, देवताओंने वहां आके तुम्हारे हितकी चेष्टा की थी। जब देवता लोग यज्ञमें एकत्र होके पशुओंको गमन करनेकी आज्ञा करते हैं, तभी वे गमन करनेमें प्रवृत्त होते हैं; यज्ञमें विना प्रदत्त हुए वे नित्य नहीं होते। जो पुरुष इस नित्य पञ्चतत्त्व अर्थात् पांचों महाभूतों तथा नित्य आत्मामें जीवका अनेक समयोग देखता है, वह वृथामति और वियोगसे अत्यन्त शोकार्त्त होता है, उस पुरुषको मेरे मतमें बालक समझना चाहिये। जो पुरुष वियोगमें दोषदर्शी होता है, वही संयोग परिवर्ज्जन करता है और जिसको असङ्गमें आसक्ति नहीं होती; उसे ही पृथिवीमें वियोग जनित महादुःख हुआ करता है। जो पुरुष अभिमानरहित है, वही परावरज्ञ होता है और अपरज्ञ पुरुषको परम बुद्धिका बोध होनेपर उसे मोहसे छुटकारा मिलता है। अदर्शनके लिये ही वे अदृश्य हुए हैं, इस ही निमित्त मैं उन्हें नहीं जानता, वे भी मुझे नहीं जानते; उसमें मुझे वैराग्य नहीं है। किन्तु यह अनीश्वर मनुष्य जिस जिस शरीरसे जो जो कार्य्य करता है, उस ही उस शरीरसे उसे उन फलोंको भोगना होता है, मानसिक कार्य्य मनसे और शारीरिक कर्म्म शरीरके द्वारा प्राप्त हुआ करते हैं।

३४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे कुरुवह ! नरनाथ धृतराष्ट्रने पुत्रोंको न देखनेपर ऋषिकी कृपासे निज निज रूपधारी पुत्रोंको फिर देखा। पुरुषश्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्रको ऋषिकी कृपासे राजधर्म, ब्रह्मोपनिषद और बुद्धिनिश्चय प्राप्त हुआ; महाप्राज्ञ विदुरने तपोबलसे और धृतराष्ट्रने तपस्वी व्यासदेवकी कृपासे सिद्धि पाई।

जनमेजय बोले, यदि वरदाता व्यासदेव मुझे वैसे रूप, वेष तथा अवस्थायुक्त मेरे पिताका दर्शन करा सकें, तो मैं आपकी सब बातोंका विश्वास करूं। उस ऋषिश्रेष्ठकी कृपासे मेरे पिताका दर्शन होनेपर मैं परम प्रसन्न, कृतार्थ और कृतनिश्चय हूंगा तथी मेरी चिरकामना परिपूर्ण होगी।

सौति बोले, उस नरनाथ जनमेजयके ऐसा कहनेपर धीमान् प्रतापवान वेदव्यास मुनिने परीक्षितको बुलाया। तिसके अनन्तर राजा जनमेजयने वैसे ही रूप, वेष और अवस्थायुक्त सुरलोकसे आये हुए श्रीमान् पिता, महात्मा शमीक, उनके पुत्र शृङ्गी ऋषि तथा राजा परीक्षितको मन्त्रियोंके सहित देखा। अनन्तर उन्होंने अत्यन्त आनन्दित होके यज्ञके अन्तमें पिताको स्नान कराके स्वयं स्नान किया। उस समय राजा जनमेजय स्नान करके यायावरकुलमें उत्पन्न जरत्कारुपुत्र द्विजश्रेष्ठ आस्तिक मुनिसे बोले, हे आस्तिक ! मेरा यह यज्ञ अत्यन्त आश्चर्यजनक बोध हुआ, क्यों कि आज मेरे शोकनाशक पिता समागत हुए।

आस्तीक मुनि बोले, हे कुरुश्रेष्ठ ! तपोनिधि पुराण ऋषि द्वैपायन मुनि जिसके यज्ञमें अधिष्ठित होते हैं, उसके दोनों लोक जीत हुआ करते हैं। हे पाण्डवनन्दन ! आपने विचित्र आख्यान सुना, सांपोंको जलाया और पिताकी पदवीको प्राप्त हुए। हे महाराज ! तक्षक आपके सत्यसे किसी प्रकार छूट गया, ऋषियोंके पूजित होनेसे महात्माओंकी गति देखी गई, इस पापविनाशी आख्यानको सुननेसे विपुल धर्म प्राप्त हुआ और उदार लोगोंके दर्शनसे हृदयकी ग्रन्थि छूट गई। जो लोग धर्मके पक्षपाती सद्वृत्त रुचिसम्पन्न हैं तथा जिनके दर्शनसे पापका नाश होता है, उन्हें नमस्कार है।

सौति बोले, राजा जनमेजयने द्विजश्रेष्ठ वैशम्पायन मुनिके समीप यह सब सुनके उस ऋषिको बार बार सम्मानित करके पूजा की। अनन्तर धर्मज्ञसत्तम जनमेजयने ऋषिवर अच्युत वैशम्पायनसे वनवासकी कथाका शेष वृत्तान्त पूछा।

३५ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, जननाथ धृतराष्ट्रने पुत्रों, राजा युधिष्ठिर तथा आत्मीयजनोंको देखकर अन्तमें क्या किया ?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वह राजर्षि धृतराष्ट्र पुत्रदर्शनरूपी उस महान् आश्चर्य व्यापारको देखकर शोकरहित होके फिर आश्रममें आये। साधारण लोग और परमर्षिवृन्द धृतराष्ट्रकी आज्ञानुसार यथाभिलषित स्थानमें चले गये। महात्मा पाण्डवोंने स्त्रियोंको सङ्ग लेकर सेनाके सहित महात्मा पृथ्वीनाथ धृतराष्ट्रके निकट फिर गमन किया। लोकपूजित ब्रह्मर्षि सत्यवतीपुत्र मुनिश्रेष्ठ व्यासदेव उस आश्रममें आके धृतराष्ट्रसे कहने लगे। हे कुरुनन्दन महाबाहो धृतराष्ट्र ! तुमने ज्ञानवृद्ध पुण्यकर्म करनेवाले पूजनीय अभिजनगणोंके बीच वृद्ध, वेद वेदाङ्ग जाननेवाले धर्मज्ञ पुरातन ऋषियोंकी विविध कथा और देवर्षि नारद मुनिके समीप देवरहस्य सुना है; इसलिये अब शोकमें मन न लगाना, क्यों कि विद्वान् पुरुष दैवनिर्बन्धमें व्यथित नहीं होते। तुमने पुत्रोंको जिस प्रकार देखा, वे लोग क्षत्रधर्मके अनुसार शस्त्रपूत शुभ गति पाके उस ही प्रकार इच्छानुसार विहार किया करते हैं। ये धीमान् युधिष्ठिर, भाइयों और सुहृज्जनोंके सहित तुमसे अनुरोध करते

हैं, तुम इन्हें विदा करो ; ये तुम्हारे समीपसे विदा होके निज राज्यमें इनके राज्य शासन करें ; इन लोगोंने एक महीनेसे अधिक वनमें वास किया है। हे नरनाथ! अत्यन्त यत्नके सहित सदा राजाको रक्षा ही राजाओंका धर्म्म है ; क्यों कि राजा लोग प्रत्ययगणोंसे सदा आक्रान्त हुआ करते हैं। कुरुराज वाग्मी धृतराष्ट्र अमिततेजस्वी वेदव्यास मुनिका ऐसा वचन सुनके युधिष्ठिरको आह्वान करके कहने लगे। हे अजातशत्रो! तुम्हारा मङ्गल हो, तुम भाइयोंके सहित मेरा वचन सुनो। हे महीपाल! तुम्हारी कृपासे अब शोक मुझे बाधित नहीं कर सकता। हे पुत्र! पहले तुम्हें हस्तिनापुरके प्रभु तथा प्रिय विषयमें सब प्रकारसे वर्त्तमान जानके मैंने तुम्हारे अनुगत होकर जैसे तुम्हारे सङ्ग सुखभोग किया था, इस समय भी उस ही प्रकार सुखी हुआ। हे वत्स! मुझे तुमसे पुत्रफल प्राप्त हुआ, तुममें मेरी परम प्रीति रहे, तुम्हारे विषयमें मुझे तनिक भी क्रोध नहीं है ; इसलिये तुम शीघ्र जाओ। तुम्हारे इस स्थानमें सदा रहनेसे तुम्हें देखकर मेरी तपस्या नष्ट होती है ; तुम्हारा तपयुक्त शरीर देखकर मेरा मन तुममें लीन हुआ है। मेरे समान ये तुम्हारी दोनों माता बहुत समयसे सूखे पत्ते भोजन करती हुई व्रत नियममें वर्त्तमान हैं। व्यास मुनिके तपोबलसे और तुम्हारे समागमसे वे परलोकमें गये हुए दुर्य्योधन प्रभृति पुत्र तथा बान्धवगण दीख पड़े। हे अनघ! मेरे जीवनका प्रयोजन निवृत्त हुआ है ; अब तुम आज्ञा करो मैं उग्र तपस्या अवलम्बन करूंगा। हे पुत्र! आज पितृपिण्ड, कीर्त्ति तथा यह कुरुकुल तुममें प्रतिष्ठित हुआ। हे महाबाहो! इसलिये आज वा कल गमन करो विलम्ब मत करो। हे भरतर्षभ! तुमने बहुतसी नीति सुनी है, इसलिये तुम्हारे विषयमें मैं अपना कुछ भी वक्तव्य नहीं देखता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा धृतराष्ट्रके ऐसा कहनेपर नरनाथ युधिष्ठिर उनसे बोले, कि हे धर्म्मज्ञ! मैं निरपराध हूं, इसलिये मुझे परित्याग करना आपको उचित नहीं है। मेरे भाई और सेवक लोग इच्छानुसार जावें, परन्तु मैं संयत वा व्रतनिष्ठ होकर कुन्ती तथा गान्धारी माता और आपका अनुगमन करूंगा। अनन्तर गान्धारी युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके बोली, हे पुत्र! तुम ऐसा मत करो, मेरा वचन सुनो ; यह कुरुकुल तथा मेरे श्वशुरका पिण्ड तुम्हारे अधीन हुआ है। हे पुत्र! तुम्हारे द्वारा हम लोगोंकी यथेष्ट सेवा हुई है, महाराज जो वचन कहते हैं, वह तुम्हें प्रतिपालन करना उचित है ; प्रियवाक्यको अतिक्रम करना पुत्रका कार्य्य नहीं है, इसलिये तुम शीघ्र जाओ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, युधिष्ठिरने गान्धारीका ऐसा वचन सुनके प्रीतिपूर्व्वक वाष्प-परिपूर्ण दोनों नेत्रोंसे आंसू बहाते हुए रोती हुई कुन्ती देवीसे यह वचन बोले, हे माता! राजा और यशस्विनी गान्धारी मुझे परित्याग करती हैं, परन्तु मेरा चित्त तुममें बद्ध रहनेसे मैं दुःखित होकर किस प्रकार गमन करूं? हे धर्म्मचारिणी! मैं तुम्हारी तपस्यामें विघ्न करनेके लिये उत्साहित नहीं होता, क्यों कि तपस्यासे महत् फल प्राप्त हुआ करता है, इसलिये तपस्याके तुल्य और कुछ भी नहीं है, हे रानी! पहलेकी भांति राज्यमें मेरा वैसा अनुराग नहीं होता है, मेरा मन इस समय सब प्रकारसे तपस्यामें अनुरक्त हुआ है। हे शुभे! पहलेकी भांति मेरे पास वसुबल नहीं है, इस समय यह समस्त पृथ्वीमण्डल सूना होनेसे मुझे प्रीतिकर नहीं होता है। पाञ्चालगण सब प्रकारसे नष्ट हुए, अब केवल कथा मात्र शेष हैं, उनका कर्त्ता किसीको भी नहीं देखता, वे सब कोई द्रोणाचार्य्यके द्वारा संग्राममें

भस्म होगये हैं, जो लोग शेष थे, उन्हें द्रोण-पुत्र अश्वत्थामाने रात्रिके समय मार डाला। मैं बिना अर्थके केवल धर्म्मार्थ जिन्हें देखकर रहनेकी इच्छा करता हूं, हम लोगोंके पहले देखे हुए उन पेढ़ी और मत्स्यवंशीय लोगोंके बीच केवल तु. म्हारा चक्र श्रीकृष्णके कृपासे अवशिष्ट है। आप मुझे शुभगेत्रसे देखो, तुम्हारा दर्शन अत्यन्त दुर्लभ है; राजा अत्यन्त तीव्र अविसह्य तपस्या आरम्भ करेंगे।

युधाश्रति महाबाहु सहदेव इतनी बात सुनके आंखोंमें आंसू भरके युधिष्ठिरसे बोले, हे भरतर्षभ! मैं माताको छोड़के न जा सकूंगा, आप शीघ्र जाइये। हे विभु! मैं भी तपस्या करते हुए तपोबलसे इस स्थानमें शरीर सुखा-ऊंगा और राजा धृतराष्ट्र कुन्ती तथा गान्धारी माताकी चरणसेवामें अनुरक्त रहूंगा।

तिसके अनन्तर कुन्ती महाभुज सहदेवको गोदीमें लेकर बोली, हे पुत्र! तुम मेरे बच-नको प्रतिपालन करके जाओ। हे पुत्रगण! तुम लोगोंका आगमन सफल तथा शुभ होवे और तुम लोग रोग रहित रहो; हम लोगोंके तपस्याके विषयमें यह बाधा होती है, कि यदि तुम लोग इस स्थानमें निवास करोगे, तो तुम्हारे स्नेहपाशमें बद्ध होकर तपस्यासे भ्रष्ट होना होगा। हे पुत्र! इसलिये तुम जाओ, हम लोगोंकी तपस्यामें अब थोड़ा ही शेष है।

हे राजेन्द्र! कुन्तीके इस ही प्रकार बहुतसे वचन सुनके राजा युधिष्ठिर और सहदेवका मन स्तम्भित हुआ, वे कुरुपुङ्गवगण निज माता कुन्तीके द्वारा गमन करनेकी आज्ञा पाके कुरुराज धृत राष्ट्रको प्रणाम करके आमन्त्रण करने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे राजन! आप मङ्गल-दाता हैं, जब आपके द्वारा हम लोग अनुज्ञात और अभिनन्दित हुए, तब निर्व्विघ्नताके सहित राज्यमें जायंगे? राजर्षि धृतराष्ट्रने महात्मा धर्म्मराजके ऐसा पूछनेपर उन्हें अभिनन्दित करते हुए जानेके लिये अनुमति दी। अनन्तर बलवानोंमें श्रेष्ठ भीमसेन, अर्ज्जुन तथा यमज नकुल सहदेवने धीरज देके आश्वासित करते हुए आलिङ्गन तथा अभिनन्दन करके जानेके निमित्त आज्ञा की। पाण्डव लोग गान्धारीसे आज्ञा पाके तथा कुन्ती माताके द्वारा मस्तक सूंघे जानेपर उन्हें प्रणाम करते हुए निवारित बछड़ोंकी भांति प्रदक्षिणापूर्व्वक बार बार देखते हुए प्रदक्षिणा करने लगे।

द्रौपदी प्रभृति कुरु स्त्रियें न्यायपूर्व्वक श्वशुर धृतराष्ट्रको प्रणामादि करके सास गान्धारी तथा कुन्तीसे अनुज्ञात होके आलिङ्गन पूर्व्वक अभि-नन्दित और कर्त्तव्य विषयोंकी आज्ञा पाके अपने अपने स्वामीके सङ्ग चलीं। उस समय 'वाहनोंको जोतो' इस प्रकार सूतोंका चिल्लाना, ऊंटोंका बलबलाना और घोड़ोंका हिनहि-नाना शब्द प्रकट हुआ। तिसके अनन्तर राजा युधिष्ठिर बन्धुजनों और सैनिक लोगोंके सहित फिर हस्तिना नगरमें आये।

३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पाण्डवोंको धृत-राष्ट्रके निकटसे हस्तिनापुर जानेपर दो वर्षके अनन्तर एकबार देवर्षि नारद मुनि इच्छानु-सार युधिष्ठिरके निकट आये। नारद मुनि कुरुराज महाबाहु युधिष्ठिरके द्वारा पूजित होकर बैठे, तब वाग्मिवर धर्म्मराजने उनसे विश्वस्तभावसे कहा; हे विप्रवर! मैंने आपको बहुत समयसे यहां आते नहीं देखा, इस समय आप कुशल हैं न? हे द्विजवर! आपने कितने देश देखे हैं? कहिये इस समय मुझे तुम्हारा कौनसा मङ्गल कार्य्य करना होगा? आप हम लोगोंकी परम गति हैं।

नारद मुनि बोले, हे नरनाथ! मैं गङ्गाप्र-भृति तीर्थोंका दर्शन करके बहुत समयतक तुमसे भेंट न होनेके कारण तपोवनसे आता हूं।

युधिष्ठिर बोले, आज गङ्गातीरनिवासी पुरुषोंने मुझसे परम तपोनिष्ठ महात्मा धृतराष्ट्रका सम्वाद कहा है; परन्तु क्या आपने वहां कुरुराज, गान्धारी, पृथा तथा सूतपुत्र सञ्जयको कुशली देखा है? हे भगवन्! यदि आपने उस मेरे पिता पृथ्वीपति धृतराष्ट्रको देखा है, तो वह इस समय कैसी अवस्थामें निवास करते हैं? इस विषयको मैं सुननेकी इच्छा करता हूं।

नारद मुनि बोले, हे महाराज! मैंने उस तपोवनमें जो देखा और सुना है, उसे यथार्थ रीतिसे आपके समीप कहता हूं, आप स्थिर होकर सुनिये। हे कुरुनन्दन! आप लोगोंके बनवाससे निवृत्त होनेपर आपके पिता धृतराष्ट्र गान्धारी, कुन्ती और सूत सञ्जयने अग्निहोत्रके सहित कुरुक्षेत्रसे गङ्गाद्वारमें गमन किया। तब आपके तपस्वी पिताने मौनावलम्बन करके मुखमें बीटा अर्थात् गुलिका स्थापन करके वायुभक्षी होकर तीव्र तपस्या आरम्भ की थी। वह महातपस्वी इस ही प्रकार उत्तम कठोर तपस्या करते हुए बनके बीच मुनियोंसे पूजित हुए और छः महीनेके बीच उनकी त्वचा तथा हड्डी मात्र शेष रह गई। हे भारत! गान्धारी जलाहार, कुन्ती एक महीनेतक उपवास और सञ्जय छठवें भागमें भोजन करके प्राण धारण करने लगे। हे प्रभु! वहीं याजकगण उस नरनाथके सामने विधानपूर्व्वक अग्निमें आहुति देने लगे। अनन्तर राजाको आश्रम छोड़के बनकी ओर जाते देखकर गान्धारी और कुन्ती देवी तथा सञ्जय उनके अनुगामी हुए। हे महाराज! सञ्जय नरपतिको सम तथा विषम स्थानमें ले जानेके लिये नायक और अनिन्दिता पृथा गान्धारीकी नेत्रस्वरूप हुई।

तिसके अनन्तर नृपसत्तम धृतराष्ट्रने गङ्गाके किसी तटपर जाकर आश्रमकी ओर मुह करके स्नान किया। अन्तमें महावायु प्रकट होनेसे उस बनमें दावाग्नि उत्पन्न हुई, उस दावाग्निने उस बनको चारों ओरसे घेरकर सब जला दिया; हरिनोंके झुण्ड और सांपोंके जलने तथा बाराहोंके जलमें घुसनेपर उस बनके नष्ट होनेसे जब अत्यन्त व्यसन उपस्थित हुआ, तब राजा उपवाससे मन्दप्राण तथा चेष्टाहीन होगये और तुम्हारी माता कुन्ती तथा गान्धारी उनके निकट जानेमें असमर्थ हुईं। अनन्तर राजाने अग्निको निकट आते देखकर विजयिप्रवर सूतपुत्र सञ्जयसे यह बचन कहा, हे सञ्जय! जिस स्थानमें अग्नि है, तुम वहां जाओ, यह अग्नि तुम्हें कदापि भस्म न करेगी। हम लोगोंको इस ही स्थानमें अग्निसे गृहीत होनेसे परम गति प्राप्त होगी। वाग्मिवर सञ्जय व्याकुल होके उनसे बोले, हे महाराज! इस वृथा अग्निमें आपकी मृत्यु होनेसे वह इष्टकर न होगी, परन्तु अग्निसे बचनेका उपाय भी नहीं देखता हूं; इसके अनन्तर जो कुछ करना हो, आप उसके लिये आज्ञा करिये।

राजा धृतराष्ट्र सञ्जयका ऐसा बचन सुनके फिर उनसे बोले, हे सञ्जय! जब हम लोग गृहसे बाहिर हुए हैं, तब यह मृत्यु हमारे लिये अनिष्टकर न होगी। जल, वायु, अग्नि और योगबलसे प्राणवायुका आकर्षण,—ये सब मृत्युके विषय तपस्वियोंके लिये श्रेष्ठ हैं; इसलिये तुम देरी मत करो, शीघ्र जाओ। राजा ऐसा कहके योगयुक्त चित्तसे गान्धारी और कुन्तीके सहित पूर्व्व मुख होकर बैठे।

मेधावी सञ्जयने धृतराष्ट्रको योगमें चित्त लगाते देखकर उनकी प्रदक्षिणा करके कहा, हे प्रभु! आप आत्माको युक्त करिये। ऋषिपुत्र मनीषी राजा धृतराष्ट्रने सञ्जयका ऐसा बचन सुनके इन्द्रियोंको पूरी रीतिसे रुद्ध करके काष्ठकी भांति निवास किया। अनन्तर महाभागा गान्धारी, तुम्हारी माता, कुन्ती और राजा धृतराष्ट्र दावाग्निके सहित संयुक्त हुए; महामन्त्री सञ्जय उस दावानलसे छूटे। मैंने

देखा, कि तेजस्वी सञ्जयने गङ्गाके तटपर तपस्वि-योंसे घिरके उन्हें आमन्त्रण करके सब वृत्तान्त सुनाकर हिमालय पर्वतपर गमन किया। हे विशाम्पति! महामना कुरुराज, गान्धारी और कुन्तीकी इसही प्रकार मृत्यु हुई है। हे भारत! मैंने इच्छानुसार घूमते हुए राजा धृतराष्ट्र, गान्धारी और कुन्ती देवीका शरीर देखा।

तिसके अनन्तर तपस्वी ऋषियोंने आके राजाकी वैसी निष्ठा सुनके शोक न किया। हे पुरुषसत्तम! मैंने वहां यह सब वृत्तान्त सुना। हे पाण्डव! राजा, गान्धारीदेवी और कुन्ती,— ये लोग जिस प्रकार जले हैं; वह तुम्हारे शोकका विषय नहीं है, क्यों कि तुम्हारी माता और गान्धारीको अग्नि प्राप्त हुई है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! महात्मा पाण्डव लोग धृतराष्ट्रकी मृत्युका समाचार सुनके अत्यन्त शोकार्त्त हुए, राजाकी गति सुनके अन्तःपुर और पुरवासियोंके बीच महान् आर्त्तनाद प्रकट हुआ। इधर युधिष्ठिर भीमसेन प्रभृति भाइयोंके सहित अत्यन्त दुःखसे 'ओहो धिक्!' ऐसा वचन कहके दोनों भुजाओंको उठाकर ऊंचे स्वरसे रोदन करने लगे। हे महाराज! पृथाकी मृत्युका सम्वाद सुनके रनिवासमें महान् रोदनध्वनि प्रकट हुई; हत-पुत्र बूढ़े नरनाथ धृतराष्ट्र और तपस्विनी गान्धारीका उस प्रकार जलना सुनके सब कोई शोक करने लगे। हे भारत! मुहूर्त्त भरके बीच वह शब्द निवृत्त हुआ; धर्म्मराज धैर्य्यके सहारे आंसू रोकके कहने लगे।

३७ अध्याय समाप्त।

---

*युधिष्ठिर बोले, हे ब्रह्मन्! हम सब बन्धु-*बान्धवोंके रहते उस उग्र तपस्यामें रत महात्मा धृतराष्ट्रकी अनाथकी भांति मृत्यु हुई। जब वह विचित्रवीर्य्य पुत्र दावानलमें जले हैं, तब मैंने निश्चय जाना, कि पुरुषकी गति दुर्विज्ञेय है। जिसके बाहुबलशाली एक सौ पुत्र हुए थे, वेही अयुत हाथियोंके सदृश बलशाली राजा धृतराष्ट्र दावानलमें भस्म हुए। जिनके समीप मुख्य मुख्य स्त्रियें तालका वेना लेकर सञ्चालन करती थीं, इस समय दावाग्निसे परिगृहीत उस पृथ्वीपति धृतराष्ट्रको गृद्धगण वीजन करने लगे। हाय! जो उत्तम, शय्यापर सोके प्रतिदिन भोरको सूत और मागधोंके द्वारा जागते थे, आज वेही राजा मुझ पापात्माके कार्य्य दोषसे पृथ्वीपर सोये। मैं उस पतिव्रतमें रत रहनेवाली पतिलोकमें गई हुई हतपुत्रा यशस्विनी गान्धारीके निमित्त शोक नहीं करता; किन्तु जिसने समृद्धिशाली पुत्रोंके प्रदीप्त ऐश्वर्य्यको परित्याग करके बनवासकी अभिलाष की थी, उस पृथाके निमित्त ही मुझे अत्यन्त शोक उपस्थित होता है। हम लोगोंके राज्यबल, पराक्रम और क्षत्रधर्म्मको धिक्कार है और हम लोग जो मरके फिर जीवित हुए, उसे भी धिक्कार है। हे द्विजवरोत्तम! कालकी गति, अत्यन्त सूक्ष्म है, क्यों कि राजा धृतराष्ट्र, राज्यकी परित्याग करके बनवासके अभिलाषी हुए थे। पृथा युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुनकी जननी होकर अनाथाकी भांति किस निमित्त जली! इसकी चिन्ता करके मैं विमोहित होता हूं; सव्यसाचीने खाण्डव बनमें अनर्थक अग्निको तृप्त किया था, क्यों कि उपकारको स्वीकार न करनेसे मुझे बोध होता है, कि अग्नि कृतघ्न है। हे भगवन्! जो बनके बीच भिक्षार्थी ब्राह्मणके छलसे निकट जाके सव्यसाचीकी माता पृथाको जलाया है, उस अग्नि भगवान और पार्थकी सत्यसन्धताको धिक्कार है; क्यों कि यह सबसे बढ़के मुझे कष्टकर बोध होता है। राजर्षि तपस्वी पृथ्वीनाथ कुरुपतिको जो अग्निसंयोग हुआ, वह वृथा है, उस महावनमें उनके मन्त्रयुक्त अग्निके विद्यमान रहते ऐसी मृत्यु क्यों हुई? मुझे बोध

होता है, कि पिताका वैसे अग्निके सहित संयोग होनेसे ही शिष्टा लाभ हुई है और वह अत्यन्त दुबली शिराओंसे व्याप्त पृथा महाभयसे कांपती हा तात धर्म्मराज ! ऐसा कहके रोती हुई तथा 'हे भीम ! भयसे रक्षा करो' ऐसा कहके अवसन्न होकर दावाग्निके द्वारा चारों ओरसे व्याप्त हुई है ; उसके सब पुत्रोंसे अधिक प्रिय वीरश्रेष्ठ माद्रीपुत्र सहदेव उसे अग्निसे बचा न सके ।

पाचों पाण्डव ऐसी बात सुनके सब कोई परस्परको आलिङ्गन करते हुए प्रलयकालके प्राणियोंकी भांति रोदन करने लगे । उन पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंके रोदन करते रहनेपर उनके रोनेका शब्द मन्दिरकी परिसर प्रदेशमें परिव्याप्त होनेसे मानो गगन मण्डलके सहित उस प्रासादके स्थान रोदन करने लगे ।

३८ अध्याय समाप्त ।

——

नारद मुनि बोले, हे भारत ! मैंने उस बनमें जैसा सुना है, वही तुमसे कहूंगा. उसमें अन्यथा न होगी । मैंने सुना कि, वह विचित्रवीर्य्यपुत्र नरनाथ धृतराष्ट्र वृथाग्निमें नहीं जले । हे भरतसत्तम ! मैंने ऐसा सुना है, कि उस धीमान् नरनाथने वायु भक्षणपूर्व्वक बनमें प्रवेश करते हुए यज्ञ कराके अग्निको परित्याग किया ; अनन्तर याजकवृन्द निर्ज्जन बनके बीच उनकी उस अग्निको विसर्ज्जन करके अभिलषित स्थानमें गये । तपस्वियोंने इस प्रकार कहा, कि उस समय उस अग्निने बनके बीच अत्यन्त बर्ढ़ित होकर उस जङ्गलको प्रदीप्त किया । हे भरतप्रवर ! उसके अनन्तर राजा गाङ्गाजीके तटपर उस अग्निके सहित संयुक्त हुए । हे युधिष्ठिर ! गङ्गाजीके तटपर मैंने जिन मुनियोंका दर्शन किया, उन्होंने मुझसे यह सब वृत्तान्त कहा है । हे पृथ्वीनाथ ! जब कि राजा इस प्रकार निज अग्निके सहित संयुक्त हुए हैं, तब उन्होंने निश्चय ही परम गति प्राप्त की है, उनके लिये आप शोक न करिये । हे जननाथ ! आपकी माताने भी गुरुसेवासे महती सिद्धि पाई है, इसमें कुछ सन्देह नहीं है । हे राजेन्द्र ! इस समय आप भाइयोंके सहित उन लोगोंकी विधिपूर्व्वक जल क्रिया पूरी करिये ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे नरश्रेष्ठ ! उसके अनन्तर वह पाण्डवधुरन्धर पृथ्वीपति युधिष्ठिर भाइयों और स्त्रियोंके सहित नगरसे, बाहिर हुए ; पुरवासियों और जनपदवासियोंने राजभक्ति दिखाते हुए एकवस्त्रसे संवृत्त होकर उन लोगोंको घेरकर गङ्गाकी ओर गमन किया । तिसके बाद उन नरपुङ्गवोंने गङ्गाजलमें स्नान कर युयुत्सुको आगे करके महात्मा धृतराष्ट्रको जल प्रदान किया, फिर गान्धारी और पृथाके नाम गोत्रका उच्चारण करके विधिपूर्व्वक शौचकार्य्य निवर्त्तित करते हुए नगरके बाहिरी भागमें निवास किया । पुरुषश्रेष्ठ युधिष्ठिर जहां धृतराष्ट्र जले थे, उस गङ्गाद्वारमें विधिज्ञ आप्तकारी मनुष्योंको भेजा ; पृथ्वीनाथ युधिष्ठिरने उन पुरुषोंको गङ्गाद्वारमें ही उनके कर्त्तव्य कार्य्योंको करनेके लिये आज्ञा करी ।

अनन्तर पाण्डुपुत्र नरनाथ युधिष्ठिरने द्वादशाहमें शौचादिसे निवृत्त होकर उन लोगोंका विधिविहित दक्षिणायुक्त श्राद्ध दान किया । उन्होंने धृतराष्ट्रके उद्देश्यसे सोना, रूपा, गऊ और महामूल्यवान शय्या प्रदान की, फिर पृथक् रीतिसे गान्धारी और पृथाके नामसे सब प्रकारके उत्तम वस्त्र दान किये ? उस समय शय्या भोजन पात्र, यान, मणि, रत्न, धन प्रभृति जो जो जिसे इच्छा हुई, उसने वही पाई, इतनाही नहीं बरन राजा युधिष्ठिरने गान्धारी और पृथा माताके उद्देश्यसे यान, ओढ़नेके वस्त्र, विविध भोग्यवस्तु तथा अलङ्कारयुक्त दासी प्रभृति प्रदान की ।

फिर उन्होंने पिता-माताके उद्देश्यसे बहुतसी श्राद्धीय वस्तु दान करके हस्तिनानगरमें प्रवेश किया । राजाकी आज्ञासे जो लोग धृत-

राष्ट्रादिके संस्कारके निमित्त गये थे, वे उनकी हड्डियोंको एकत्रित करके फिर लौट आये, तब युधिष्ठिरने विविध माला और सुगन्धिसे विधिपूर्व्वक पूजा करते हुए उसे गङ्गाके सहित संयुक्त करनेके लिये कहा।

हे राजन्! परमर्षि नारदने धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरको आश्वासित करके अभिलषित स्थानमें गमन किया। संग्राममें हतपुत्र, ज्ञाति, सम्बन्धी, मित्र, भ्राता और स्वजनोंको सदा धन देनेवाले धीमान् धृतराष्ट्रका इस ही प्रकार नगरमें पन्द्रह वर्ष और वनवासमें तीन वर्ष बीता था। उस समय युधिष्ठिर ज्ञाति-बान्धवोंके मरनेसे राज्य पाके भी प्रसन्नचित्त न हुए। पुरुष समाहित होकर आश्रमवासिक पर्व्वमें ब्राह्मणोंको गन्धमालासे पूजा करके हविष्य भोजन करावे।

आश्रमवासिक पर्व्व समाप्त।

महाभारत।

मौषल पर्व्व।

नारायण, नरोत्तम, नर और सरस्वती देवीको प्रणाम करके जय कीर्त्तन करे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कौरवनन्दन युधिष्ठिरने राज्य पानेके अनन्तर छत्तीसवें वर्षके प्रारम्भमें ही अनेक प्रकारका अशकुन देखा। कङ्कड़से युक्त रूखा वायु शब्दके सहित बहने लगा, पक्षी-वृन्द अपसव्य मण्डलमें भ्रमण करने लगे। सब महानदियें सूख गईं और सब दिशा कुहासेसे परिपूरित हुईं, अङ्गार वर्षा उल्का समूह आकाशमण्डलसे पृथ्वीपर गिरने लगे, हे महाराज! सूर्य्य किरण रहित हुए और उनका मण्डल धूलि धूसरित तथा कबन्धोंसे परिपूर्ण दिखाई देने लगा, चन्द्र और सूर्य्य मण्डलमें श्याम, अरुण और भस्म सदृश त्रिवर्ग रुच परिवेश दीखने लगा। हे महाराज! हृदयको व्याकुल करनेवाले तथा भयसूचक इस ही प्रकार और भी अनेक उत्पात दीखनेपर किसी दिन कुरुराज युधिष्ठिरने सुना, कि वृष्णि वंशीय लोग सब कोई मूषलयुद्धमें बिनष्ट हुए हैं और राम तथा कृष्णने देह त्याग किया है। पाण्डुनन्दन इतनी बात सुनते ही भाइयोंको बुलाकर बोले;—'ब्रह्मशापसे वृष्णिवंशीय लोग परस्पर युद्ध करके सब कोई बिनष्ट हुए हैं, इसलिये हम लोगोंको इस समय क्या करना चाहिये?' उसे सुनके पाण्डुकेपुत्र अत्यन्त व्यथित हुए; परन्तु समुद्र सूखनेकी भांति बलदेव और श्रीकृष्णके मरनेको असम्भव समझकेपहले किसीने बिश्वास नहीं किया। अनन्तर मौषलयुद्ध विषयक सब सम्वाद सुनके दुःख तथा शोकसे अभिभूत विषण्ण तथा हत-सङ्कल्प होकर बैठ गये।

जनमेजय बोले, हे भगवन्! अन्धक, वृष्णि और महारथ भोजवंशीगण श्रीकृष्णके सामने किस प्रकार बिनष्ट हुए? आप यह सब मेरे समीप प्रकाश करके कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, युधिष्ठिरको राज्य मिलनेपर छत्तीसवें वर्षमें वृष्णिवंशियोंके बीच बहुत ही दुर्नीति उपस्थित होनेसे वे लोग परकामें लगे हुए मूषल-कुणके द्वारा परस्परको मारके बिनष्ट हुए हैं।

जनमेजय बोले, हे द्विजश्रेष्ठ! वृष्णि, अन्धक और भोजवंशीय लोगोंका किसके शापसे इस प्रकार नाश हुआ? आप वह सब मेरे निकट विस्तारपूर्व्वक कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, एक समय सारण प्रभृति वीरगण बिदा मित्र, कण्व और तपोधन नारद मुनिको द्वारका नगरीमें आया हुआ देखकर साम्बको स्त्रीकी भांति सज्जित करके मानो काल प्रेरित होके ही ऋषियोंके निकट जाकर बोले,—"हे ब्रह्मर्षिगण! पुत्राभिलाषी अमित तेजस्वी यह बभ्रकी भार्य्या क्या प्रसव करेगी, उसे आप लोग उत्तम रीतिसे गिनके देखिये।" हे महाराज! महर्षि वृन्द ऐसा सुनके वृष्णिवंशियोंके वञ्चना वाक्यसे अत्यन्त ही रुष्ट हुए और जो प्रत्युत्तर दिया, उसे सुनिये। उन लोगोंने

कहा, यह श्रीकृष्णका पुत्र शाम्ब वृष्णि और अन्धकोंके विनाशके निमित्त एक घोर आयस मुषल प्रसव करेगा, तुम लोग अत्यन्त दुर्वृत्त, गर्व्वित और नृशंस हुए हो; इसलिये तुम लोगोंके दोषसे ही राम कृष्णको छोड़के सारा यदुकुल विनष्ट होगा। श्रीमान् हलधर समुद्रमें प्रवेश करके शरीर छोड़ेंगे और जरा नाम कोई कैवर्त्त पृथ्वीपर सोये हुए महात्मा कृष्णको विद्ध करेगा। हे नरनाथ! दुःस्वभाव यादवोंके द्वारा प्रतारित वे मुनिगण क्रोधसे लाल नेत्र करके परस्पर एक दूसरेको अवलोकन करते हुए इतनी बात कहके, पीछे केशव क्रुद्ध होंगे, इस भयसे मनके बीच उनका ध्यान करने लगे। अनागत विषयोंके जाननेवाले बुद्धिमान् मधुसूदन भी यह सब वृत्तान्त सुनके वृष्णिवंशियोंसे बोले, कि मुनियोंने जैसा कहा है, वैसाही होगा। अनन्तर उस जगत्प्रभु हृषिकेशने जो कालवशसे हुआ है, उसे अन्यथा करनेमें अनभिलाषी होकर पुरके बीच प्रवेश कियी। दूसरे दिन सवेरे शाम्बने उस मूषलको प्रसव किया, जिसके द्वारा वृष्णि और अंधकवंशीय पुरुषोंका नाश हुआ। हे महाराज! तिसके अनन्तर वृष्णि और अन्धकोंके विनाशका मूल, मुनिशापके प्रभावसे शाम्बके द्वारा प्रसव हुए उस यमदूत-सदृश महत् मूषलका विषय राजा उग्रसेनके समीप सुनानेपर उन्होंने दुःखी होकर उसका मिहीन चूर्ण कराया और यदुवंशियोंने वह सब चूर्ण समुद्रमें फेंक दिया। तिसके अनन्तर उन लोगोंने महात्मा जनार्द्दन, राम, बभ्रु और आहुकके वचनानुसार नगरमें इस प्रकार ढिंढोरा दिलाया, कि आजसे नगरवासी वृष्णि और अन्धकवंशियोंके बीच कोई मद्यादि पीके मतवाला न होवे। यदि कोई पुरुष मद्य पीयेगा, तो हमलोग जाननेसे उसके भक्तोंके पीनेपर भी बांधवोंके सहित जीवित अवस्थामें ही उसे शूलीपर चढ़ावेंगे। द्वारकावासी लोगोंने अक्लिष्टकर्म्मा रामकी ऐसी आज्ञा सुनके राजभयसे "हमलोग अब मद्य न पीयेंगे"—इसही प्रकार नियम स्थापित किया।

१ अध्याय समाप्त।

——————

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अन्धक लोगोंके सहित वृष्णिवंशियोंके इस प्रकार सावधान होनेपर कालपुरुष सदा प्रतिदिन उन लोगोंके गृहोंमें घूमने लगा। किसी किसी गृहमें न दीखनेपर भी उस शिरमुंडे कराल वदन विकट दर्शन कालपुरुषको वार्ष्णेय लोगोंके सब गृहोंमें ही पर्य्यवेक्षण करते देखा गया। यादवलोगोंने उसे मारनेके लिये असंख्य बाण चलाये, परन्तु किसीसे उस सर्व्वभूत क्षयकारीको विद्ध करनेमें समर्थ न हुए। उस समय प्रतिदिन वृष्णि और अन्धकवंशियोंके विनाशसूचक प्रबलतर निदारुण महावायु प्रवाहित होना आरम्भ हुआ। सब रथ्या मूषिक और मृतपात्रोंसे परिपूर्ण होगये और यदुवंशियोंके सोनेपर चूहोंने उनके नखों तथा केशोंको काटना आरम्भ कियी। वार्ष्णेय-लोगोंके गृहमें स्थित सारिकासमूह चीची, कुची प्रभृति बोली बोलने लगीं और वह शब्द दिन-रातके बीच एक बार भी बन्द न हुआ। हे भारत! उस समय सारसवृन्द उलुओं और बकरे सियारोंके शब्दका अनुकरण करने लगे। पाण्डुरवर्ण और लालचरणवाले कबूतर आदि पक्षिवृन्द मानो कालसे प्रेरित होके ही वृष्णि और अन्धकगणोंके प्रति गृहोंमें विचरने लगे; गो-योनिमें गर्द्दभ, अश्वतरीसे करभ, शुनीसे बिड़ाल और नकुलीके गर्भसे चूहे उत्पन्न होने लगे। उस समय वार्ष्णेयगण पापकार्य्य करके भी लज्जा नहीं करते थे और देवता, ब्राह्मण तथा पितरोंका द्वेष करना आरम्भ किया। रामकृष्णके अतिरिक्त प्रायः सब यदुवंशी लोग गुरुजनोंकी अवमानना करनेमें प्रवृत्त हुए, पत्नी पतिकी और पति पत्नीकी वञ्चना करने लगा।

अग्नि लाल, काली और मञ्जिष्ठावर्णा शिखाके सहित वामावर्त्तमें प्रज्वलित होने लगी ; उस पुरीमें उदय और अस्तके समय सूर्य्य बार बार कबन्ध पुरुषोंसे घिरा हुआ दिखाई देने लगा। हे भारत ! सिद्ध महानस तथा उत्तम संस्कार-युक्त अन्नादि भोजनकी वस्तुओंमें सहस्रों कृमि दिखाई देने लगे। वे महात्मा लोग जिस समय पुण्याहवाचन तथा जपादिमें रत होते थे, उस समय बोध होता था, कि मानो कोई उस स्थानमें दौड़ रहा है, किन्तु किसीको देख न सकते थे। यादवलोग परस्परके नक्षत्रको ग्रहोंसे पीड़ित देखने लगे, परन्तु किसीने भी अपने नक्षत्रको न देखा ; वृष्णि और अन्धकवंशियोंके गृहमें पाञ्चजन्य शङ्खके शब्दके समयमें दारुण स्वरसे गधोंका शब्द होने लगा। उस समय हृषीकेशने त्रयोदशीमें अमावस्या अर्थात् कृष्णपक्षकी त्रयोदश दिवसात्मकादि रूप काल विपर्य्यय देखकर यादवोंसे कहा ;—यह देखो, भारत युद्धके समय जिस प्रकार हुआ था, उस ही भांति हम लोगोंके बिनाशके निमित्त ही आज त्रयोदशीमें ही पौर्णमासीका कार्य्य सम्पादित होता है। केशिनिशूदन जनार्द्दन इतनी बात कहके ही क्षणभर सोचके निरूपित कालका समागम समझके फिर बोले,—'हतबान्धवा गान्धारीने पुत्रशोकसे सन्तापित होके आर्त्तभावसे जो कहा था, वही छत्तीसवां वर्ष उपस्थित हुआ है।' इसके अतिरिक्त पहले सब सेनाकी व्यूह रचना होनेपर महाराज युधिष्ठिरने निदारुण उत्पातोंको देखकर जो आसङ्का की थी, इस समय भी वही उपस्थित हुआ है।

श्रीकृष्णने इतनी बात कहके ही उस दैवकृत दुर्निमित्तको सत्य करनेकी अभिलाषसे ही उस समय तीर्थयात्राके लिये आज्ञा की। तब पुरुषवृन्द नगरके बीच इस प्रकार ढिंढोरा देने लगे, कि हे पुरुषपुङ्गवगण ! केशवकी आज्ञानुसार आप सब लोगोंको समुद्रकी तीर्थ-यात्रा करनी होगी।

२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, काली स्त्री रात्रिके समय पाण्डुर दांत निकालके हंसते हंसते यादवोंके गृहमें प्रवेश करके तथा निद्रावस्थामें यादवोंकी स्त्रियोंके मङ्गल सूत्रादि हरती हुई द्वारकानगरमें सर्व्वत्र घूमने लगी। वृष्णि और अन्धकवंशीय लोग ऐसा देखने लगे, कि गृद्धगण उनके गृहवास्तुके बीच तथा अग्निहोत्रके गृहोंमें उन्हें भक्षण करते हैं ; भयानक निशाचरोंके द्वारा उनके अलङ्कार, छत्र, ध्वजा और कवच अपहृत होते हैं। पहले अग्निने जो अयोमय वज्रनाभ चक्र प्रदान किया था, वार्ष्णेय लोगोंके सामनेही वह आकाशमें चला गया। दारुकके सम्मुखमें ही उसके मनोजव घोड़ोंने उस जुते हुए आदित्य वर्ण दिव्य रथको हरण करते हुए समुद्रके बीच गमन किया। राम और जनार्द्दन ताल तथा सुवर्णनाम जिन दो महाध्वजाओंकी सदा पूजा करते थे, आकाशसे उन दोनोंको किसीने हर लिया और अप्सरावृन्द दिन रात ऐसा कहने लगीं। कि तुम लोग तीर्थयात्रा करो। अनन्तर वृष्णि और अन्धकवंशीय महारथ मनुजपुङ्गवगण जिगमिषु होकर अन्तःपुरचारिणी स्त्रियोंके सहित तीर्थ-यात्रा करनेके लिये अभिलाषी हुए। उस समय उन लोगोंने अनेक प्रकारकी भक्ष्य, भोज्य और पीनेकी वस्तु तैयार करके बहुतसा मद्य और मांस मङ्गाया और उग्र पराक्रमी समुज्वल सैनिक पुरुषोंके सहित घोड़े, हाथी और यानोंमें चढ़के नगरसे बाहिर हुए। इस ही प्रकार वे सस्त्रीक यदुवंशी लोग बहुतसी पीने तथा खानेकी वस्तुओंके सहित प्रभास तीर्थमें जाकर इच्छानुसार गृहवासके अनुरूप सुखभोग करने लगे। उस समय मोक्ष विशारद उद्धवने उन

लोगोंको उस समुद्रके तटपर सन्निविष्ट देखके योगबलसे सब जानके उन वीरोंको आमन्त्रण करते हुए प्रस्थान किया। उस महात्माके हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए प्रस्थित होनेपर भी भगवान् कृष्णने उन्हें निवारण करनेकी नहीं की, क्यों कि वृष्णिवंशियोंके नष्ट होनेका विषय वह पहलेसे ही जानते थे। कालके वशमें हुए वृष्णि तथा अन्धकवंशीय महारथोंने इतना ही देखा, कि उद्धव निज तेजके सहारे पृथ्वीतल और आकाशको परिपूरित करते हुए जा रहे हैं।

इस ही प्रकार उद्धवके चले जानेपर उस प्रभासतीर्थमें उग्रवीर्य यादवोंके सैकड़ों तूर्य्य-शब्द तथा नट-नर्त्तकोंके नृत्य गीतादियुक्त महा पान आरम्भ हुआ। ब्राह्मणोंके निमित्त जो सब अन्न पकाया गया था, उन लोगोंने मदमत्त होके वह सब अन्न बानरोंको प्रदान किया। राम, कृतवर्म्मा, सात्यकि, गद और बभ्रु प्रभृति वीरगण कृष्णके सम्मुखमें ही मद्य पीने लगे, इतने ही समयमें सात्यकि मतवाला होकर सभाके बीचमें उपहास और अवमानना करते हुए कृतवर्म्मासे बोला, हे हार्द्दिक्य! कौन पुरुष क्षत्रियकुलमें जन्म लेकर मृतक सदृश सोते हुए लोगोंका बध किया करता है; तुमने जो कार्य्य किया है, यदुवंशी लोग उसे कदापि न सहेंगे। सात्यकिने जब ऐसा कहा, तब रथिश्रेष्ठ प्रद्युम्नने कृतवर्म्माकी अवज्ञा करते हुए सात्यकिके कहे हुए वचनकी बहुत ही प्रशंसा की। उसे सुनकर कृतवर्म्मा अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और बायां हाथ दिखाके बोला;—भुजा कटनेपर जब भूरिश्रवा रणमें योगयुक्त होकर बैठा था, तब तुमने वीर होकर किस प्रकार नृशंसकी भांति बध करते हुए उसे रणके बीच गिराया था? उसकी इतनी बात सुनके केशीनिसूदन केशव बहुतही क्रुद्ध हुए और क्रोधपूर्व्वक तिरछे नेत्रसे उसे देखने लगे। उस समय सात्यकिने सत्राजितकी स्यामन्तक मणि सम्बन्धीय सब सम्वाद मधुसूदनको सुनाया; उसे सुनके सत्यभामा क्रुद्ध होकर जनार्द्दन केशवके क्रोधको उद्दीपित करनेके निमित्त रोती हुई उनकी गोदीमें गिरी। अनन्तर सात्यकि क्रोधपूर्व्वक उठके बोला। हे सुमध्यमे! मैं सत्यके सहारे शपथ करके कहता हूं, कि धृष्टद्युम्न, शिखण्डी और द्रौपदीके पांचो पुत्रोंने जिस पदवीमें गमन किया है, मैं भी वही पदवीका अनुसरण करता हूं। जिस पापीने द्रोणपुत्रकी सहायतासे सौप्तिकमें वीरोंका बिनाश किया था, आज उस दुरात्मा कृतवर्म्माका यश तथा आयुकाल शेष हुआ है। सात्यकी इतनी बात कहके ही क्रोधपूर्व्वक दौड़ा और केशवके सामने ही तलवारसे कृतवर्म्माका सिर काटा और उसके बान्धवोंका बध करते हुए चारों ओर घूमने लगा; कृष्ण उसे निवारण करनेके लिये आगे बढ़े। महाराज! इतने ही समयमें भोज और अन्धकवंशियोंने कालप्रेरितकी भांति एकत्रित होकर शिनिनन्दनको घेर लिया। परन्तु महातेजस्वी कृष्ण उन लोगोंको क्रोधपूर्व्वक शीघ्रतासे आते हुए देखकर भी क्रुद्ध न हुए; क्यों कि वह काल विपर्य्ययके विषय पहलेसे ही जानते थे। अनन्तर वे मदमत्त वीरगण मानो कालप्रेरित होके ही जूठे भाजनोंसे सात्यकिको मारने लगे। उस समय रुक्मिणीपुत्र शैनेयको पीड़ित देखके उसकी रक्षा करनेके निमित्त क्रोधपूर्व्वक दौड़के भोजगणोंके सङ्ग और सात्यकि अन्धक वंशियोंके सङ्ग युद्धमें प्रवृत्त हुए। बाहुबलशाली वे दोनों वीर बहुत युद्ध करके भी शत्रुओंकी बहुतायतके कारण कृष्णके सामने ही मारे गये। यदुनन्दन कृष्णने पुत्र और शिनिनन्दनको मरा हुआ देखकर क्रोधपूर्व्वक एक मुट्ठी एरका (पटेर) ग्रहण किया वह वज्रसदृश अयोमय मूषल होगया। अनन्तर जिसे सामने पाया, उस मूषलसे ही उन सबका नाश कर डाला। उसे देखकर कालप्रेरित अन्धक भोज, शैनेय और

वृष्णि और अन्धकगण उसही मूषलभूत एरका (पटेर) लेकर परस्परमें एक दूसरेका नाश करने लगे। हे विभु महाराज! उस समय उन लोगोंके बीच जिस किसीने कुपित होकर एक भी एरका (पटेर) ग्रहण किया। ब्रह्मशापसे वही वज्रकी भांति सारवान हुआ तथा समस्त तृण भी मूषल होगये। हे महाराज! वे लोग जो सब तृण चलाने लगे, वे सब भी वज्रकी भांति सारवान मूषल होकर अधानई लोगोंका वध करते हुए दीख पड़े। हे भारत! वे लोग इस प्रकार मतवारे हुए थे, कि परस्पर युद्धमें प्रवृत्त होकर पिता पुत्रको और पुत्र पिताको मारके गिराने लगे। हे महाराज! जैसे पतङ्ग अग्निमें जा पड़ते हैं, वैसे ही वे कुक्कुर और अन्धकवंशीय लोग युद्धमें गिरने लगे; तथापि किसीको भागनेकी इच्छा न हुई; महाबाहु मधुसूदन कालके उलट फेरके विषयको जान सके थे, इसलिये उस युद्धमें जो मूषल देखा, वही ग्रहण करके उसहीसे सबका विनाश करने लगे।

शारङ्गधनुष, गदा और चक्रधारी दाशार्ह माधव शाम्ब, चारुदेष्ण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा गद प्रभृति वीरोंको मरे वा पृथ्वीमें पड़े हुए देखकर अत्यन्त क्रुद्ध होकर उस ही भांति बचे हुए लोगोंका नाश करते हुए यदुकुलको निःशेषप्राय किया; तब परपुरविजयी महातेजस्वी बभ्रु और दारुकने उनके समीप जाके जो कहा, उसे सुनिये! वे लोग बोले, हे भगवन्! आपने सबका विनाश करके यदुकुलको निःशेषप्राय किया है, इस समय जिस स्थानमें राम निवास करते हैं, वहां चलिये, हम भी आपके अनुगामी होते हैं।

३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर केशव, दारुक और बभ्रुने शीघ्र ही वहांसे चलकर रामके समीप जाके देखा कि वह अनन्तवीर्य्य निर्जन स्थानमें वृक्षके ऊपर बैठके ध्यान कर रहे हैं। माधवने बलदेवको वैसे भावसे उपस्थित देखकर दारुकसे कहा,—तुम शीघ्र जाके कौरवोंको विशेष करके अर्ज्जुनके समीप यादवोंका निदारुण मृत्यु-सम्वाद कहो और जिस प्रकार यदुवीरोंके ब्रह्मशापजनित मृत्युको समाचार सुनके अर्ज्जुन शीघ्र इस स्थानमें आवें, उस विषयमें यत्नवान् होना। इतनी बात सुनके दारुक विकलचित्तसे रथपर चढ़के कौरवोंके निकट गया।

दारुकके जानेपर केशव पर्श्ववारेकी ओर स्थित बभ्रुकी ओर देखकर बोले,—आप शीघ्र द्वारकानगरमें जाकर स्त्रियोंकी रक्षा करिये; जिससे डाकू लोग धनके लोभसे उनकी हिंसा न कर सकें। ज्ञातिवधसे दुःखी मदसे मत्तवारा बभ्रु अत्यन्त थके रहनेपर भी केशवकी ऐसी आज्ञा सुनके जाने लगा, इतने ही समयमें ब्रह्मशापवश किसी व्याधके एक कूटसंयुक्त दुरन्त मूषलने सहसा गिरके कृष्णके निकट ही उसका जीवन हर लिया। उग्रवीर्य्य माधव बभ्रुको मरा हुआ देखके अग्रज भ्राता रामसे बोले,—जबतक मैं स्त्रियोंको स्वजनोंके तत्त्वावधारणमें रखकर न लौटूं, तबतक आप इस ही स्थानमें मेरी प्रतीक्षा करिये। जनार्द्दन इतनी बात कहके ही द्वारकानगरमें प्रवेश करके पितासे बोले,—जबतक अर्ज्जुन न आवें, तबतक आप इन पुरनारियोंकी रक्षा करिये। राम वनके बीच मेरी प्रतीक्षा करते हैं, इसलिये आज मैं शीघ्र जाके उनके सङ्ग मिलूंगा, पहले असंख्य राजाओं और कौरवोंका मरना तथा इस समय यादवोंकी मृत्यु देखकर इस यादवरहित यदुनगरोमें रहनेकी मुझे अभिलाष नहीं होती है; इसलिये अब मैंने ऐसा निश्चय किया है, कि रामके सहित वनवासी होकर शेष समय व्यतीत करूंगा। श्रीकृष्ण इतनी बात कहके ही सिर झुका उनके दोनों चरणोंको छूके, शीघ्रताके

सहित वहांसे चले, तब पुरके बीच स्त्रियों और बालकोंके रोदनकी महान् ध्वनि प्रकट हुई। उसे सुन केशव लौटकर उन रोनेवाली स्त्रियोंसे बोले,—नरश्रेष्ठ अर्जुन इस द्वारकापुरीमें आके तुम लोगोंका दुःख दूर करेंगे। अनन्तर केशवने वनके बीच जाके देखा, कि राम निर्ज्जनमें एकले योगयुक्त होके बैठे हैं और उनके मुखसे एक श्वेतवर्ण महानाग बाहिर होता है। जिसके द्वारा समुद्र अपनेको महानुभाव कहके बोध करता था, देखते देखते वह सहस्रशीर्ष पर्व्वत भोगसदृश लोहितवदन नागने अपना मानुषी तन परित्याग करके समुद्रमें प्रवेश किया। हे महाराज! उस समय समुद्र, पवित्र नदियें, उग्र तेजस्वी महात्मा कर्कोटक, वासुकि, तक्षक, पृथुश्रवा, वरुण, कुञ्जर, मिश्री, शङ्ख, कुमुद, पुण्डरीक, धृतराष्ट्र, ह्राद, क्राथ, शितिकण्ठ, चक्रमन्द, अभिखण्ड, दुर्म्मुख और अम्बरीष प्रभृति श्रेष्ठ नागों तथा राजा वरुणने स्वयं उठके उन्हें ग्रहण करते हुए स्वागत प्रश्न तथा पाद्य, अर्घसे पूजा की।

उग्रवीर्य्य कृष्ण भ्राताको गमन करते देखकर दिव्य दृष्टिके सहारे कालकी सारी गतिका पर्य्यवेक्षण करके निर्ज्जन वनमें घूमते घूमते पृथ्वीमें बैठे। उस महानुभावने पहलेसे ही इन सब विषयोंको सोचा था, तथापि पहले गान्धारीके वचन तथा जूठा पायस लेप करनेके समयमें दुर्व्वासादि जो कहा था, उसे स्मरणकर कुरु, अन्धक और वृष्णिवंशियोंके मृत्युका विषय सोचके उस समयको संक्रमणका उपयुक्त काल समझके इन्द्रियोंको संयत किया। इसके अतिरिक्त वह सर्व्वार्थ तत्त्ववित देवश्रेष्ठ कृष्ण समर्थ होके भी महर्षि अत्रिके वचनको प्रतिपालन तथा तीनों लोकोंकी स्थिति और सन्देह निराकरणके हेतु नियमित मृत्युके अधीन होनेके अभिलाषी होकर वाक्मन प्रभृति इन्द्रिय निरोधरूपी महायोग अवलम्बन करके सोये।

इतने ही समयमें जरा नाम किसी उग्रमूर्त्ति व्याधने मृगयाभिलाषी होकर उस स्थानमें आके सोये हुए योगयुक्त माधवको मृग जानके शीघ्र ही बाणसे विद्ध करके पकड़नेकी इच्छासे निकट गया और समीप पहुंचके उस योगयुक्त पीताम्बरधारी चतुर्भुज पुरुषको देखकर अपनेको अपराध करनेवाला समझ शङ्कितचित्तसे उनका दोनों चरण धारण किया। उस समय महात्मा माधव उसे आश्वासित करके निज तेजके सहारे आकाश और पृथ्वीको परिपूरित करते हुए ऊपरको ओर गये। उनके स्वर्गके निकट पहुंचनेपर मुनिगण, इन्द्र, दोनों अश्विनीकुमार, रुद्र, आदित्य, वसु, विश्वदेवगण, अप्सराओंके सहित गन्धर्व्व और सिद्धगणोंने उठके उनकी अभ्यर्थना की। हे महाराज! तिसके अनन्तर वह उग्रवीर्य्य योगाचार्य्य सर्व्व भूतप्रभव अव्यय महात्मा भगवान् नारायण निज शोभाके सहारे सुरलोकको प्रकाशित करते हुए देवता, ऋषि और चारणोंके सहित मिलके तथा प्रणत हुए मुख्य सिद्ध गन्धर्व्व और अप्सराओंसे पूजित होकर अपने धामको ओर गये। हे नरनाथ! उस समय श्रेष्ठ मुनियोंने ऊंचे स्वरसे ऋक् उच्चारण करते हुए उस जगदीश्वरका यश गाया; इन्द्रादि देवताओंने स्वागत प्रश्नादिसे उन्हें प्रत्यभिनन्दित किया और गन्धर्व्व लोग प्रीतिपूर्व्वक उनकी स्तुति गान करते हुए उनका अनुसरण करने लगे।

४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इधर दारुकने कौरवोंके नगरमें जाके पृथापुत्रोंके समीप वार्ष्णेयलोगोंके परस्परमें मूषलघटित युद्ध तथा मरनेका सम्वाद प्रदान किया। पाण्डुके सब पुत्र भोज, अन्धक और कुक्कुरगणोंके सहित वार्ष्णेयलोगोंका मरना सुनके अत्यन्त ही शोक सन्तप्त तथा व्याकुलचित्त हुए। अनन्तर केशवके प्रिय

सखा अर्ज्जुन बोले, बोध होता है, यदुकुल नष्ट हुआ,—इतनी बात कहके सबको आमन्त्रण करते हुए निज मातुल वसुदेवको देखनेके लिये चले। हे महाराज! उस वीरने दारुकके सहित वृष्णियोंके निवासस्थानमें जाके देखा, कि द्वारकानगरी नाथरहित कामिनीकी भांति शोभाविहीन हुई है; जो पहले लोकनाथ कृष्णके अधिष्ठानसे सनाथ हुई थीं, उन नाथरहित स्त्रियोंने इस समय नाथसखा अर्ज्जुनको देखते ही रोदन करना आरम्भ किया। श्रीकृष्णकी सोलह हजार स्त्रियां अर्ज्जुनको आया हुआ देखके महाशब्दके सहित रोदन करने लगीं; उनके भी दोनों नेत्र आंसूसे परिपूरित हुए और वह उन यदुकुलभूषण कृष्णकी तथा पुत्रादिरहित यादवोंकी स्त्रियोंकी ओर देखनेमें भी समर्थ न हुए।

अनन्तर इधर उधर पर्य्यवेक्षण करते हुए देखा, कि शीतकालकी श्रीविहीन स्त्रीकी भांति वृष्णिपुङ्गवोंसे रहित कालपाशग्रस्त यादवनगरी वृष्णि और अन्धकवंशरूपी जल, घोड़ेरूपी मीन, रथरूप नाव, बाजे और रथशब्दरूप ओघ, प्रासादरूप महाह्रद घट, रत्नसमूहरूपी शिवार, वज्रप्राकाररूपी माला, रथ्यारूपी स्रोतजल और भवंर, चत्वररूपी स्थिर ह्रद और राम कृष्णरूपी ग्राहशालिनी भयङ्करी वैतरनी नदीकी भांति मालूम होती है। हे पृथ्वीनाथ! पृथापुत्र अर्ज्जुन द्वारका तथा श्रीकृष्णकी स्त्रियोंकी ऐसी अवस्था देखके सशब्द रोते हुए पृथ्वीपर गिर पड़े; उसे देखके रुक्मिणी और सत्राजितपुत्री सत्यभामा प्रभृति कृष्णकी स्त्रियां शीघ्र ही उस स्थानमें आके उनके चारों ओर रोदन करने लगीं। अनन्तर वे स्त्रियां उस महात्माको उठाके रत्नमय पीढ़ेपर बिठलाकर निर्ज्जनमें उनके चारों ओर बैठीं; तब अर्ज्जुनने भगवान्के कार्य्योंको कहकर अनेक प्रकारसे उनकी स्तुतिकर कृष्णकी स्त्रियोंको आश्वासित करके मामाको देखनेके लिये गमन किया।

५ अध्याय समाप्त।

कुरुपुङ्गव धनञ्जयने वसुदेवके गृहमें जाके देखा, कि वह पुत्रशोकसे दुःखी वीरवर महात्मा सोये हुए हैं। हे भारत! उस समय विशालवक्ष महाभुज पृथानन्दनने आंखोंमें आंसू भरके अधिक आर्त्तभावसे उनके दोनों चरणोंको ग्रहण किया; महाबाहु अरिन्दम वृद्ध आनक दुन्दुभि भानेजेके मस्तकको संघनेके अभिलाषी होके भी शोकवशसे पहले असमर्थ हुए। अनन्तर बहुत कष्टसे अपने दोनों भुजाओंके सहारे महाभुज अर्ज्जुनको आलिङ्गन करके पुत्र, पौत्र, दौहित्र, भ्राता और बान्धवोंको स्मरण करते हुए विह्वलचित्तसे रोदन तथा विलाप करने लगे।

वसुदेव बोले, हे धनञ्जय! बोध होता है, मेरी मृत्यु नहीं है, कारण जिन्होंने सैकड़ों दैत्यों तथा राजाओंको जीता था, मैं उन्हें न देखके भी अबतक जीवन धारण करता हूं। हे पार्थ! जो दो पुरुष तुम्हारे अत्यन्त प्रिय शिष्य थे, उनकी दुर्नीतिसे वार्ष्णेयगण मारे गये हैं। हे कुरुशार्दूल धनञ्जय! जो दो पुरुष वृष्णिवंशियोंके बीच अतिरथ तथा कृष्णके प्यारे थे और तुम कथाछलसे सदा जिनकी प्रशंसा करते थे, वे प्रद्युम्न और सात्यकि दोनों ही वृष्णिवंशके विनाशके अधिनायक हैं। हे अर्ज्जुन! अथवा सात्यकि, कृतवर्म्मा, रुक्मिणीपुत्र वा अक्रूरको दोष नहीं दे सकता; क्यों कि ऋषियोंका शाप ही हमलोगोंके वंशनाश-विषयमें कारण हुआ है। हे पार्थ! जिस जगत्प्रभुने विक्रमके सहित, केशी, कंस और शिशुपालको मारा और निषदराज एकलव्य, काशीराज पौण्ड्रक, कलिङ्ग, मागध, गांधार, प्राच्य, दाक्षिणात्य, पर्व्वतीय और मरुदेशीय राजाओंको अपने वशमें किया था, उसी

मधुसूदनने बालकोंके अपराधसे वंशनाश-विषयमें उपेक्षा किया। हे अर्जुन! मेरा वह पुत्र अनघ गोविन्द जो सनातन विष्णु था, उसे तुम जानते हो और मैंने भी नारद तथा अन्यान्य मुनियोंके निकट सुना था। हे परन्तप! जब उस अधोक्षज विभु जगदीश्वरने कुलक्षयके विषयको जान सकनेपर भी उपेक्षा किया, तब निश्चय बोध होता है, कि वह गांधारी तथा महाभाग ऋषियोंके वचनको अन्यथा करनेके अभिलाषी नहीं हुए। हे अरिन्दम! तुम्हारे पुत्रको अश्वत्थामाके द्वारा मरा हुआ देखके उन्होंने सम्मुखमें ही निज तेजके सहारे उसे फिर जिलाया था; परन्तु इस समय निज ज्ञातिगणोंको मरते हुए देखके भी रक्षा करनेकी इच्छा नहीं की। हे भारत! तुम्हारे उस सखाने निज पुत्र, पौत्र, भ्राता तथा सङ्गियोंको मरके सोये हुए देखकर मुझसे यह वचन कहा, "आज इस यदुकुलके नाशका समय उपस्थित है; इसलिये जब आप धनञ्जयको वार्ष्णेयलोगोंके इस निदारुण मृत्यु सम्वाद प्रदान करेंगे, तब वह द्वारकानगरीमें आवेंगे। हे प्रभु! वह महातेजस्वी यदुवंशियोंके मरनेका सम्वाद सुनते ही जो शीघ्र इस स्थानमें आवेंगे, उसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है; जो अर्जुन वही मैं हूं और जो मैं वही अर्जुन है, हम दोनोंमें कुछ भी भेद नहीं है; इसलिये वह जैसा कहेंगे, उसहीके अनुसार कार्य्यके अनुवर्त्ती होना। वह पाण्डुपुत्र अर्जुन ही कालपरीत बालक, स्त्री तथा आपका भी और्द्धदैहिक कार्य्य करेंगे, धनञ्जयके द्वारकासे चले जानेपर समुद्र उस ही समय प्राकार तथा अटालिओंके सहित इस नगरीको डुबा देगा। मैं बुद्धिमान रामके सहित किसी पवित्र स्थानमें योग अवलम्बन करके देह त्याग करूंगा; मैंने जो कहा, आप इसमें तनिक भी सन्देह न करिये।"

हे पार्थ! अचिन्त्यपराक्रमी सर्व्वशक्तिमान् हृषीकेशने इतनी बात कहके ही बालकोंके सहित मुझे परित्याग करके प्रस्थान किया है। इस समय मैं तुम्हारे उन दोनों महात्मा भाइयों और इस निदारुण ज्ञातिवधके विषयकी चिन्ता करके अत्यन्त शोकपीड़ित हुआ हूं और आहारादि परित्याग किया है, क्यों कि जीवन धारण तथा भोजनादि करनेकी इच्छा नहीं है। हे पाण्डुनन्दन! तुम मेरे भाग्यसे ही आये हो, इस समय कृष्णने जो कहा है, वह सब पूरा करो। हे अरिनिशूदन पृथानन्दन! इस राज्य, ऐश्वर्य्य, स्त्रियों और अपने प्रिय प्राणको भी तुम्हारे हाथमें सौंपता हूं, जो करना हो वह करो।

६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अरिन्दम बीभत्सु दीनचित्त मातुल वसुदेवका ऐसा वचन सुनके बोले,—"मामा! मैं उन वृष्णिप्रवीर तथा बांधवोंसे रहित इस पृथ्वीको अब कदापि देखनेकी अभिलाष नहीं कर सकूंगा। बोध होता है, पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल-सहदेव और द्रौपदीकी भी ऐसी ही दशा होगी; क्यों कि हम छःहों एकान्तःकरण हैं। हे धर्म्मज्ञ! धर्म्मराजका भी संक्रमणकाल उपस्थित हुआ है, इसलिये आप निश्चय जानिये; कि वह शीघ्र ही मृत्युके वशमें होंगे। इस समय मैं यदुवंशियोंकी स्त्रियों तथा बालकोंको शीघ्र ही इन्द्रप्रस्थमें ले जाऊंगा।" धनञ्जय मामासे इतनी बात कहके दारुकसे बोले,—"चलो अब विलम्बकी आवश्यकता नहीं है, इस समय वृष्णिवंशियोंके मन्त्रियोंसे भेंटकर आऊं। शूरवर अर्जुन इतनी बात कहके महारथ यादवोंके निमित्त शोक करते करते सुधर्म्मा नामी यादवोंकी सभामें जाके आसनपर बैठे, तब ब्राह्मण, वणिक् तथा प्रजापुञ्ज उनके चारों ओर एकत्रित हुए। पृथापुत्रने उन लोगोंको दीनचित्त किंकर्त्तव्य विमूढ़ तथा मुमूर्षुप्राय देखकर दीनभावसे उस समयके अनुसार यह

वचन कहा,—थोड़े ही दिनके बीच समुद्र द्वारकानगरको डुबावेगा, इसलिये मैं वृष्णि और अंधकवंशके अवशिष्ट लोगोंको इन्द्रप्रस्थमें ले जाऊंगा और उस ही स्थानमें वज्रको तुम लोगोंके राजपदपर प्रतिष्ठित करूंगा; इसलिये तुम लोग अनेक प्रकारके यान तथा रत्नोंको सज्जित करो। आजसे सौर-सप्तम दिवसमें हम लोग नगरसे बाहिर होंगे। इसलिये तुम लोग विलम्ब न करके इतनेही समयके बीच सज्जित हुए रहो।

अक्लिष्टकर्म्मा पृथानन्दनकी ऐसी आज्ञा सुनके वे सब कोई निज निज प्राण रक्षाके निमित्त उत्सुक हुए, और शीघ्र ही यानादि सज्जित करने लगे। अर्ज्जुनने भी महत् शोक और मोहसे अभिभूत होकर उस रात्रिमें केशवके गृहमें निवास किया, दूसरे दिन भोरमें ही प्रतापवान महातेजस्वी वसुदेव योग अवलम्बन करके उत्तम गतिको प्राप्त हुए। उस समय वसुदेवके गृहमें रोनेवाली स्त्रियोंकी निदारुण रोदनध्वनि प्रकट हुई; वे स्त्रियें केशोंको खोलती तथा आभूषणोंको परित्याग करती हुई दोनों हाथोंसे अपने अपने वक्षस्थलमें आघात तथा करुणस्वरसे विलाप करने लगीं। स्त्रीरत्न देवकी, भद्रा, मदिरा और रोहिणी स्वामीके सहित चितामें चढ़नेकी अभिलाषिणी हुईं। अनन्तर धनञ्जयने मनुष्य-वाहित महार्ह महत् यानके सहारे शौरिके शवको नगरसे बाहिर किया, उस समय अत्यन्त अनुरक्त द्वारकानिवासी प्रजासमूह दुःख और शोकयुक्त होके उनके पीछे पीछे चलने लगे। याजकवृन्द अग्रगामी हुए और अश्वमेधिक द्रव्य प्रदीप्त अग्नि तथा छत्र उनके यानके आगे उपस्थित होने लगा। देवकी प्रभृति देवीगण विविध अलङ्कारोंसे सज्जित और असंख्य स्त्रियों तथा बधूगणोंसे घिरकर उस वीरके पीछे चलने लगीं। अनन्तर जो स्थान जीवित समयमें उस महात्मा शूरपुत्रको परम प्रिय था, उस ही स्थानमें उनके शवको स्थापित करके पितृमेध कार्य्य आरम्भ हुआ। उनकी स्त्रीरत्न चारों रानियें चिताग्निके बीच उस वीरके सहित चितापर बैठकर पतिलोकमें गईं। इस ही प्रकार जब पाण्डुनन्दन चन्दनादि अनेक प्रकारकी सुगन्धित वस्तुओंसे चारों स्त्रियोंके सहित उस शवको जला रहे थे, तब समृद्ध अग्नि, सामग ब्राह्मणों और रोनेवाले लोगोंका शब्द एक ही समयमें प्रकट हुआ। तिसके अनन्तर वज्र प्रभृति वृष्णिकुमारों तथा यादवोंकी स्त्रियोंने मिलके उस महात्माका तर्पणकार्य्य पूरा किया। हे भरतपुङ्गव! धार्म्मिकश्रेष्ठ धनञ्जय धर्म्मके अनुसार उन कार्य्योंको पूरा करके जहां वार्ष्णेयगण विनष्ट हुए थे, उस स्थानमें गये। कुरुनन्दन उस स्थानमें पहुंचके उन सब लोगोंको रणमें मरे हुए देखकर अत्यन्त दुःखित हुए और उस समयके अनुसार कार्य्य करनेके लिये अभिलाषी होकर जो लोग ब्रह्मशापसे एरकासे प्रकट हुए मूषलके सहारे मरे थे, प्रधानताके अनुसार उन लोगोंका अन्त्येष्टिकार्य्य किया। अनन्तर अनुगत लोगोंके द्वारा राम और कृष्णके शरीरको अनुसन्धान कराके विधिपूर्व्वक जलाया और प्रेतकार्य्य पूरा करके सातवें दिन उस स्थानसे बाहिर हुए। वृष्णिवंशियोंकी शोककर्षित स्त्रियें रोदन करती हुई घोड़े, बैल, खच्चर और ऊंटोंसे चलनेवाले रथोंमें चढ़के महात्मा पाण्डुपुत्र धनञ्जयकी अनुगामिनी हुईं। अन्धक और वृष्णिवंशीय रथी तथा घुड़सवार प्रभृति सेवक वृन्द, पुरवासी और जनपदवासी लोग पार्थकी आज्ञानुसार उन बालक और बूढ़ोंसे युक्त वीरविहीन स्त्रियोंकी रक्षा करनेके लिये उनके चारों ओर चले और पदवाणयुक्त पदाति तथा गजारोही पुरुष पर्व्वतसदृश हाथियोंपर चढ़के आगे पीछे चलने लगे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, महाधनवान वैश्य और शूद्रगण तथा अन्धक वा वृष्णिवंशीय बाल-

कगण पार्थके अनुगामी हुए। श्रीमान् वसुदेवनन्दन कृष्णकी स्त्रियें उनके परपोते वज्रको आगे करके बाहिर हुईं, वृष्णि और अन्धकवंशीय हतनाथा स्त्रियें भी उनकी अनुगामिनी हुईं। इस ही प्रकार परपुर-विजयी रथिश्रेष्ठ पार्थ उन मरनेसे बचे हुए महान् समृद्धिशाली वृष्णिवंशियोंको सङ्ग लेकर चलने लगे।

उन लोगोंके बाहिर होनेपर मगरालय समुद्रने समग्र रत्नपूरित द्वारकानगरीको जलमें डुबाया। पुरुषशार्दूल धनञ्जय वहांपर भूभागका जो जो अंश परित्याग करने लगे, समुद्र शीघ्र ही उन स्थानोंको जलसे डुबाने लगा। द्वारकावासी लोग अद्भुत घटना देखके कहने लगे, ओहो! कैसी दैव दुर्घटना है! ऐसा कहते हुए जितना शीघ्र होसका, नगरसे बाहिर हुए। इधर श्रीमान अर्जुनने बीच बीचमें रमणीय वन, पर्वत तथा नदियोंके तटपर निवास करते हुए यादवोंकी स्त्रियोंको सङ्ग लेकर जाते जाते एक दिन पञ्चनदके समीपवर्त्ती गोपशु तथा धान्यसे पूर्ण किसी एक स्थानमें निवास किया। हे भारत! उस स्थानमें बहुतसे डाकू वास करते थे। वे लोग धनञ्जयको अकेले हतनाथा स्त्रियोंको लेके जाते हुए देख लोभके वशमें हुए। हे महाराज! उन पापकर्म करनेवाले आभीरकगणने लोभसे अन्धे होकर परस्पर मिलके इस प्रकार सलाह की, कि अर्जुन एकला धनुर्द्धर है और उसके सब योद्धा लोग तेजरहित हैं; इसलिये हम लोगोंको अतिक्रम करके किसी प्रकार भी इन बचे हुए बाल बूढ़ोंके सहित हतनाथा स्त्रियोंको लेकर जानेमें समर्थ होंगे।

वे परधन हरनेवाले अनगिनत डाकूलोग इसही प्रकार सलाह करके लाठीरूपी अस्त्र लेकर वृष्णिवंशियोंकी स्त्रियोंकी ओर दौड़े। हे भारत! वे लोग अन्यान्य अनुयात्रियोंको सिंहनादसे डराते हुए मानो कालप्रेरित होके ही अर्जुनको वध करनेके लिये जाने लगे। उन्हें देखकर महाबाहु कुन्तिनन्दन धनञ्जय पदातियोंके सहित निवृत्त होके हंसते हंसते उनसे बोले,—रे अधार्म्मिक कगण! यदि बचनेकी इच्छा हो, तो निवृत्त होजाओ, नहीं तो इस ही मुहूर्त्तमें मेरे बाणोंसे कटके तथा मरके अनुताप करना होगा। परन्तु मूढ़ भीलोंने वीरवर अर्जुनका ऐसा वचन सुनके तथा बार बार निवारित होके भी उनके वचनकी उपहास करते हुए स्त्रियोंकी ओर दौड़े; तब अर्जुन अपने उत्तम महत् दिव्य अजर गाण्डीव धनुषपर रोदा चढ़ानेकी इच्छासे बहुत यत्नके सहित नमाके अत्यन्त परिश्रम तथा कष्टसे रोदा चढ़ाकर अस्त्रोंको स्मरण करने लगे, परन्तु कोई अस्त्र ही उस समय उनके स्मृतिपथमें न आया। कुन्तीपुत्र निज भुजवीर्य्यकी विपरीतता तथा दिव्य महास्त्रोंका विनाश देखकर बहुत लज्जित हुए; इधर वृष्णिप्रधीय रथी तथा गज सवार प्रभृति योद्धा लोग उन ह्रियमाण स्त्रियोंको लौटानेमें समर्थ न हुए। उन स्त्रियोंकी संख्या बहुत थी, इससे डाकू लोग चारों ओरसे आके आक्रमण करने लगे, धनञ्जयने स्त्रियोंकी रक्षा करनेके लिये बहुत यत्न किया; परन्तु डाकू लोग योद्धाओंके द्वारा निवारित होके भी उन स्त्रियोंको सब भांतिसे आकर्षण करके लेजाने लगे और कोई कोई स्त्री इच्छानुसार भीलोंकी अनुगामिनी हुईं। उसे देख प्रभावशाली धनञ्जय अत्यन्त ही व्याकुल हुए और वृष्णिवंशीय सेवकोंके सहित गाण्डीवसे छूटे हुए बाणोंसे डाकुओंको मारने लगे; हे महाराज! परन्तु जो बाण पहले बिना रुधिर पीये हुए निवृत्त नहीं होते थे, उस समय वे शीघ्रगामी अक्षयबाण क्षीणवीर्य्य होकर उनके सम्मुखमें ही निष्फल होने लगे। इन्द्रपुत्रने निज बाणोंको व्यर्थ होते देखकर दुःख और शोकसे अभिभूत होकर धनुषकी कोनेसे

दस्युओंको मारना आरम्भ किया। हे जनमे-
जय! परन्तु म्लेच्छगण देखते देखते अर्जुनके सम्मुखमें ही वृष्णि और अन्धकवंशियोंकी स्त्रियोंको लेकरके चले गये। प्रभावशाली धनञ्जय उस दैव दुर्घटनाके विषयको सोचकर दुःख तथा शोकसे अभिभूत होके लम्बी सांस छोड़ने लगे; वह अपने बाहुबल अस्त्र और बाणोंका क्षय होना और शरासनको शासनके बाहिर देखकर मन मलिन होके बहुत समयतक यह सोचकर कि यह दैवकृत है, नहीं तो कदापि ऐसा न होता,---ऐसा वचन कहके निवृत्त हुए।

हे भारत! अनन्तर महाबुद्धिमान कुरुनन्दनने हरनेसे बचे हुए हृतरत्न यादवोंकी स्त्रियोंको कुरुक्षेत्रमें लाके जहां तहां वासस्थान प्रदान किया। वह कृतवर्म्माके पुत्र तथा हरनेसे बची हुई भोजराजकी स्त्रियोंको मार्त्तिकावत नगरमें स्थापित करते हुए अवशिष्ट वीरविहीन बालक, वृद्ध और स्त्रियोंको इन्द्रप्रस्थमें ले गये। अनन्तर परवीर-निषूदन पाण्डुनन्दन धर्म्मात्मा पार्थ सत्यकनन्दन युयुधानके प्रियपुत्रको वृद्ध और बालकोंके सहित सरस्वती नदीके तटपर स्थापित करके वज्रको इन्द्रप्रस्थका राज्य प्रदान किया। वज्रने इन्द्रप्रस्थमें राजा होकर अक्रूरकी स्त्रीको बार बार निषेध किया, तौभी उन्होंने प्रव्रज्याधर्म्म ग्रहण किया। रुक्मिणी, गान्धारी, शैव्या, हैमवती और जाम्बवती देवीने अग्निमें प्रवेश किया और श्रीकृष्णकी सत्यभामा प्रभृति अन्यान्य प्रिय स्त्रियें तपस्या करनेका निश्चय करके वनमें प्रविष्ट हुईं। उन्होंने फलमूल भोजी होकर मनमें श्रीकृष्णका ध्यान करती हुई हिमालयको अतिक्रम करके कलापग्राममें प्रवेश किया। जो द्वारकावासी लोग पृथापुत्र धनञ्जयके सङ्ग आये थे, अर्जुनने विभागक्रमसे उन लोगोंमेंसे बहुतेरे लोगोंको वज्रके समीप स्थापित किया। अर्जुनने यह [illegible]के अनुसार कार्य्य करके आंखोंसे आंसू बहाते हुए भगवान् कृष्णद्वैपायन व्यास मुनिके आश्रममें जाके उनका दर्शन किया।

७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! अर्जुनने व्यासदेवके आश्रममें जाकर देखा, कि मुनिश्रेष्ठ सत्यवतीपुत्र निर्जनमें अकेले बैठे हैं। उनको देखकर उन्होंने उस महाव्रती धार्म्मिकश्रेष्ठके निकट जाकर कहा, कि मैं अर्जुन हूं,—इस ही प्रकार अपना नाम सुनाके प्रणाम किया। महामुनि सत्यवतीपुत्र व्यास भी स्वागत प्रश्नके अनन्तर बैठनेको कहके धनञ्जयको कातर मन मलिन तथा बार बार लम्बी सांस छोड़ते हुए देखकर बोले;—हे भरतपुङ्गव! तुम्हें तो कभी पराजित होते नहीं सुना, तब इस समय इस प्रकार श्रीविहीन क्यों देखता हूं? तुम नखके जल, केशके जल, दशावारि अथवा कुम्भके मुखोदकसे अभिषिक्त तो नहीं हुए हो? क्या तुमने विरावके बीच रजस्वलागमन वा ब्रह्महत्या की है अथवा किसी युद्धमें पराजित हुए हो? हे पार्थ! किस कारणसे तुम्हारी ऐसी अवस्था हुई है? हे अर्जुन! यदि यह मेरे सुनने योग्य हो, तो शीघ्र प्रकाश करके कहो।

अर्जुन बोले, जिसकी देह श्री बादलसदृ[illegible] और दोनों नेत्र विशाल कमलदलके तुल्य थे उस श्रीमान् कृष्णने रामके सहित शरी[illegible] छोड़के सुरलोकमें गमन किया है। ब्रह्मश[illegible] वशसे प्रभासमें मूषलजनित युद्धमें वृष्णिवं[illegible] योंका निदारुण लोमहर्षण विनाश हुआ [illegible] हे ब्रह्मन्! जो भोज, वृष्णि और अन्धक [illegible] महाबली शूरवीर लोग पञ्चास्यसदृश पर[illegible] तथा दर्पशाली थे, वे लोग परस्पर [illegible] विनष्ट हुए हैं। हे महाभाग! का[illegible] लोग गति देखिये, जिन लोगोंको भ[illegible] समान थीं और जो लोग परिघ [illegible] पार-

प्रभृति आयुधोंके प्रहारको सहजमें ही सह सकते थे, वेही एरका (रूटेरको) चोटसे मरे हैं। हाय! पांच लाख यदुवंशीय विशालबाहु बीर परस्पर युद्धमें प्रवृत्त होके मारे गये हैं। मैं बार बार चिन्ता करता हूं, तथापि यदुवंशियों और श्रीकृष्णके मरनेमें मुझे तनिक भी विश्वास नहीं होता है। समुद्रके सूखने, पर्व्वतके चलना, आकाशके पतन तथा अग्निमें शीतगुणकी भांति क्या श्रीकृष्णके विनाशमें किसी प्रकार श्रद्धा होसकती है? जो हो अब मैं श्रीकृष्णसे रहित होकर इस पृथ्वीमें रहनेकी इच्छा नहीं करता। हे तपोधन! इसके अतिरिक्त जिसकी चिन्ता करके मेरा मन सदा विदीर्ण होता है, इससे भी बढ़के कष्टका कारण सुनिये,— हे ब्रह्मन्! मैं यादवोंकी स्त्रियोंको लेकर आता था, इतने ही समयमें मार्गके बीच पञ्चजननिवासी भीलोंने युद्धकी अभिलाष करके मेरे सामने ही देखते देखते उन स्त्रियोंको हरण किया है। यद्यपि मैं उस समय अपना गाण्डीव धनुष धारण किये हुए था, परन्तु मेरी दोनों भुजा पहलेकी भांति पराक्रम प्रकाश करनेमें असमर्थ हुई, मैं उस धनुषमें रोदा चढ़ाके उसे खींच न सका। हे महामुनि! उस समय मैं अनेक प्रकारके अस्त्रोंको भूल गया और सब बाण मुहूर्त्त भरके बीच सब प्रकारसे तूणसे खाली होगये थे। हे तपोधन! जिनके दोनों नेत्र कमलदलके सदृश विशाल थे, जो शंख, चक्र और गदाधारी श्यामवर्ण चतु[र्भुज] पीताम्बरधारी अप्रमेयात्मा परम पुरुष [गोवि]न्दको जब नहीं देखता हूं, तो अब मुझे [प्राण] धारण करनेसे क्या फल है? हाय! वह [ते]जस्वी शत्रुसेनाको जलाते हुए मेरे रथके [आगे चलते] थे, मैं उस अच्युतको अब नहीं [देखता]। हाय! वह आगे निज तेजके सहारे [शत्रुओंको ज]लाते थे, तिसके बाद मैं गाण्डीवसे [उन]से शत्रुओंका नाश करता था। हे सत्तम! इस समय उन्हें न देखकर मैं विषण्ण होता हूं, तथा मेरा अन्तःकरण ऐसा कातर होके घूर्णित होता है, कि कहीं भी मुझे शान्ति प्राप्त नहीं होती। जबसे जनार्द्दन विष्णु अन्तर्द्धान हुए हैं, इतनी बात सुननेके समयसे ही मुझे सब दिशा अन्धकारमय दीखती हैं, इसलिये कृष्णसे रहित होके अब मुझे जीवन धारण करनेका उत्साह नहीं होता है। हे सत्तम! मेरे पराक्रम तथा स्वजनोंके विनष्ट होनेसे चित्त घबड़ा रहा है और जगतको सूना देखता हूं; इसलिये जिससे मेरा मङ्गल हो, आपको उचित है, कि मुझे वैसा ही उपदेश करें।

वेदव्यास मुनि बोले, हे कुरुशार्दूल! वृष्णि और अन्धकवंशीय महारथगण ब्रह्मशापसे भस्म होकर विनष्ट हुए हैं, इसलिये उन लोगोंके निमित्त शोक मत करो। जो होनहार होता है, वह अवश्य हुआ करता है; इसलिये कृष्णने समर्थ होके भी महात्मा यदुवंशियोंके इस अवश्यम्भावी विनाशके विषयको जान सकनेपर भी निवारण करनेकी चेष्टा न की, बल्कि उपेक्षा ही की थी; नहीं तो इन यदुवंशीय महात्माओंके ब्रह्मशापकी तो कुछ बात ही नहीं है, गोविन्द इच्छा करनेसे स्थावर और जङ्गमके सहित तीनों लोकोंको भी अन्यथा कर सकते। वह शंख, चक्र गदाधारी चतुर्भुज विशालनयन पुरातन ऋषि वासुदेव श्रीकृष्ण प्रीतिके वशमें होकर ही तुम्हारे रथके आगे चलते थे; इस समय पृथ्वीका भार हरके शरीर छोड़कर निज धाममें गये हैं। हे महाबाहो पुरुषपुङ्गव! तुमने भी भीमसेन और नकुल, सहदेवकी सहायतासे देवताओंका उत्तम महत् कार्य्य सिद्ध किया है। हे विभु कुरुपुङ्गव भारत! तुम लोग जिस लिये इस पृथ्वीमें आये थे, उसमें कृतकृत्य हुए; अब तुम लोगोंका काल उपस्थित हुआ है, इसलिये मेरे

विचारमें अब यहांसे गमन करना ही कल्याण-कारी बोध होता है ; क्योंकि सम्पतकालमें बुद्धिका जो तेज तथा प्रतिपत्ति होती है, आपदकालमें वह सभी विपन्न हुआ करता है। हे धनञ्जय ! काल ही सबका मूल है ; उसने ही बीज स्वरूप होके इस जगत्की सृष्टि की है, और वही इच्छानुसार फिर सब हरेगा ; कालके वशसे बलवान होके भी पुरुष फिर निबल होता है तथा सबका ईश्वर होके भी फिर दूसरेकी आज्ञाके वशमें हुआ करता है ; इसलिये उसके लिये शोक न करना चाहिये। तुमने समयके अनुसार जिन सब अस्त्रोंको पाया था, वे सब कृतकृत्य होकर इस समय निज निज स्थानमें गये हैं ; युगान्तरमें फिर वे सब तुम्हारे हाथमें आवेंगे। हे भरतपुङ्गव ! तुम लोगोंका भी अभिलषणीय महाप्रस्थानका समय उपस्थित हुआ है, इसलिये मेरे विचारमें अब वैसा ही अनुष्ठान करनेसे कल्याण लाभ कर सकोगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वीरवर पृथानन्दन अमिततेजस्वी श्रीवेदव्यास मुनिका ऐसा वचन सुनके उनकी आज्ञा पाके हस्तिनापुरमें आये और नगरमें प्रवेश करके धर्म्मराजके समीप जाके वृष्णि तथा अन्धकवंशियोंके विनष्ट होनेका सारा वृत्तान्त आदिसे अन्ततक कह सुनाया।

८ अध्याय समाप्त।

मौषल पर्व्व समाप्त।

महाभारत।

महाप्रस्थानिक पर्व्व।

नरायणे, नरोत्तम नर और सरस्वतीदेवीको प्रणाम करके जय कीर्त्तन करे।

जनमेजय बोले, वृष्णि और अन्धकवंशियोंके इस प्रकारसे मूषलयुद्धमें मरने और श्रीकृष्णके निज धाममें जानेका सम्वाद सुनके पाण्डवोंने किस कार्य्यका अनुष्ठान किया? आप वह सब मेरे निकट प्रकाश करके कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कौरवराज युधिष्ठिरने वृष्णिवंशियोंके वैसे निदारुण विनाशका विवरण सुनके सुरलोकमें जानेके लिये अभिलाषी होकर अर्ज्जुनसे कहा; — हे महाबुद्धिमान्! कालही प्राणियोंको हरण किया करता है, मुझे बोध होता है, कि हम लोग भी उस ही कालपाशमें आबद्ध हुए हैं, इसलिये अब तुम लोगोंको भी इन सब विषयोंको आलोचना करनी चाहिये। जेठे भाई बुद्धिमान् धर्म्मराजका ऐसा वचन सुनकर कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनने कालको अपरिहार्य्य कहके उनके वचनको स्वीकार किया। भीमसेन और नकुल सहदेवने भी सव्यसाची धनञ्जयका अभिप्राय जानके उन्होंने जैसा कहा, उसमें ही निज निज सम्मति प्रकाश की। अनन्तर पाण्डवोंमें जेठे राजा युधिष्ठिरने वैश्यापुत्र युयुत्सुको बुलाकर धर्म्माचरणके निमित्त बनमें जानेका अभिप्राय प्रकाशित करके उन्हें सब राज्यभार प्रदान किया और राजा परीक्षितको निज राज्यपर अभिषिक्त ... ... थावसे सुभद्रासे बोले, — यादवोंमें बचे हुए वज्रको इन्द्रप्रस्थके राजपदपर अभिषिक्त किया गया है; और तुम्हारा यह पौत्र हस्तिनापुरमें कौरवोंका राजा हुआ। हे भद्रे! यदुनन्दन वज्रको इन्द्रप्रस्थका राज्य दिया गया है, तुम उसके विषयमें किसी प्रकार अधर्म्माचरणको अभिलाष न करके सदा उसकी रक्षा करना। धर्म्मात्मा धर्म्मराजने इतनी बात कहके भाइयोंके सहित धीमान् कृष्ण, बूढ़े मामा वसुदेव और राम प्रभृतिको जल देके विधिपूर्व्वक सबका श्राद्ध किया। अनन्तर शार्ङ्गधारी केशवका नाम लेकर उनके उद्देश्यसे द्वैपायन, नारद, मारकण्डेय, भरद्वाज और याज्ञवल्क्य प्रभृति तपोधन श्रेष्ठ द्विजोंको यत्नपूर्व्वक अनेक प्रकारकी स्वादिष्ट भोज्य वस्तु भोजन कराके असंख्य रत्न, वस्त्र, घोड़े, रथ और सैकड़ों सहस्रों स्त्री तथा ग्राम दान किये।

हे भरतसत्तम! तिसके अनन्तर उन लोगोंने पुरवासियोंसे पुरस्कृत गुरु कृपाचार्य्यकी पूजा करते हुए परीक्षितको शिष्यस्वरूपसे उनके हाथमें सौंप दिया। अनन्तर राजर्षि युधिष्ठिरने प्रक... पुञ्जको बुलाकर निज चिकीर्षित विषय ... सुनाया। पुरवासी तथा जनपदवासी ... उनका ऐसा वचन सुनके अत्यन्त दुःखित हुए और उस वचनको अनुमोदन न कर... बार इस प्रकार कहने लगे, हे नरनाथ ... ऐसा न करना चाहिये। परन्तु ... ष्ठिरने कालके विपरीत धर्म्मको जा...

इसलिये उन पुरवासियों और जनपदवासियोंके अभिलाषके अनुसार [illegible] करनेमें असम्मति प्रकाश करके सबकी अनुमति लेकर भाइयोंके सहित बनमें जानेकी इच्छा की।

अनन्तर धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरने शरीरके सब आभूषणोंको उतारा, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव और यशस्विनी द्रुपदपुत्रीने भी भूषणोंका परित्याग करके वल्कलवस्त्र पहना। हे भरतपुङ्गव! तिसके अनन्तर उन पुरुषपुङ्गवोंने बिधिपूर्व्वक उत्सर्ग कालके अनुसार अन्तिम यज्ञ समाप्त करके अग्निको जलके बीच छोड़ दिया। पहले जूएके खेलमें हारनेपर जिस प्रकार गमन किया था, उस समय भी उन श्रेष्ठ पुरुषोंको द्रौपदीके सहित उस ही भांति जाते हुए देखके पुरकी स्त्रियें रोने लगीं। परन्तु वे भ्रातगण वृष्णियोंका विनाश देखके तथा युधिष्ठिरके अभिप्रायको जानके गमन-विषयमें ही हर्ष प्रकाश करने लगे। अनन्तर राजा युधिष्ठिर चारों भाइयों द्रौपदी और एक कुत्ता, इन सात जनोंके सहित नगरसे बाहिर हुए, तब पुरवासियों तथा अन्तःपुरवासियोंने बहुत दूरतक उनका अनुगमन किया, परन्तु कोई भी उन्हें "निवर्त्तित हुइये" – ऐसा बचन कहनेमें समर्थ न हुआ। तिसके अनन्तर नगरवासियों तथा [illegible]आचार्य्य प्रभृति अनुयाई लोग लौटकर युयुत्सुके [illegible]रों ओर स्थित हुए, भुजगनन्दिनी उलूपीने [illegible]गामें प्रवेश किया तथा चित्राङ्गदा मणिपुरको [illegible]र गई और दूसरी कुरुस्त्रियें परीक्षितके [illegible]ट निवास करने लगीं।

हे कुरुनन्दन! इधर सन्न्यास धर्म्मावलम्बी [illegible]त महात्मा पाण्डवों तथा यशस्विनी द्रुप[illegible]नीने उपवासी होकर पूरबकी ओर चल[illegible] [illegible] जनपद सागर तथा नदियोंको अति[illegible] [illegible]। उस समय युधिष्ठिर सबके आगे [illegible], अर्जुन, नकुल तथा सहदेव यथा[illegible]रके पीछे चलने लगे। हे भरतसत्तम! कमलनयनी श्यामाङ्गिनी बरारो[illegible] स्त्रियोंमें श्रेष्ठ द्रुपदनन्दिनी उन सबके पी[छे] चलने लगी, इसही प्रकार जब पाण्डुपुत्रोंने बनकी ओर प्रस्थान किया, तब एकमात्र कुत्ता ही उनका अनुगामी हुआ था। हे महाराज! उस महाप्रस्थानके समयमें भी धनञ्जय रत्नलोभके बशमें होकर उत्तम महत् गाण्डीव नामक धनुष और उन दोनों अक्षय तूणीरोंको परित्याग न कर सके।

हे भारत! इसी प्रकार क्रमसे जाते जाते उन लोगोंने उदयाचलके पासमें स्थित लोहित्य समुद्रके तटपर उपस्थित होकर देखा, कि मूर्त्तिमान अग्निदेव पुरुष विग्रह परिग्रह करते हुए पर्व्वतका मार्ग रोकके सामने निवास करते हैं। देवश्रेष्ठ सप्तार्च्चि पाण्डवोंको समागत देखकर बोले, - हे वीर पाण्डुपुत्रो! मुझे अग्नि जानो। हे महाबाहो युधिष्ठिर! हे भीमसेन! हे अरिन्दम अर्ज्जुन! हे वीर दोनों अश्विनीकुमार! तुम सब कोई मेरा बचन सुनो। हे कुरुश्रेष्ठगण! मैं अग्नि हूं; मैंने ही उस नारायण और अर्ज्जुनके प्रभावसे खाण्डववनको जलाया था। तुम लोगोंका भ्राता यह अर्ज्जुन इस परमायुध गाण्डीवको परित्याग करके बनमें जावे, क्योंकि इस समय इससे इनका अब कुछ प्रयोजन नहीं है; महात्मा कृष्णके निकट जो चक्ररत्न था, वह इस समय प्रस्थित हुआ है, परन्तु अवतारान्तरमें फिर उनके हाथमें स्थित होगा, "मैंने अर्ज्जुनके निमित्त बरुणके समीपसे यह श्रेष्ठ धनुष गाण्डीव ला दिया था, इसलिये अब यह उन्हें ही दिया जावे।" अग्निकी इतनी बात सुनके सब भाइयोंने अर्ज्जुनसे अनुरोध किया, तब उन्होंने धनुष और दोनों अक्षय तूणीर जलके बीच फेंक दिया। हे भरतश्रेष्ठ! उसे देखकर अग्निदेव भी शीघ्रही उस स्थानमें अन्तर्द्धान हुए और उन लोगोंने भी दक्षिण ओर गमन किया। हे भरतशार्दूल! अनन्[तर]

...हैं, उन्हें परम सिद्धि ...मुझे सन्देह नहीं है। ...समुनिके ओठसे निकले हुए ...पुण्य पवित्र पाप हरनेवाले तथा कल्याणकारी इस महाभारतका पाठ सुनते हैं, उन्हें पुष्करतीर्थके जलसे अभिषेकका क्या प्रयोजन है?

५ अध्याय समाप्त।

फलश्रुति।

जनमेजय बोले, हे भगवन्! पण्डित लोग किस विधिके अनुसार महाभारत सुनें? इसके सुननेसे क्या फल होता है और पारणके समय किन किन देवताओंकी पूजा करनी होगी? हे भगवन्! पर्व्व समाप्त होनेपर क्या दान करना चाहिये और इसे पाठ करनेवाला कैसा अभिलषणीय हो? यह सब आप मेरे समीप वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत वंशधर ...द्र! तुमने मुझसे जो पूछा है, उस विषयमें ...विधि और इसके सुननेसे जो फल होता ...से सुनो। हे महीपाल! सुरपुर वासी देव...गण क्रीड़ा करनेके लिये भूमण्डलमें आये थे, ...कार्य्य शेष करके फिर स्वर्गमें गये हैं। अच्छा, ...यों और देवताओंके पृथ्वीतलमें उत्पत्ति ...के जो तुमसे संक्षेप कथा कहता हूं, उसे सुनो। हे भारत! रुद्रगण, साध्यगण, शाश्वत विश्वदेवगण, आदित्यगण, दोनों अश्विनीकुमार ...लोकपाल, महर्षिवृन्द, गुह्यकगण, गन्धर्व्व, ...विद्याधर, सिद्धगण, धर्म्म, स्वयम्भू, मुनि-..., कायगोचर पर्व्वत, समुद्र और नदियें, ...तारावृन्द, ग्रहगण, सम्वत्सर, अयन, सब ऋतु ...सुरासुरोंके सहित स्थावरजङ्गमयुक्त जगत् ...एक स्थानमें उत्तम रीतिसे दिखाई ...नामकीर्त्तन-निब-

...सुनके मनुष्य घोर पाप करके भी उस ही समय मुक्त होता है। हे भारत! विधि पूर्व्वक पूरी रीतिसे इस इतिहासको संयतचित्त तथा पवित्र हो भारतके पारगामी होकर महाभारत सुननेके अनन्तर श्रद्धापूर्व्वक दान करना उचित है। भारत सुनके, ब्राह्मणोंको भक्तिपूर्व्वक शक्तिके अनुसार महादान विविध रत्न कांसेकी दोहनीयुक्त गऊ कामगुण सम्पन्न उत्तम रीतिसे अलंकृत कन्या अनेक प्रकारकी सवारियें, विचित्र गृह, भूमि, वस्त्र, सुवर्ण, घोड़े, मतवारे हाथी प्रभृति वाहन, शय्या, पालकी, अलंकृत रथ और गृहमें जो सब उत्तम वस्तु तथा मूल्यवान धन हो, वह सब द्विजातियोंको दान करना योग्य है; और कहांतक कहें, आत्मदारा तथा पुत्रोंको परम श्रद्धापूर्व्वक दान करते करते क्रमसे उस विषयमें पारग होवे। शक्तिके अनुसार प्रसन्नचित्त होकर हृष्ट, शुश्रुषु, सङ्कल्प रहित सत्य और सरलतामें रत, दान्त, पवित्र शौचयुक्त, श्रद्धावान् और जितक्रोध होकर मनुष्य जिस प्रकार सिद्धि लाभ करता है, उसे सुनो। शुचिशील सम्पन्न, सदाचार-सफेद वस्त्रधारी, जितेन्द्रिय, संस्कारापन्न, सर्व्वशास्त्रज्ञ, श्रद्धालु, सत्यवादी जितेन्द्रिय दान तथा मानशील पाठक नियुक्त करना उचित है। पाठ करनेवाला अच्छे आसनपर बैठके स्वस्थ तथा सावधान होकर विलम्ब न करके अद्भुत और उज्ज्वल असंसक्त अक्षर और पदयुक्त स्वर तथा भाव सम्पन्न तिरसठ वर्णान्वित कण्ठ-तालु प्रभृति आठों स्थानोंसे समीरित पाठ करे। नारायण, नरोत्तम नर और सरस्वती देवीको प्रणाम करके जय कीर्त्तन करे।

हे भरतवंश-प्रदीप महाराज! नियममें रहनेवाला पवित्र श्रोता ऐसे पाठकके मुखसे भारत सुनके फल पाता है, पहले भारत पारणप्राप्ति होनेपर मनुष्य इच्छानुसार द्विजगणको तृप्त करे, उसे अग्निष्टोम यज्ञका फल मिलता

है। परिणाममें वह अप्सराओंसे [illegible] उत्तम महत् विमान पाता है और [illegible] तथा साव-धान होकर देवताओंके सहित सुरलोकमें गमन किया कर[illegible] है। द्वितीय पारण प्राप्त होनेसे अ[illegible] यज्ञका फल पाके रत्नमय दिव्य वि[illegible]में आरोहण किया करता है, दिव्य मालाम्बरधारी, दिव्य गन्धविभूषित तथा सदा दिव्य गन्धको धारण करते हुए देवलोकमें निवास करता है। तीसरे पारणको प्राप्त होके द्वादशाह साध्य यज्ञका फल पाता और देवस-दृश होकर दस हजार वर्षतक देवलोकमें निवास किया करता है। चौथे और पांचवें पारणमें वाजपेय यज्ञका दूना फल होता है, वह मनुष्य उदित आदित्य तथा जलते हुए अग्नितुल्य विमानमें चढ़के देवताओंके सहित स्वर्गमें जाता है और वहां दस हजार वर्षतक इन्द्रके भवनमें प्रमुदित होके रहता है। छठें पारणमें दूना और सातवेंमें तिगुना फल होता है; वह पुरुष कैलाशके शिखरकी भांति वैदूर्य्य मणिकी वेदी युक्त अनेक प्रकारके मणि-योंसे खचित विद्रुम विभूषित उत्तम अप्सरा-ओंसेयुक्त कामगामी विमानमें चढ़के द्वितीय सूर्य्यकी भांति सब लोकोंमें विचरता है। आठवें पारणमें पुरुषको राजसूय यज्ञका फल मिलता है और चन्द्रकिरणसदृश मनोजव घोड़ोंसे युक्त चन्द्रोदय समान रमणीय विमानमें चढ़ता है, वह विमान चन्द्रमासे भी अधिक कान्तितर सुखयुक्त उत्तम स्त्रियोंसे सेवित है; वह पुरुष सुन्दरी स्त्रियोंकी गोदीमें सुखसे सोते हुए मेखला तथा नूपुरके शब्दसे जागता है। हे भारत! नवें पारणमें अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है; सोनेके स्तम्भ और वैदूर्य्यनिर्म्मित वेदीयुक्त स्वर्णमय दिव्य गवाक्षके सहारे सब भांतिसे परिवृत द्युलोकचारी गन्धर्व्व तथा अप्स-राओंसे सेवित विमानपर चढ़के परम श्रीसम्पन्न मनुष्य दिव्य माला धारण कर दिव्य चन्दन[illegible] विभूषित देवलोकमें अन[illegible] देवताओंके सहित प्रमुदित [illegible] दशवें पारणको प्राप्त होनेसे [illegible] वन्दना करके मनुष्य किङ्किणीजालके [illegible] पताका ध्वजासे शोभित रत्नमय वेदी सनाथ वैदूर्य्य मणिमय तोरणयुक्त सोनेके तारोंसे खचित प्रवाल वलभीमुख गीतमें निपुण गन्धर्व्व तथा अप्सराओंसे शोभित पुण्यवानोंके निवासस्थान विमानको सहजमें ही पाता है। सुवर्ण विभूषित अग्निवर्ण मुकुट धारण करके अङ्गमें दिव्य चन्दन लगाये हुए दिव्य आभूषणोंसे भूषित और दिव्य भोगयुक्त होकर दिव्य लोकोंमें विचरता तथा देवताओंकी कृपासे परम श्रीसम्पन्न होता है।

अनन्तर इस ही प्रकार वह अनेक वर्षतक स्वर्गलोकमें निवास करता है, वह गन्धर्व्वोंके सहित इक्कीस हजार वर्ष रमणीय इन्द्रपुरीमें इन्द्रके सहित प्रमुदित होता है। दिव्य यान वा विमानोंमें तथा विविध लोकोंमें दिव्य स्त्रियोंसे घिरके देवताकी भांति निवास करता है। हे राजन्! अनन्तर वह सूर्य्यके स्थानमें फिर चन्द्रमाके स्थान तथा महादेवके स्था[illegible] वास करके विष्णुके समान लोक पाता है। [illegible] महाराज! इस विषयमें विचार करना उ[illegible] नहीं है, इसमें इस ही प्रकार श्रद्धावान् होना चाहिये, मेरे गुरुने ऐसा ही कहा है। मनही मन जो इच्छा हो, वह पाठ करनेवालेको द[illegible] करे; विशेष करके हाथी, घोड़े, रथ, यान [illegible] समस्त वाहन सोनेके कुण्डल, ब्रह्मसूत्र, विचित्र वस्त्र तथा सुगन्ध दान करे और उसको देवताके समान पूजा करे, तो विष्णुलोक प्राप्त होगा।

हे महाराज! इसके अनन्तर प्रति पर्व्व[illegible] पाठमें श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको जो जो देना चाहिये, उसे कहता हूं। हे भरतश्रेष्ठ नरनाथ! क्ष[illegible] यलोग जाति देश, सत्य, माहात्म्य और धर्मवृ[illegible] मालूम करके पहले ब्राह्मणोंसे [illegible] [illegible]कराके शीघ्रमें काम[illegible]

[illegible]द्रके उत्तर किनारेसे चलते हुए [illegible]श्चिम दिशामें गये, तिसके अनन्तर [illegible]युक्त होकर पश्चिमको ओर जाकर द्वार[illegible] उपस्थित होके देखा, कि महासागरने [illegible] डुबादिया है। हे महाराज! इस [illegible]र वे योगावलम्बी भरतसत्तमगण पृथ्वी[illegible] प्रदक्षिणा करनेके लिये अभिलाषी होकर [illegible] दिशासे लौटकर उत्तरको ओर चले।

१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, संयतचित्त पाण्डु[illegible]ोंने इसही प्रकार तीनों दिशाओंकी प्रदक्षिणा करके समाहित मनसे उत्तरकी ओर जाके महा गिरि हिमवान्‌को देखा। वे लोग उस शैलराजको अतिक्रम करते हुए बालुकार्णव पार होकर शिखरश्रेष्ठ महाशैल सुमेरुमें उपस्थित हुए। हे महाराज! वे योगधार्म्मिक गण सुमेरु शिखरपर शीघ्रतासे चढ़ रहे थे, इतने ही समयमें द्रौपदी योगभ्रष्ट होकर पृथ्वीतलमें गिर पड़ी। द्रुपदपुत्रीको गिरती हुई देखकर महाबली भीमसेनने धर्म्मराज युधिष्ठिरसे पूछा; हे अरिन्दम! इस राजपुत्री कृष्णाने कभी अधर्म्माचरण नहीं किया, तौभी पृथ्वीतलमें गिरपड़ी इसका क्या कारण है? मुझसे प्रकाश करके कहिये।

युधिष्ठिर बोले, हे पुरुषोत्तम! हम सब लोगोंके तुल्य होनेपर भी अर्ज्जुनके ऊपर विशेष रीतिसे इसका महत् पक्षपात था, यह आज उस ही फलको भोग करती है। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मात्मा धीमान् पुरुष पुङ्गव भरत[illegible] [illegible]धिष्ठिर इतनी बात कहके द्रौपदीको [illegible] [illegible]में

युधिष्ठिर बोले, यह राजपुत्र किसी पुरुषको ही अपने समान प्राज्ञ नहीं समझते थे, से उस दोषसे ही इस समय गिरे हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर इतनी बात कहके ही उस समय सहदेवको परित्याग और भाइयों तथा उस कुत्तेके सहित चलने लगे। परन्तु द्रौपदी, और पाण्डुनन्दन सहदेवको गिरते हुए देखके भ्रातृप्रिय शूर नकुल शोकसे पीड़ित होके पृथ्वीतलमें गिर पड़े, उस वीर श्रेष्ठ सुन्दर नकुलके गिरनेपर भीमसेनने राजा युधिष्ठिरसे पूछा,—जो कभी धर्म्म मार्गसे विचलित नहीं हुए सदा हम लोगोंके आज्ञानुवर्त्ती थे और तीनों लोकोंके बीच जिनके सदृश रूपवान् कोई नहीं है, यह वही भ्राता नकुल किस निमित्त पृथ्वीतलमें गिरे?

धार्म्मिक पुरुषोंमें अग्रगण्य धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर भीमसेनका ऐसा प्रश्न सुनके बोले,—नकुल सर्व्वदा मनमें ऐसी विवेचना करते थे, कि तीनों लोकोंके बीच मेरे समान रूपवान् कोई नहीं है तथा मैं ही सबसे अधिक रूपवान हूं। हे वृकोदर! ये इस समय उस ही गर्व्व-से गिरे हैं। हे वीर! जिसके लिये जिस प्रकार विहित हुआ है, वह अवश्य उसहीके अनुरूप फल भोग करेगा, इसलिये इसके [illegible] शोक न करके आगमन करो।

द्रौपदी और भाइयोंको इस प्रकार गिरते हुए देखकर पाण्डुपुत्र परवीरनिसूदन श्वेतवाहन पार्थ शोकसे सन्तापित होकर गिर पड़े। सुरराज सदृश तेजस्वी दुराधर्ष पुरुषसिंह अर्ज्जुनको गिरते तथा मरते देखकर भीमने फिर राजासे पूछा,—मुझे ऐसा स्मरण [illegible] [illegible] परिहासके [illegible]

परन्तु कार्य्यमें उसे पूरा नहीं किया। हे वीर! ये शूरताभिमानी इस समय उस मिथ्या प्रतिज्ञासे ही गिरे। विशेष करके फाल्गुन धनुर्धारियोंमें अग्रगण्य थे, इसलिये सदा दूसरे धनुर्धरोंकी अवज्ञा करते थे, यह भी उनके गिरनेका दूसरा कारण है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिर इतनी बात कहके ही चलने लगे, उस ही समय भीमसेन गिरे और गिरते गिरते धर्म्मराज युधिष्ठिरसे पूछा,—भो भो राजन्! यह देखिये मैं तुम्हारा प्रिय होके भी गिरता हूं। हे महाराज! मैं किस निमित्त गिरता हूं? यदि आपको वह मालूम हो, तो प्रकाश करके शीघ्र कहिये।

युधिष्ठिर बोले, हे पार्थ! तुम बहुतसा भोजन करते और दूसरेके बलको न देखकर सदा अपने बलकी बड़ाई करते थे, इस ही निमित्त पृथ्वीमें गिरे हो।

महाबाहु युधिष्ठिर इतनी बात कहके उनकी ओर न देखकर ही चलने लगे। मैंने जिसका विषय बारम्बार तुम्हारे निकट वर्णन किया है, उस समय वह एकमात्र कुत्ता ही उनका अनुगमन करने लगा।

२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर देवराजने रथपर चढ़के पृथ्वी और आकाशमण्डलको सन्नादित करते हुए उस स्थानमें आकर युधिष्ठिरको रथमें चढ़नेके लिये कहा। परन्तु धर्म्मराज युधिष्ठिर भाइयोंको गिरा हुआ देखके [illegible]पित होकर सहस्रलोचनसे यह [illegible] सुरेश्वर! भाइयों मेरे सङ्ग

इन्द्र बोले, हे भरतपुङ्गव! उनके [illegible] शोक मत करो; वे तुमसे पहले ही स[illegible] गये हैं, तुम स्वर्गमें जाके ही द्रौपदीके [illegible] उन लोगोंको देखोगे। हे भारत! वे [illegible] मनुष्य शरीर परित्याग करके स्वर्गमें [illegible] परन्तु तुम निःसन्देह इस शरीरसे ही [illegible] जाओगे।

युधिष्ठिर बोले, हे भूतभव्यगणके ई[illegible] यह कुत्ता मेरा चिरभक्त है, इसलिये इसे [illegible] सङ्ग स्वर्गमें ले जानेकी इच्छा करता हूं, [illegible] कि ऐसा न करनेसे मेरे विचारमें इसके ऊपर निर्दय व्यवहार करना सिद्ध होगा।

इन्द्र बोले, हे राजन्! इस समय तुम मर्त्य भावसे रहित होके मेरे सदृश हुए हो और समग्र लक्ष्मी, महती सिद्धि तथा स्वर्गसुख प्राप्त किया है, इसलिये इस कुत्तेको परित्याग करो, उसमें तुम्हारी किसी प्रकार निर्दयता प्रकाश करनी न होगी।

युधिष्ठिर बोले, हे आर्य्य सहस्रलोचन! आर्य्य होके इस प्रकारके अनार्य्य कार्य्यको करना दुष्कर है; आप जिस ऐश्वर्य्यकी बात कहते हैं, उसके सहित मेरा सम्मिलन न हो, तौभी मैं इस प्रकार भक्तजनका परित्याग न कर सकूंगा।

इन्द्र बोले, जिन लोगोंके कुत्ता रहता है, उन अपवित्र लोगोंको स्वर्गमें स्थान नहीं मिलता, क्यों कि क्रोधवश नाम देवगण उनके इष्टापूर्त्तके फलका हरण किया करते हैं; हे धर्म्मराज! इसलिये तुम विचार करके इस कुत्तेको परित्याग करो, उसमें तुम्हारी निर्द[illegible] यता [illegible]

...मित्त प्रयत्न
...गागत चीयामल
...याग न करूंगा,
... है।

... धर्म्मराज! जो दत्त, इष्ट,
...वा हुत हो, वह सारमेयके द्वारा
...नेपर क्रोधवश नाम देवगण यह सब हरण
...ते हैं, इसलिये तुम इस कुत्तेको परित्याग
...ो, क्यों कि इस कुत्तेको प.रत्याग करनेसे
देवलोकमें जा सकोगे। हे वीर! तुम
...यों तथा दयिता द्रौपदीको परित्याग करते
... निज कर्म्मके सहारे इस लोकको प्राप्त
...रके भी किस निमित्त इस सारमेयको परि-
...याग नहीं करते हो? तुम सब त्याग करके भी
...जो आज मोहयुक्त होते हो, यह अत्यन्त आश्च-
र्य्यका विषय है।

युधिष्ठिर बोले, हे सुरेश्वर! मरे हुए लोगोंको फिर नहीं जिलाया जा सकता और मरे मनुष्योंके सङ्ग मर्त्य लोगोंकी सन्धि, विग्रह तथा दूसरे किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं रहता; मैंने इस लोकस्थितिके वशमें होके ही उन्हें परित्याग किया है, उन्हें जीवित रहते नहीं छोड़ा है। हे शक्र! शरणागतको भय दिखाना, स्त्रीबध, ब्रह्मस्व हरण और मित्रद्रोह, ये जो चार पातक हैं, मैं भक्तत्यागको भी उन्हींके सदृश समझता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मरूपी भगवान् धर्म्मराजकी ऐसे वचन सुनके अत्यन्त प्रसन्न हुए और स्तवयुक्त मधुर वाणीमें नरेन्द्र युधिष्ठिरसे कहने लगे।

धर्म्म बोले, हे राजेन्द्र भारत! तुमने निज बुद्धि और सब प्राणियोंमें ऐसी दया प्रकाश करके कौलीन्य तथा पिताकी समानता प्राप्त की है। हे पुत्र! जलके निमित्त पराक्रम प्रकाश करके तुम्हारे भाइयोंके मरनेपर तुमने परित्याग करके भ...
नकुलको जीवित करने...
पहले उस द्वैतवनमें एक...
की थी। हे नरनाथ!...
तुम्हारे समान कोई नहीं...
मेयको भक्त कहके तुमने...
रथको भी परित्याग करनेके लिये ... हुए
हो। हे भरतश्रेष्ठ! इस ही कारण तुमने स्वश-
रीर ही अक्षयस्वर्गलोक और अनुत्तम दिव्य
गति प्राप्त की।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर इन्द्र, मरुद्गण और ... जिनके ...
कर्म्म पवित्र हैं, वे रजोविहीन पु... देवर्षि और कामविहारी सिद्धगण पाण्डुनन्दनको रथपर चढ़ाके अपने अपने विमानोंमें चढ़कर चलने लगे। कुरुकुलश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर भी उस रथपर चढ़के निज तेजसे पृथ्वी और स्वर्गको परिपूरित करते हुए शीघ्र ही ऊपरको उठने लगे। उस समय सुरपुरमें स्थित सर्व्वलोकवित् बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ बृहत्तपा नारद मुनि ऊंचे स्वरसे यह वचन बोले,— जो सब राजर्षि हैं, वे सभी उपस्थित हैं; परन्तु राजा युधिष्ठिर उन सबकी कीर्त्तिको आच्छादित करके वास कर रहे हैं। मैंने ऐसे किसी राजर्षिकी कथा नहीं सुनी, जिसने निज यश, तेज सच्चरित और सम्पत्तिसे लोकोंको आवृत करते हुए सशरीर ही स्वर्गलोक प्राप्त किया है।

नारद मुनिका वचन सुनके धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर देवताओं तथा अपने पक्षके राजाओंको आमन्त्रण करते हुए बोले,—जिस स्थानमें मेरे भ्रातृवृन्द गये हैं, वह शुभ हो अथवा अशुभ हो होवे, मैं उस ही स्थानमें जानेकी इच्छा करता हूं; दूसरे लोकमें मेरी अभिलाष नहीं है।

धर्म्मराजका वचन सुनकर देवराज पुरन्दर दयालु हृदय युधिष्ठिरसे बोले, हे राजेन्द्र!

शुभकर्म्मोंके सहा

समय उसमें ही

। जो और किसी पुरुषको

मने वैसी परम सिद्धि

आदमीको कोई स्थान

नाथ ! इस समय भी जो

तुम्हें परित्याग नहीं करता है

उसका क्या कारण है? इस स्वर्ग, इन त्रिदिव-

वासी देवर्षियों तथा सिद्धोंको देखो।

धर्म्मराज युधिष्ठिर देवेन्द्रसे ऐसी बात कहते रह-

करता ; इस

मैं उसी स्थान

मेरी वह बुद्धिसत्त्व तथा गु

ङ्गिनी बरवर्णिनी द्रुपदनन्दिनी ग

स्थानमें ही जाऊंगा।

३ अध्याय समाप्त।

महाप्रस्थानिक पर्व्व सम्पूर्ण।

से थे मेरे

उस समय ... पाण्

...न सुनके जिस स्थानमें देवराज
...निवास करते थे, वहां गया। हे जन-
... ! धर्म्मराजने जो किया था, तथा धर्म्मपुत्रने
जो कहा था, उसने वह सब देवराजके निकट
कुछ सुनाया।

...२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे कौरव! पृथानु-न्दनं युधिष्ठिरके मुहूर्त्तभर निवास करनेके अन-न्तर इन्द्रको आगे करके सब देवता उस स्थानमें आये और कुरुराज राजा युधिष्ठिर जिस स्थानमें थ, ...मान् धर्म्म उस राजाको देखनेके लिये वहां समागत हुए। हे महाराज! उन प्रकाशमान शरीर पवित्र जन्मकर्म्मयुक्त देवताओंके वहां समागत होनेसे वह अन्धकार दूर हुआ। वहां उन पापियोंकी वैसी यातना, वैतरणी नदी और कूट शाल्मलि वृक्ष न दीख पड़े। घड़े भयानक लोहेके घड़े और समस्त शिला अदृश्य हुई तथा वहांपर चारों ओर जो सब विकृत शरीर थे, वे भी न दीख पड़े। राजाने देखा, कि वे सब अदृश्य हुए। हे भारत! अनन्तर देवताओंके समीप शीतल पवित्र पुण्यगन्ध-

होता है
राशि है
भोग कर
हैं और जो ...
पश्चात् स्वर्गलाभ कर
कर्म्म करते हैं, वे पहले
हैं, इस ही निमित्त
निमित्त ऐसा कराया है।
छलपूर्व्वक द्रोणकी सन्तान
रक्षा की थी, इस ही लिये
क्रमसे नरक दिखाया है। तुमने
कपटनरक देखा, उस ही प्रकार
नकुल, सहदेव और द्रुपदराजपुत्री ...
छलक्रमसे नरकमें गमन किया था। हे ...
तश्रेष्ठ! तुम्हारे पक्षके जो सब राज...
युद्धमें मरे हैं, देखो वे सभी स्वर्गमें आ...
तुम जिसके निमित्त परिताप करते हो,
शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महाधनुर्द्धर कर्णको
सिद्धि प्राप्त हुई है। हे नरश्रेष्ठ महा...
सूर्यपुत्रको निज स्थानमें देखो। हे पुरु...
शोक परित्याग करो, तुम अपने अन्य...
तथा स्वपक्षके राजाओंकी निज ...
देखो, तुम्हारे ...

रे हुए
स्तीनन्द-
स्पर्श कूट
पीड़ा देखी।
खकर देवदूतसे बोले,
र कितना मार्ग चलना
कहां हैं? वह तुम
रताओंका यह कौनसा
जाननेकी इच्छा करता हूं।
मराजका इतना वचन सुनके
और उनसे बोला, यहांतक ही
ग्य है, इसके अनन्तर निवृत्त
ा है; देवताओंने मुझे ऐसे ही
। हे राजेन्द्र! यदि तुम थके हुए हो,
सकते हो। हे भारत! युधिष्ठिरने
तथा उस गन्धसे मूर्च्छित होकर लौट-
स्थिर किया तथा वहांसे लौटे। उस
ने दुःख शोक सहित निवृत्त होके वहां-
ों ओरसे चिल्लानेवाले मनुष्योंका दीन-
ना! हे धर्म्मज्ञ पुण्यामि नराजक
ाप हम लोगोंके विषयमें अनुग्रहके
र्त्त भर निवास करिये, आपके
ाय ... र तुम्हारे गन्धके

दुःख। ... यह सब
यह न समझ सके, कि वे कौन
धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर वह सब वचन ... सम
नेपर बोले, आप लोग कौन हैं और कि
निमित्त इस स्थानमें निवास करते हैं? वे लोग
ऐसा सुनकर चारों ओरसे कहने लगे। मैं कर्ण
हूं, हे प्रभु! मैं भीमसेन हूं, मैं अर्जुन हूं, मैं
नकुल मैं सहदेव, मैं द्रौपदी और हम लोग
द्रौपदीके पुत्र हैं,—इस ही प्रकार वे लोग
चिल्लाने लगे। हे राजन्! उस समय राजा
युधिष्ठिरने उन लोगोंके अनुरूप वह सब वचन
सुनके विचारा। हाय! दैवने यह क्या किया
है। महात्मा कर्ण तथा द्रौपदी आदिने कौनसा
पापकर्म्म किया था, जो इस पापगन्धसे परिपूर्ण
दारुण स्थानमें निवास करते हैं? मैं इन सब
पुण्यकर्म्म करनेवालोंका कुछ दुष्कृत नहीं
जानता धृतराष्ट्रका पुत्र राजा सुयोधन कौनसा
कर्म्म करके पद्मानुग पापाचारियोंसे सहित वैसा
श्रीसम्पन्न हुआ है और महेन्द्रकी भांति लक्ष्मी-
वान तथा परम पूजित होरहा है? और सर्व्व-
धर्म्मज्ञ, शूर सत्यासम परायण सत्यधर्म्ममें रत,
याज्ञिक तथा बहुतसी दक्षिणादान करके भी
ये लोग इस समय नरक गामी हुए हैं, यह

…ण, धृष्टद्युम्नके पु…

…के अनुसार अस्त्रोंसे मरे … लोग कहां हैं ? उन लोगोंको … हूं। हे नारद ! विराट द्रुपद …केतु प्रभृति तथा पाञ्चालपुत्र शिखण्डी …पदीके पुत्रों और दुर्द्धर्ष अभिमन्युको देखनेकी अभिलाष करता हूं।

१ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे देवगण ! मैं इस स्थानमें अमित तेजस्वी कर्ण, महानुभाव दोनों भाई युधामन्यु और उत्तमौजाको नहीं देखता हूं ? जिन सब महारथ राजा और राजपुत्रोंने मेरे निमित्त युद्धरूपी अग्निमें शरीरकी आहुति प्रदान किया तथा मेरे निमित्त मारे गये हैं, वे सिंहसदृश विक्रमशाली सब महारथ कहां हैं ? उन पुरुषसत्तमोंने क्या इस स्वर्गलोकको जय नहीं किया ? हे देवगण ! यदि उन महारथने इन लोकों… जय किया हो, तो मुझे भी प्रस्तावित महात्माओंके सहित इस स्थानमें स्थित जानिये। क्या राजाओंने इस शुभ लोकमें निवास… नहीं किया ? यदि ऐसा ही हो, तो मैं उन भाइयों तथा स्वजनोंके बिना इस स्थानमें निवास न करूंगा। जलाञ्जलि देनेके

जनकु… प्रवी… स्थानमें … आप लोगोंसे … मगण ! भाइयों… क्या प्रयोजन है। वे… मेरा स्वर्ग है, यह … समान नहीं है।

देवगण बोले, हे तात … स्थानमें तुम्हारी श्रद्धा हो तो … विलम्बका प्रयोजन नहीं है … आज्ञासे हम लोग तुम्हारा …

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, देवताओंने उनसे इतनी बात कहके दे… कहा, "युधिष्ठिरके सुहृदोंको दिखाओ।" हे नृपवर ! अनन्तर कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर जिस स्थानमें वे पुरुषपुङ्गवगण स्थित थे, देवदूतके सङ्ग वहीं हो गये। देवदूत आगे, और राजा पीछे पीछे पापकर्मवाले पुरुषोंसे सेवित … अशुभ पथमें शीघ्र ही जाने लगे। वह मार… अन्धकारसे परिपूरित घोरकेश-शैवल … समन्वित, पापियोंकी गन्धयुक्त, मांस, रु… कीचड़-विशि…

उर्वा
े ? मैं
य कर्म्म·
ात होनेसे
भिमत है।
ुम्हारे पूर्व्व पिता·
त्रिविष्टप स्वर्गलाभ
ै सुनो। धर्म्मराज युधि-
के श्रीसम्पन्न दुर्य्योधनको
की भांति आसनपर वैठे हुए
समय वीर श्रीसे परिपूरित तथा
यों और पुण्यकर्म्मशील पुरु-
ये। अनन्तर युधिष्ठिर दुर्य्यो-
देखकर अमर्षके वशमें होकर तथा
उनकी श्री देखनेसे सहसा सन्निवृत्त हुए; अन-
न्तर ऊंचे स्वरसे उन लोगोंसे बोले, मैं अदीर्घ-
दर्शी लोभी दुर्य्योधनके सङ्ग स्वर्गलोकमें वास
करनेकी कामना नहीं करता। जिसके निमित्त
हम लोगोंने पहले महावनके बीच महाकष्ट
गकर अन्तमें पृथ्वीपरके सब सुहृदों तथा
वोंकी बलपूर्व्वक संग्राममें संहार किया है।
ारिणी पाञ्चालराजपुत्री अनिन्द्याङ्गी द्रौपदी

नारद मुनि उस समय
हुए बोले, हे राजेन्द्र! आप
स्वर्गवासमें विरुद्ध भाव नाश
महाबाहु युधिष्ठिर! इसलिये आप राजा
धनके विषयमें किसी प्रकार ऐसी बात न कहिये
मेरा यह वचन सुनिये। ये जो सब साधु राजा
लोग स्वर्गवासी हुए हैं, वे देवताओंके सहित
राजा दुर्य्योधनकी पूजा किया करते हैं। ये
समरमें अपना शरीर आहुति करके वीर लोकमें
आये हैं, आप सब कोई देवतुल्य हैं, इन्होंने
सदा आप लोगोंकी हिंसा की है। जो भूपति
महाभयसे नहीं डरते थे, उन्होंने ही क्षत्रध-
र्म्मके अनुसार यह स्थान पाया है, हे तात!
द्यूतक्रीड़ाके समय जो हुआ था, उसे मनमें
लाना उचित नहीं है और द्रौपदीको जो सब
क्लेश हुए थे उसकी भी चिन्ता करनी अनुचित
है। संग्राममें अथवा अन्य स्थानमें तुम लोगोंको
स्वजनोंके द्वारा दूसरे जो सब क्लेश हुए थे, उसे
अब स्मरण करना योग्य नहीं है। इस समय
न्यायपूर्व्वक राजा दुर्य्योधनके सङ्ग मिलो। हे
नरनाथ! यह स्वर्गलोक है, इस स्थानमें कुछ
वैर नहीं होता। जब नारदमुनिने कुरुराज
युधिष्ठिरसे इतनी बात कही, तब उस मेधावी